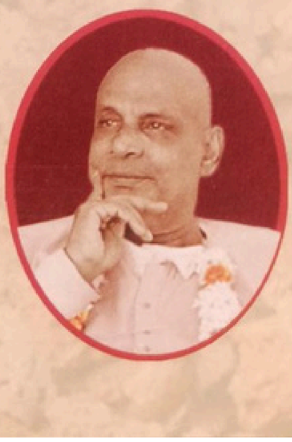


मैं इसका उत्तर दूँ?



श्री स्वामी शिवानन्द

मैं इसका उत्तर दूँ?

MAY I ANSWERTHAT?

का अविकल अनिुाद

लेखक

श्री स्वामी िििानन्द सरस्वती

अनिुावदका

श्री स्वामी िििावश्रतानन्द माता जी

प्रकािक

द िििाइन लाइफ सोसायटी

पत्रालय िििानन्दनगर-२४९१९२

वजला: वटहरी गढ़िाल, उत्तराखण्ड (वहमालय), भारत

www.sivanandaonline.org, www.dlshq.org

प्रथम वहन्दी संस्करण : २०२०

(१,०००प्रवतयाँ)

ISBN 81-7052-259-5

HS20

PRICE:130/-

'द िविाइन लाइफ सोसायटी, िविानन्दनगर' के वलए स्वामी पद्मनाभानन्द द्वारा
प्रकाववत तथा उन्ीं ◌ंके द्वारा 'योगि◌ेदान्त फारेस्ट एकिोमी प्रे्स ,
पत्रालय : िविानन्दनगर, वजला वटहरी गढ़िाल, उत्तराखण्ड,
वपन : २४९१९२' में मुवित।
For online orders and Catalogue visit: dlsbooks.org

प्रकािकीय

यह पुस्तक परम पिान गुरुदि श्री स्वामी ििानन्द जी महाराज की विवभन्न प्रकावित रचनाओं ंमें से संकवलत की गयी है, वजसमें उनकी तीस के दिक के अन्तन्तम भाग की कवतपय प्रारन्तिक कृवतयाूँ भी सन्तिवलत की गयी हैं।

पुस्तक में वलये गये प्रश्ों ंएिं उत्तरों ंकी शंखला में कुछ अत्यविक सामान्य प्रतीत होने पर भी, आध्यान्तिक सािना का अभ्यास करने िाले वजज्ञासुओं ंद्वारा की जाने िाली िंकाओं ंका अत्यन्त सित्त समािान प्रसुतुत करने िाले हैं। इन उत्तरों ंएिं स्पष्टीकरणों ंको जो अनमोल प्रवतष्ठा प्रदान करता है, िह इसकी प्रामावणकता का होना है, जो केिल एक सन्त के अन्तबोि ही नहीं,ं अवपतु वनजी अनुभि की भी उपज हैं।

स्वामी ििानन्द ऐसे सन्त थे वजनकी सिवप्रथम रुवच, अवपतु हम तो कहेंगे, सिवप्रथम पे्रम था आध्यान्तिक सािकों ंसे, योग-विद्यावथवयों ंसे। ििानन्द जी का जीिन ही उनकी सेिा हेतु था, और यह अनमोल ग्रन्थ उन महान् गुरुदेि के सेिा भाि का ही पररणाम है।

हम आिा करते हैं वक सािक जगत् प्रते्येक पृष्ठ के ध्यानप िवक पठन के साथ यथेष्ठ रूप से लाभान्तित होगा और सािक-जन अपनी आध्यान्तिक पररप णवता के संघर्व में असािारण मागवदिवन एिं पे्ररणा प्राप्त करेंगे।

सद्गुरुदेि के वदव्य आिीिावद सभी पर हों!ं

ििानन्दनगर **-द डिवाइन लाइफ सोसायटी**

१

हमें भगवान् में डवश्वास क्ो ंकरना चाडहए?

क्ोंवक भगिान् प्रते्येक मानि के वलए वनतान्त आिश्यक हैं। यह सबके वलए एक अवनिायव अथिा परम आिश्यकता हैं। अविद्या या अज्ञान के कारण दुःख सुख की तरह प्रतीत होता है। िास्ति में तो यह संसार दुःखों,ं कष्टों,ं कवठनाइयों ंऔर मुसीबतों ंसे भरा हुआ है। संसार एक आग का गोला है। राग, दे्वर्, क्रोि और ईर्षाव से भरा हुआ अन्तःकरण जलती हुई भट्ठी के समान है। हमने स्वयं को जन्म, मरण, िृद्धािस्था, रोग और दुःख से छुटकारा

वदलाना है। यह किेल भगिान् में विश्वास करने से ही हो सकता है। इसके अवतररक्त और कोई मागव नहीं ंहै। िन-सम्पवत्त और पद या िन्तक्त हमें िास्तविक सुख नहीं ंदे सकते। चाहे हमें सारे संसार का अविराज्य प्राप्त हो जाये, तो भी हम वचन्ता, तनिा, भय, वनरािा इत्यावद से मुक्त नहीं ंहो सकते। यह तो किेल भगिान् में विश्वास करने तथा उसके पररणाम स्वरूप ध्यान के द्वारा भगिद्-साक्षात्कार करने से ही हमें सच्ची और सदा रहने िाली प्रसन्नता वमल सकती है और हम सर्ब प्रकार के भय एिं वचन्ता से तथा हर क्षण की यातना से छट सकते हैं। भगिान् में विश्वास हमें हर समय उनका स्मरण करने को प्ेररत करेगा, उनका ध्यान करने की प्ेरणा देगा और इसी के
माध्यम से हम भगिद्-साक्षात्कार की ओर अग्रसर होंगें।

२

ईश्वर के अस्तित्व को न मानने से क्ा हाडन है?

यवद हम ईश्वर के होने में विश्वास नहीं ंकरते, तो हमें इस संसार में वफर से जन्म लेना पडेगा और वफर से कष्ट सहने पडेंगे। अज्ञानी अविश्वासी संियाा विनाि को प्राप्त होते हैं। उन्ें जरा से भी सुख की प्रान्तप्त नहीं ंहो सकती। संियाा के वलए न तो इस संसार में सुख है न ही इससे परे द सरे लोकों ंमें है। वजन्ें भगिान् में विश्वास नहीं ंहै, उन्ें यह ज्ञान ही नहीं ंहै वक क्ा ठीक है और क्ा गलत। उनकी वििेक-िन्तक्त नष्ट हो चुकी है। िे असत्यिादी, अवभमानी एिं अहंकारी हैं। िे अत्यविक लोभी, क्रोिी और कामी हो जाते हैं। िे अनुवचत सािनों ंसे
िन अवजवत करते हैं। उनकी िृवत्त राक्षसी हो जाती है। िे अनेकों ंप्रकार के वघनौने अपराि करते हैं। उनके जीिन के कोई आदिव नहीं ंहोते। िे आसुरी योवनयों ंमें वगरा वदये जाते हैं। िे जन्म-जन्मान्तरों ंतक वनम्न से वनम्नतम योवनयों ं
में भटकते रहते हैं।
लगभग िेढ़ सौ िर्व पहले, दवक्षण भारत के वतरुवचरापल्ली वजले के करूर के वनकट नेरूर नगर में सदाििि ब्रह्ेन्द्र नाम के एक सुप्रवसद्ध योगी-ज्ञानी रहते थे। िह 'ब्रह्मस त्रिवत्त' तथा 'आिविद्याविलास' एिं र्बहुत से अन्य ग्रन्थों ंके रचवयता हैं। एक र्बार जर्ब िे काििेरी नदी के तट पर समावि में लीन थे तो र्बाढ़ आ गयी और उन्ें र्बहा कर कहीं ंऔर ही फेंक गयी। िे र्बहुत गहरे रेत के ढेर में दर्ब गये। मजद र खेत में हल चलाने के वलए चले गये। उनके हल की चोट योगी के विर में लगी और रक्त र्बह वनकला। उन्ोंने खुदाई की और यह देख आश्चयवचवकत रह गये वक एक योगी समाविस्थ र्बैठे हुए हैं।

एक अन्य समय पर सदाििि ब्रह्ेमेन्द्र अििूत िेि में मुसवलमों ंके एक सरदार के जनानखाने में नग्नािस्था में प्रविष्ट हो गये। सरदार उन सन्त पर अत्यविक क्रोवित हो उठा। क्रोि में आग-र्बर्ब ला हो कर उसने महािा की एक भुजा काट िाली। सदाििि ब्रह्ेमेन्द्र एक िब्द भी र्बोले वर्बना तथा कष्ट का कोई भी भाि चेहरे पर लाये वर्बना चुपचाप चल वदये। सन्त की अद्भुत न्तस्थवत देख कर सरदार आश्चयवचवकत रह गया। िह समझ गया वक यह व्यन्तक्त वनवश्चत रूप से कोई महािा, कोई महामानि है। उसे अत्यन्त पश्चात्ताप हुआ और िह सन्त से क्षमा माँगने के वलए उसके पीछे-पीछे चल पडा। सदाििि को पता ही नहीं ंचला था वक उसकी भुजा काट दी गयी है। जर्ब सरदार ने विविर में घटने िाला सारा िृत्तान्त सुनाया तो सदाििि ने उसे क्षमा करते हुए अत्यन्त सहज भाि से अपनी कटी हुई भुजा िाले कन्धे को स्पिव वकया। सदाििि ब्रह्ेमेन्द्र के छ ते ही िहाँ नयी भुजा आ चुकी थी। इस सन्त के जीिन ने मेरे मन पर र्बहुत ही गहरा प्रभाि िाला। मैं इस वनवश्चत पररणाम पर पहुँच गया वक इन िस्तु-पदाथों से अलग, इस मन और इन्तन्द्रयों ंसे परे एक स्वतन्त्र एिं उदात्त वदव्य जीिन है। सन्त इस संसार से प णवतया अनवभज्ञ था। उनकी भुजा जर्ब काटी गयी, तर्ब उन्ें वंकंवचत् भी ज्ञात नहीं ंहुआ। िह उस समय वदव्य चेतना में लीन रहे होंगें, िह उस समय परम तत्त्व से एक होंगें। सामान्य लोग सुई की चुभन से कराह उठते हैं। जर्ब मैंने आप्त व्यन्तक्तयों ंसे सन्त सदाििि के जीिन का यह अद्भुत िृत्तान्त सुना और जर्ब पुस्तक में पढ़ा तो मेरी यह

ारिणा अत्यन्त दृढ़ हो गयी वक एक वदव्य सत्ता है और एक ऐसा ि◌ाश्वत जिीन है जहाँ समस्त दुःख समाप्त हो जाते हैं, जहाँ सभी इच्छाएँ सनूतृप्त हो जाती 35/6 और व्यन्तक्त परम आनन्द, परम ि◌ान्तन्त तथा परम ज्ञान प्राप्त कर लेता है।

३

ब्राह्ममुहूर्त का अर्त क्ा है ? हमारे ऋडियो ◌ोंने इसकी इर्नी प्रशोंसा क्ो ◌ोंकी है?

प्रातुः ४ र्बजे के समय को ब्राह्ममुहूतव कहते हैं। क्ोंवंक भगिान् या ब्रह्म पर ध्यान करने के वलए यह समय अनुकल है, इसवलए इसे ब्राह्ममुहूतव कहा गया है। इस समय मन िविर् रूप से अत्यन्त ि◌ान्त एिं अविकुषुब्ध अथिा वनमवल होता है। यह सांसाररक विचारों,◌ं वचन्ताओं ◌ंऔर तनािों ◌ंसे मुक्त होता है। इस समय हमारा मन कोरी चादर अथिा कोरे कागज की तरह होता है और अभी लौवकक संस्कारों ◌ंसे अपेक्षाकृत मुक्त होता है। सांसाररक विकर्वणों ◌ंके िप्रिे होने से पहले मन को सरलता से मोड कर अनुकल साँचे में ढाला जा सकता है। इसके अवतररक्त इस समय ि◌ातािरण में अविक सत्त्वगुण की प्रिानता होती है। र्बाह्य जगत् की चहल-पहल और ि◌ोरगुल ने अभी ि◌ातािरण को प्रभावित नहीं ◌ंवकया होता।

४

डहमालय के गुरुओ ◌ोंके सम्बन्ध में आपके क्ा डवचार हैं?

समस्त गुरुओं ◌ंका एक गुरु है, जो आपके हृदय में वनिास करता है। अपनी दृवष्ट को अन्तमुवखी करें, इन्तन्द्रयों ◌ंको र्बाह्य ि◌सुतु-पदाथों की ओर जाने से रोकें और अपने अन्तिावसी की सहायता माँगें। उसी में न्तस्थर हो जायें। स्वयं की उनके साथ पहचान र्बनायें। वहमालय के इन गुरुओं ◌ंके सम्बन्ध में पुनुः मुझसे चचाव न करें। आप भ्रवमत हो जायेंगे।

५

जप और ध्यान में क्ा अन्तर है?

भगिान् के नाम को मौन रहते हुए वनरन्तर दोहराने को जप कहते हैं। भगिान् के एक ही विचार के सतत प्रिाह का नाम ध्यान है। जर्ब आप 'ॐ नमो नारायणाय' मन्त्र को दोहराते जाते हैं, तो यह विषुणु-मन्त्र का जप कहलाता है। जर्ब आप विषुणु भगिान् का हाथों ◌ंमें ि◌ंख, चक्र, गदा और पद्म ि◌ारण वकये हुए स्वरूप का वचन्तन करते हैं, उनके कानों ◌ंमें कुण्डल, ि◌िी पर मुकुट, रेिमी पीताम्बर इत्यावद ि◌ारण वकये हुए का वचन्तन करते हैं तो यह ध्यान है। जर्ब आप भगिान् के गुणों,◌ं जैसे सिविन्तक्तमत्ता, सिवव्यापकता इत्यावद का वचन्तन करते हैं तो यह भी ध्यान है।

६

भगवान् की कृपा से मेरे डलए सब कुछ हो जायेगा, डफर मुझे साधना करने की क्ा आवश्यकर्ा है ?

यह ारणा गलत है। भगिान् उनकी सहायता करते हैं, जो अपनी सहायता स्वयं करते हैं। भगिान् की कृपा-्िृवष्ट किल उन पर ही होगी जो पररश्रम करते हैं। भगिान् की कृपा की िर्ाव व्यन्तक्त के समपवण के अनुपात में होती है। वजतना अविक आपका समपवण होगा, उतनी ही अविक उनकी कृपा आप पर होगी, भगिान् आपके वलए आि-समपवण करेंगे, आप यह अपेक्षा नहीं ंकर सकते। उठें और पररश्रम में जुट जायें। संघर्व करें! लगे रहें! दृढ़ रहें! भगिान् आप पर अपनी कृपा की िर्ाव करेंगे।

मीरा ने सर्ब-कुछ त्याग वदया था। उसने राज्य, पवत, सगे-सम्बन्धी, वमत्र-सखा और िन-दौलत-सर्बका पररत्याग कर वदया था। िह वदन-रात अपने प्रभु श्री कृष्ण का स्मरण करती रहती थी। उसने प्ेरेमाशुरु र्बहाये। उसने खाना-पीना छोड वदया। उसकी देह स ख कर काँटा हो गयी। वकनुतु उसका मन सदा भगिान् कृष्ण के ध्यान में लीन रहता था। किल तभी भगिान् ने उस पर अपनी कृपा की िर्ाव की।

७

क्ा आप मुझे आत्मा के अस्तित्व के सम्बन्ध में कोई अत्यन्त सरल डकनुतु ठोस प्रमाण दे सकरे् हैं?

आप आये वदन 'मेरा िरीर', 'मेरे प्राण', 'मेरा मन', 'मेरी इन्तन्द्रयाँ' कहते हैं। यह स्पष्ट र्बताता है वक आि रीर, मन, प्राण और इन्तन्द्रयों ंसे पणवतया वभन्न है। यह मन और िरीर आपके सेिक अथिा उपकरण हैं। यह आपसे उतने ही अलग हैं वजतना वक यह तौवलये, कुवसवयाँ और प्याले इत्यावद हैं। आप अपने िरीर को इसी तरह से िारण वकये हुए हैं, जैसे वक हाथ में यह छडी। आप अपने इस िरीर के मावलक हैं। यह िरीर आपकी सम्पवत्त है। यह देह, मन, इन्तन्द्रयाँ इत्यावद आि नहीं ंहैं, वकनुतु उससे सम्बन्तन्धत हैं।

८

यडद भगवान् इस्तियो ोंकी पहुँच से परे है, र्ो वह एक अस्तित्वहीन, एक शून्य मात्र, एक नकारात्मक धारणा और एक दुबोध कल्पना ही होनी चाडहए। इस्तियो ोंकी पहुँच से परे ? यह कैसे हो सकर्ा है? मैं ऐसी बार्ो ोंमें डवश्वास नही ोंकर सकर्ा। मैं वैज्ञाडनक हूँ। मुझे सही-सही लेबोरेटरी प्रमाण चाडहए।

आप लेर्बोरेटरी के प्रमाण चाहते हैं? र्बहुत र्बवढ़या ! आप उस असीम सिवव्यापक परमाि को अपनी परखनली, िौंकनी और रासायवनकों ंमें सीवमत करना चाहते हैं! भगिान् आपके रसायनों ंका उद्गम हैं। िह आपके एटम, इलेक्ट्रोन और मॉवलक्ल-सभी का आिार हैं। उनके वर्बना कोई एटम या इलेक्ट्रोन वहल भी नहीं ंसकेगा। िह अन्तयावमी हैं। िह वनयन्ता हैं। उनके वर्बना अवग्न जल नहीं ंसकती, सयव चमक नहीं ंसकता, िायु चल नहीं ंसकती। उनके वर्बना आप देख नहीं ंसकते, र्बोल नहीं ंसकते, सुन नहीं ंसकते और सोच भी नहीं ंसकते। िह सभी
िैज्ञावनक वसद्धान्तों, ंगुरुत्वाकर्वण का वसद्धान्त, संसन्तक्त (कोवहजन) का वसद्धान्त, आकर्वण और विकर्वण का वसद्धान्त इत्यावद सभी वसद्धान्तों ंको प्रदान करने िाले हैं। उनके आगे श्रद्धा और भन्तक्त से नतमस्तक हों। ंउनकी कृपा से आपको समस्त विज्ञानों ंके विज्ञान, ब्रह्मविद्या का सम्पणव ज्ञान प्राप्त हो जायेगा तथा मोक्ष-प्रान्तप्त हो जायेगी।

९

आजकल साधक ईश्वर-साक्षात्कार प्राप्त करने में असफल क्ो ोंरह जार्े हैं?

विकास की वकसी भी एक न्तस्थवत-र्विर् पर पहुँचते ही िह अपनी िन्तक्तयों ंको प्रिचन देने में, विर्ष् र्बनाने में, पुस्तकें छपिाने में गँिाने लग जाते हैं। िह नाम-यि के दास र्बन जाते हैं। यही कारण है वक िह जीिन के परम लक्ष्य-ईश्वर-साक्षात्कार को प्राप्त करने से िंवचत रह जाते हैं।

१०

कुण्डडलनी कैसे जागृर् की जा सकर्ी है? क्ा केवल जप के द्वारा इसे जागृर् डकया जा सकर्ा है?

आसन, प्राणायाम, मुिाओं ंऔर जप के अभ्यास से तथा गुरु की कृपा से कुण्डवलनी जागृत की जा सकती है। मेरी पुस्तक 'कुण्डवलनीयोग' देखें।

हाँ, अकेला जप इसे जागृत करने के वलए पयावप्त है, इसमें कोई सन्देह नहीं ंहै। श्री समथव रामदास जी ने नावसक के वनकट, ताकवल गाँि में, गोदािरी नदी में खडे हो कर 'ॐ श्री राम जय राम, जय जय राम' मन्त्र का तीस करोड र्बार जप करके कुण्डवलनी जागृत कर ली थी।

११

मन के र्ीन दोि क्ा है? कृपया मुझे ठोस एवों डनदडर् उदाहरण दीडजए।

यह हैं काम, क्रोि और लोभ इत्यावद मन की मवलनताएँ तथा विक्षेप, अथावत् मन की चंचलता एिं आिरण, अथावत् अज्ञान का परदा।

एक कीचड से भरी हुई झील है और उसके ऊपर काई जमी हुई है। प्रचण्ड िायु तीव्र िेग से चल रही है। अर्ब, यह झील मन है। कीचड से भरे होना मल का द्योतक है। िायु के िेग से जल में होने िाली हलचल प्राणों ंकी गवत से होने िाले मन के विक्षेप को सवचत करती है। पानी के ऊपर जमी हुई काई अज्ञान के आिरण को दिावती है।

१२

मन को सूक्ष्म और पडवत्र कैसे डकया जा सकर्ा है ?

जप करें। वनष्काम सेिा करें। मन की गहराई से भगिान् से प्राथवना करें। सत्संग करें। ध्यान करें। गीता और उपवनर्दों ंका स्वाध्याय करें। अकेले रहें। छह महीनों ंके वलए सान्तत्त्वक भोजन करें। मांस, मछली, अण्डे, मद्यपान, वमचव, तेल, चीनी, प्याज और लहसुन का पररत्याग कर दें।

१३

भस्ति और ज्ञान में क्ा अन्तर है?

भन्तक्त समपवण है। ज्ञान की प्रान्तप्त का जो लक्ष्य है, उसका सािन भन्तक्त है। भािना-प्रिान स्वभाि िाले लोगों के वलए यह उपयुक्त मागव है। इसमें आत्म-समपवण अथिा आत्म-वनिेदन की आिश्यकता है। यह माजावरीयोग है। वर्बल्ली का र्बच्चा जोर से रोता है और उसकी माँ तुरन्त दौड कर आती है तथा वर्बलौटे को मुख में पकड कर उठा लेती है। इसी प्रकार भक्त िौपदी और गजेन्द्र की तरह जोर से रोता है तथा भगिान् कृष्ण तुरन्त उसकी रक्षा के वलए एिं कृपाि्-िृवष्ट करने के वलए दौडे आते हैं। भन्तक्त-मागव में केिल सच्ची गहन श्रद्धा, पक्की आस्था तथा सुदृढ़ िारणा की आिश्यकता है, जैसे प्रह्लाद को थी। इसमें पढ़ाई-वलखाई आिश्यक नहीं है। तुकाराम जैसे लोग, जो अपने नाम के हस्ताक्षर तक करना नहीं जानते थे, ने ईश्वर-साक्षात्कार प्राप्त कर वलया था। इसके वलए विस्तृत ज्ञान अथिा अध्ययन नहीं चावहए। भक्त वमठाई खाना चाहता है। िह तो केिल अपने प्रभु का सावन्नध्य चाहता है।

ज्ञान आत्म-विस्तारण का योग है। इसमें आत्म वनभवरता की आिश्यकता है। केिल र्बुन्तद्ध-प्रिान स्वभाि िाले लोग, जो विचार-शन्तक्त, वििेक-शन्तक्त तथा तकव-शन्तक्त से सम्पन्न हों, ज्ञान-मागव के वलए उपयुक्त हैं। यह मकवटयोग है। र्बन्दर का र्बच्चा रोता नहीं, वकन्तु उसकी माँ कहीं भी भागती रहे, िह स्वयं ही उसके शरीर के साथ जोर से वचपटा रहता है। इस योग में िेदान्त-सावहत्य का विस्तृत अध्ययन, तीक्ष्ण र्बुन्तद्ध, वनभीक समझ तथा भीमकाय संकल्प एिं साहस होना चावहए। ज्ञानी, वमठाई खाने के स्थान पर स्वयं साकार वमठाई ही हो जाना चाहता है। िह ब्रह्म के साथ एक हो जाना चाहता है।

१४

क्ा ज्ञान और भस्ति एक-दूसरे के डवरोधी हैं?

मेरा उत्तर है- 'नहीं! वर्बलकुल नहीं!' िास्ति में इन दोनों में परस्पर नाता है, दोनों एक-द सरे के प रक हैं। भन्तक्त ज्ञान का वकंवचत् भी विरोि नहीं करती। वनःसन्देह ये दोनों एक-दसरे पर वनभवर करते हैं। दोनों एक ही लक्ष्य की ओर ले कर जाते हैं। आप भन्तक्त को ज्ञान से पणवतया अलग नहीं कर सकते। जर्ब भन्तक्त पररपक्व हो जाती है तो यह ज्ञान में रूपान्तररत हो जाती है। एक िास्तविक ज्ञानी भगिान् हरर का भक्त है, भगिान् कृष्ण का भक्त है; भगिान् राम का, भगिान् शिि का, माँ दुगाव, सरस्वती और लक्ष्मी का, ईसा मसीह तथा र्बुद्ध भगिान् का भक्त है। िह समरस भक्त होता है। कुछ अज्ञानी लोग सोचते. हैं वक ज्ञानी शुष्क होता है तथा उसमें भन्तक्त वर्बलकुल नहीं होती। यह र्बहुत ही दुःखद गलती है। ज्ञानी का हृदय तो अत्यविक विशाल होता है। श्री शंकराचायव की भन्तक्तमय कृवतयों को पढ़ कर देखें और उनकी भन्तक्त की गहराई का अनुमान लगायें। जरा अप्पय्य दीवक्षतार की रचनाओं को पढ़ें और उनकी असीम भन्तक्त की अवमत गहराइयों की थाह लेने का प्रयास करें।

स्वामी रामतीथव एक ज्ञानी थे। क्ा िह भगिान् श्री कृष्ण के भक्त नहीं थे? यवद कोई िेदान्ती भन्तक्त का र्बवहष्कार कर देता है, तो याद रखें, उसने िास्ति में िेदान्त को ठीक से समझा और ग्रहण ही नहीं वकया है। एक ही वनगुवण ब्रह्म, थोडी-सी माया के सवहत सगुण ब्रह्म के रूप में अपने भक्तों की पूजा ग्रहण करने के वलए अितररत हो जाता है।

भन्तक्त ज्ञान से विलग नहीं है। इसके विपरीत ज्ञान भन्तक्त को प्रगाढ़ करता है। वजस व्यन्तक्त को िेदान्त का ज्ञान है, िह अपनी भन्तक्त में भली-भाँवत न्तस्थत रहता है। िह सुन्तस्थर एिं सुदृढ़ हो जाता है। कई अज्ञानी लोग कहते हैं वक यवद कोई भक्त िेदान्त पढ़ लेगा, तो उसकी भन्तक्त चली जायेगी। यह पणवतया गलत है। िेदान्त का अध्ययन

तो भन्तक्त को र्बढ़ाने और विकवसत करने में सहायक है। िेदान्त-सावहत्य में प्रिीण व्यन्तक्त की भन्तक्त भली-भाँवत सुन्तस्थर हो जाती है। िास्ति में भन्तक्त और ज्ञान एक पक्षी के दो पंखों ंकी भाँवत हैं, जो व्यन्तक्त को ब्रह्म की ओर उडान भरने में, मुन्तक्त की पराकाष्ठा तक पहुँचाने में सहायता करते हैं।

१५

क्ा रार् को भोजन करने के बाद ध्यान के डलए बैठना उडचर् है? सायोंकाल के समय र्क गृहस्र् व्यस्ति इर्ना परेशान हो चुका होर्ा है डक उसे ध्यान के डलए समय डनकाल सकना ही बहर् कडठन होर्ा है।

सामान्यतया राजसी भोजन करने के र्बाद लोग वनिालुता अनुभि करते हैं। आप कल्पना करते रहेंगे वक आप ध्यान में र्बैठे हैं, वकन्तु यह र्बैठी मुिा में प णवतया विंा भी हो सकती है। यवद आप वमताहार के वनयम का अनुसरण करते हैं और सायं ७ र्बजे से पहले भोजन कर लेते हैं तो आप ९ से १० र्बजे तक ध्यान के वलए र्बैठ सकते हैं।

रावत्र के समय ध्यान, अथावत् वदन में द सरी र्बार ध्यान के वलए र्बैठना वनवश्चत रूप से अत्यन्त आिश्यक है। यवद आपके पास रात को ध्यान के वलए पयावप्त समय नहीं ंवमल पाता तो आप सोने से पहले कुछ वमनट, अथावत् १० से १५ वमनट के वलए ध्यान करने के वलए र्बैठ जायें। इस प्रकार करने से आध्यान्तिक संस्कार विकवसत होंगें। यह आध्यान्तिक संस्कार आपके वलए र्बहुम ल्य वनवि हैं। इसके साथ-साथ आपको र्बुरे सपने नहीं ंआयेंगे। वदव्य विचार वनिािस्था में भी चलते रहेंगे। इनका आपके ऊपर अच्छा प्रभाि पडेगा।

१६

ब्रह्मचयत का पालन करने में मुझे कडठनाई आ रही है। अचानक ही मैं मूर्तर्ावश गड्ढे में डगर जार्ा हूँ। भीर्र से मैं विाव में दुर्ी हूँ, डकन्तु पशु की भाँडर् उसी काम में फँस जार्ा हूँ। क्ा करूँ ?

व्रत रखें। वकसी एक ही मन्त्र का वनत्य तीन घण्टे सतत जप करें। श्रीमद्भगिद्गीता का एक अध्याय प्रवतवदन पढ़ें। अलग कमरे में सोयें। अपने मन को हर समय परी तरह व्यस्त रखें। मन को दसरी ओर मोड दें।
मन को उदात्त एिं भले विचारों ंसे भर दें। सत्संग करें। थोडे से िैिक सवहत, सुखपिवक २० प्राणायाम करें। शारीररक श्रम भी पयावप्त मात्रा में करें। वचन्तन करें वक आिा में न तो काम है, न ही काम िासना ।

१७

मैं र्बहुत गम्भीरता से ऐसे गुरु की खोज में हूँ, जो सुवनवश्चतता से कह सके वक उसने ब्रह्म-साक्षात्कार अथिा भगिद्-दिवन प्राप्त कर वलया है। क्ा आप मुझे कोई ऐसा व्यन्तक्त र्बता सकते हैं? मैं आपसे यह पछने की िृष्टता कर सकता हूँ वक क्ा आपने ब्रह्म-साक्षात्कार कर वलया है ?

जो प्रश् आपने पछे हैं, यह आध्यान्तिक पथ पर चलने िाले सभी सच्चे सािकों ंके मन में आने स्वाभाविक हैं। कल्पना कीवजए वक मैं आपसे कह दूँ वक अमुक व्यन्तक्त ब्रह्म-साक्षात्कार प्राप्त वकये हुए है, तो आप मेरे कथन को सत्य-प्रमावणत कैसे करेंगे और इससे आपको लाभ भी क्ा होगा ?

साक्षात्कार-प्राप्त आिाओं ंका अभाि नहीं ंहै। सामान्य अज्ञानी व्यन्तक्त सरलता से उन्ें पहचान नहीं ं सकता। वकन्तु कुछेक लोग, जो वििुद्ध हृदय के हैं तथा समस्त सद्गुणों ंसे सम्पन्न हैं,उन्हें समझ सकते हैं, िे ही उनके सावन्नध्य से लाभान्तित हो सकते हैं।

साक्षात्कार-प्राप्त आिाओं ंकी खोज में इिर-उिर दौड-भाग करने का कोई लाभ नहीं ंहै। भले ही कृष्ण भगिान् भी आपके साथ रहें, िे भी आपके वलए कुछ नहीं ंकर सकते, जर्ब तक आप उन्ें ग्रहण करने योग्य नहीं ं र्बनते। इस वर्बन्दु को समझें और स्वयं को वनष्काम कमवयोग, दान, िारणा, जप, ब्रह्मचयव तथा इन्तन्द्रय-संयम द्वारा िुन्द्धि करें।

गुरु की परीक्षा करना अत्यन्त कवठन है। यहाँ अपनी र्बुन्तद्ध का प्रयोग न करें। विश्वास रखें। सच्चा वजज्ञासु इन प्रश्ों ंऔर िंकाओं ंसे मुक्त है। यवद आप मेरे कथन पर विश्वास करेंगे, तो आप अद्भुत रूप से लाभान्तित होंगें।

१८

क्ा गुरु के वलए अपने विष्ों ंको महान् र्बनाना र्बहुत कवठन है ?

इस प्रश् से यह आभास होता है वक गुरु को अपने विष्ों ंसे अन्य सर्बकी अपेक्षा अविक लगाि होता है। यवद ऐसा है, तो िह आध्यान्तिक गुरु नहीं ंहै, क्ोंवक आध्यान्तिक व्यन्तक्त की प्रथम योग्यता, आसन्तक्त पर विजय प्राप्त होना है। िास्तविकता यह है वक सहस्ों ंमें से कोई एक-दो विरले ही इस योग्यता को प्राप्त कर पाते हैं और केिल िे ही व्यन्तक्त महान् हैं, महामानि हैं। ऐसे प्रत्येक व्यन्तक्त को ऐसे लोग चारों ंओर से घेरे रहते हैं, जो उसके अन्तरवनवहत आकर्वण से प्रभावित होते हैं। वकन्तु जो लोग उन्ें घेरे रहते हैं, उनमें गुरु होने की योग्यता नहीं ंहोती। िे तो सामान्य लोग ही होते हैं।

१९

एक असामान्य मवहला ने दस िर्ों तक वनरन्तर कठोर योगानुशासन में रहते हुए एक महानतम योगगुरु के पास अध्ययन वकया और अन्ततः वह इस नतीजे पर पहुँची वक यह सब-कुछ भ्रम है, मृगतृष्णा है।

आपने उस मवहला के सम्बन्ध में जो कुछ कहा, उससे ज्ञात हो जाता है वक उसमें िह योग्यता नहीं ंथी वक वकसी से लाभान्तित हो सके, भले ही िह व्यन्तक्त भगिान् र्बुद्ध जैसी आध्यान्तिक उन्नवत तक पहुँचा हुआ क्ों ंन हो। आध्यान्तिक विकास के वलए एक िस्तु, जो र्बहुत आिश्यक है, िह है-अध्यिसाय अथिा दृढ़ता। िह स्वयं को तरह-तरह की कृवतयों ंसे भरती जा रही थी और सभी उसे अलग-अलग रास्ते र्बतलाने िाली थीं। यवद कोई व्यन्तक्त कुआँ खोदना चाहता है तो उसे एक ही स्थान पर वनरन्तर खुदाई करनी पडेगी, जर्ब तक वक िह पानी तक नहीं ंपहुँच जाता है। यवद िह सौ स्थानों ंपर खुदाई करे और हरेक गड्ढा पाँच फुट से कम गहरा खोदे वर्बना ही छोड दे, तो िह कभी कुआँ नहीं ंखोद पायेगा। उस मवहला की यही न्तस्थवत थी। उसकी िारणा को क्ा महत्त्व वदया जा सकता है?

२०

ी्र्तयात्रा को इर्ना पावन क्ो ोंमाना जार्ा है, पयतटन अर्वा कायातलय सम्बन्धी यात्रा को क्ो ोंनही?ों

क्ोंवंक, 'तीथवयात्रा पर जाना है', यह विचार आते ही आपका मन आपको एक अलग ही उच्चतर एिं भन्तक्तपणव भिा में ले जाता है। मन के सांसाररक घुमिा र्बन्द होने लगते हैं। जर्ब आप अपने िहर को छोड कर वनकलते हैं, तो आप अपने सामावजक जीन के र्बोवझल िाोरण को वनकाल फेंकते हैं। आप भले ही अपने पररार के सदस्ों ंके साथ यात्रा पर वनकले हों, ं िीरे-िीरे आपको लगने लग जाता है वक िे सर्ब आपके सगे-सम्बन्धी इतने नहीं ंहैं, वजतने वक सह तीथवयात्री हैं। और यवद आप अकेले हैं, तो आप िसितया पाररिाररक वचन्ता एिं तनाि से मुक्त तथा प री तरह से आध्यान्तिक जगत् में रहते हैं। यह एक ऐसी मानवसक न्तस्थवत है, जो उत्तराखण्ड जैसे पािन क्षेत्रों ंके चतुवदवक् व्याप्त आध्यान्तिक तरंगों ंको ग्रहण करने के वलए पणवतया अनुकल है। जो व्यन्तक्त तीथवयात्री होने के भाि से तीथवस्थान पर जाता है, िह इस र्बात के प्रवत जागरूक होता है वक िह आध्यान्तिक अनुभि-प्रान्तप्त के पािन लक्ष्य को ले कर वनकला है, इसवलए उसे इस यात्रा से महान् लाभ प्राप्त होगा और जर्ब िह यात्रा से लौटेगा तो िह प णवतया पररिवतवत व्यन्तक्त होगा।

२१

ी्र्तयात्रा से लोग कैसे लाभास्तिर् होरे् हैं?

इस प्रश्न का उत्तर तो प्रत्येक तीथवयात्री को अपने र्बारे में स्वयं ही र्बताना होगा। आध्यान्तिक लाभ सदैि हृदय के विश्वास पर वनभवर करता है। विश्वास मनुष्य की आिा का प्राण है। इसके वर्बना कोई भी आध्यान्तिक सािना सफल नहीं ंहो सकती। और इसके साथ, कोई भी आध्यान्तिक प्रान्तप्त असिि नहीं ंहै। यवद तीथवयात्री को मन में विश्वास हो, उसकी िारणा दृढ़ हो और वनश्चय पक्का हो वक उसके समस्त पाप िुल जायेंगे, वक उसे मोक्ष प्रान्तप्त हो जायेगी तथा िह संसार-चक्र से वनकल जायेगा, तो वफर ऐसा वर्बलकुल भी कोई कारण नहीं ंहै वक यह सत्य वसद्ध न हो। र्बिी केदार जैसी तीथवयात्रा आपके समस्त पापों ंको िो देती है तथा आपको इस योग्य र्बना देती है वक आप जीन के परम लक्ष्य-ईश्वर-साक्षात्कार (यवद इसकी मवहमा में वनष्ठा है, तो) की ओर अग्रसर होने लगें। वकन्तु याद रखें, आपके इस विश्वास का परीक्षण यह है वक जर्ब आप यात्रा से लौटते हैं, तर्ब कैसे हैं; यवद यात्रा से लौटने पर आप यह वसद्ध कर देते हैं वक आपने अपने समस्त पाप पणवतया िो िाले हैं, वक अपने सारे कुसंस्कार पािन नवदयों ंके जल में स्नान करके र्बहा िाले हैं, वक वजस उदात्त िातािरण में आप घ म कर आये हैं, उसकी आध्यान्तिक तरंगों ंसे आप परी तरह से भर गये हैं तथा यवद आपने एक सही, भन्तक्तप णव, सत्यपरायण और पवित्र जीन जीना आरि कर वदया है, तो आप वनवश्चत रूप से मोक्ष प्राप्त करेंगे। तर्ब तीथवयात्रा ने अपना उद्देश्य प णव कर वदया समझें।

कुछ तीथवयात्री (भले ही र्बहुत कम संख्या में हैं, और प्रकट भी नहीं ंकरते हैं, वकन्तु वफर भी) ऐसे हैं, जो तीथवयात्रा द्वारा आध्यान्तिक ऊँचाइयों ंतक पहुँच जाते हैं।

२२

'माई मैगजीन' में मैंने आपका लेर् पढा, "सोंसाररक मन वाले लोगो ोंका सार् छोड़ दो। सोंसाररक बारे्ं करने वाले आपके मन को दूडिर् कर देंगे। आपका मन चोंचल हो जायेगा। दौड़ें !

भागें ! ऋडिकेश जैसे एकान्त स्ानो ोंमें भाग जायें! आप आध्यास्तत्मक पर् पर सुरडक्षर् रहेंगे।"
क्ा मैं आपके पास आ कर सोंन्यासी-जीवन डबर्ा सकर्ा हूँ?

उतािले न र्बनें। भली-भाँवत सोचें। पहले तोलें, वफर र्बोलें। आध्यान्तिक मागव में केिल भािुकता से काम नहीं ंचलेगा। उपरोक्त वनदेिन उन लोगों ंके वलए हैं, जो पहले से ही वकसी-न-वकसी सािना में लगे हुए हैं। उनको उच्चतर सािना के वलए एकान्त में जाना पडेगा। आप जैसे प्रारन्तिक सािकों ंके वलए संसार में रहते हुए, रोवगयों ं और िृद्धों ंकी तीन िर्व वनरन्तर वनुःस्वाथव कमवयोग की सािना करना अविक अच्छा रहेगा।

मान लें वक आप संन्यासी हो कर मेरे पास रहते हैं, तो क्ा आपमें इतनी िन्तक्त है वक यवद आपकी माता जी आ कर आपके सामने भग्नहृदय से फ ट-फ ट कर रोने लगें, तो आप उनका सामना कर सकेंगे? यवद आपके वपता जी आपको आ कर िमकाने लगें, तो क्ा आप इस पथ पर दृढ़ रह सकेंगे? यवद कोई युिती आपको प्रलोवभत करे, तो क्ा आप अप्रभावित रहेंगे! यवद आप वकसी रोग से ग्रवसत हो जायें, तो क्ा इस पथ पर दृढ़ रह सकेंगे? क्ा आप सत्य-पथ पर अपना िरीर और जीिन न्योछािर करने को तैयार हैं? क्ा आपने संन्यास एिं एकान्त की मवहमा को जान वलया है? संन्यावसयों ंको जो कवठनाइयाँ झेलनी पडती हैं, क्ा आप उन्ें जानते हैं? क्ा आप दर-दर भटक कर वभक्षािृवत्त द्वारा वनिावह करने के वलए तैयार हैं? जर्ब आपको वनजवन स्थान में रहना पडेगा तो आप प रा वदन और रात कैसे वर्बतायेंगे? यहाँ आने से पहले इन सर्ब र्बातों ंपर भली-भाँवत विचार कर लें। यवद आपको प रा विश्वास है वक आप संन्यास के वलए तैयार हैं, तो आप यहाँ आ सकते हैं। मैं आपकी अच्छी तरह देखभाल करूँगा और सहायता करूँगा। मैं आपकी आध्यान्तिक उन्नवत का ध्यान रखूँगा। मैं आपको िाहों ंका िहंिाह र्बना दं गा। त्यागमय जीिन से र्बढ़ कर सुखदायक जीिन और कोई नहीं ंहै। िीघ्र ही आि-साक्षात्कार प्राप्त करने के वलए यह सर्बसे अविक उपयुक्त है। संन्यावसयों ंकी जय हो!

२३

मैं-जो ब्रह्म हूँ, परम चैर्न्य हूँ, अडद्वर्ीय, अनन्त, सवतव्यापक, सवतशस्तिमान् हूँ, मुझे प्रकृडर् को प्रकट करने की आवश्यकर्ा ही क्ा है? मुझे प्रकृडर् के डनयमो ोंमें बुँधना और देश, काल एवों कारण की सीमाओ ोंमें सीडमर् होना क्ो ोंआवश्यक है और सबसे बढ कर, मुझे क्रम-डवकास एवों प्रत्यावर्तन की प्रडक्रया के चक्र में पड़ने की आवश्यकर्ा ही क्ा है?

आँख अपने-आपको नहीं ंदेख सकती। मनुष्ड्य अपने कन्धों ंपर स्वयं सिर नहीं ंहो सकता। इसी तरह उस परम तत्त्व के, समस्त सृवष्ट के कारण-रवहत कारण के विर्य में की जाने िाली सारी खोज आवद-अज्ञान से जा टकराती है। जो व्यन्तक्त अपनी मैं को िन्य तक ले जाता है, और इस प्रकार जो ईश्वर की कृपा प्राप्त कर लेता है, िह इस दीिार को भेद कर उस अनन्त के साम्राज्य में प्रिेि पा जाता है। तर्ब िह सर्ब जान जाता है। वकन्तु यह जानकारी वकसी अन्य को र्बतायी नहीं ंजा सकती, क्ोंवक इस वििाल दीिार ने दसरों ंको सत्य जानने से रोक कर रखा हुआ है। इसवलए प्राचीन सन्तों ंने इसे अवतप्रश्न कहा है।

केिल इतना जान लेना ही पयावप्त है वक भगिान् ने इस सृवष्ट की रचना इसवलए की है वक आप स्वयं को विकवसत कर सकें और आि-साक्षात्कार प्राप्त कर सकें, तावक आप उनके प्रकटीकृत रूप-इस समस्त सृवष्ट की सेिा कर सकें और उससे प्रेम कर सकें। अज्ञान रूपी िाक ने मनुष्ड्य को आि-जागरूकता के अपने महल से अपहृत कर वलया है और उसे घने जंगल में ला पटका है। जर्ब िह जागता है तो िह यहाँ कैसे आ गया, इसकी

वचन्ता नहीं ंकरता, अवपतु यहाँ से र्बाहर वनकलने का प्रयास करता है। इसी प्रकार, सच्चा सािक आि-साक्षात्कार प्राप्त करके जन्म-मरण के चक्र से वनकलने का प्रयास करता है।

२४

वे सवतडहर्िी, दया के सागर, करुणा-डसनु्धु भगवान् सदाचारी व्यक्ति की सहायर्ा क्ो ों नही ोंकरर्े और उसे सुर्ी क्ो ोंनही ोंरर्े ? वे उसे पूवत-जन्म के कमों की दया पर क्ो ोंछोड़ देर्े हैं?

कमव एक पवहये की भाँवत होते हैं। उनको प रा करना ही पडता है। वजस िन्तक्त से िह गवत में आये होते हैं, उसे खचव करना ही पडता है। यह वक्रया एिं प्रवतवक्रया का चक्र है। जैसे ििनुर् से एक र्बार छटा हुआ र्बाण िापिस नहीं ंलौटाया जा सकता भले ही विकारी को यह लगे वक उसने गलत जगह विनाना लगा वदया है; इसी प्रकार प्रारब्ध कमव, अथावत् गत जन्मों ंके वकये गये कमों के फल जो पररपक्व हो कर इस जन्म में भोगने के वलए आ गये हैं, उन्हें वमटाया नहीं ंजा सकता

वफर भगिान् अपने भक्त की सहायता कैसे करते हैं? िह करुणा-सागर प्रभु उसकी संकल्पिन्तक्त को सुदृढ़ करके तथा सहनिन्तक्त को र्बढ़ा कर, प्रसन्नतापिवक कमव-फल भोगने की िन्तक्त दे कर सहायता करते हैं। वनवश्चत रूप से भक्त को पिव-कमों की दया पर नहीं ंछोड वदया जाता। िह उनके द्वारा अपनी दया के सुरक्षा-कििच से भली-भाँवत आिृत्त कर वदया गया होता है। वजस प्रकार भीर्ण जाडे और प्रचण्ड िायु में आप अपने घर में एिं गमव कपडों ंमें सुरवक्षत रहते हैं, इसी प्रकार भगिान् का भक्त (भले ही देखने िालों ंको िह अवंकंचन, रोगी और पीवडत प्रतीत होता हो) यह अनुभि नहीं ंकरता वक िह जरा-से भी कष्ट में है और िह सदा उनके स्मरण में प्रसन्न एिं आनन्तन्दत रहता है।

२५

गलर् काम करने वाला व्यक्ति र्कत देर्ा है डक वह अपने कमों के कारण यह सब कर रहा है, और वह ऐसा न करने का भी प्रयत्न नही ोंकरर्ा, क्ोडोंक उसे ऐसा करने में प्रसन्नर्ा प्राप्त होर्ी है। उसे कैसे समझाया जाये डक ऐसे न करे ?

कमव मनुष्य को गलत कायव करने के वलए र्बाध्य नहीं ंकरता। हाँ, संस्कार कुछ हद तक करते हैं। भगिान् ने मानि को स्वतन्त्र इच्छािन्तक्त प्रदान की है, वजससे िह अपने भविष्य को वर्बगाड या सँिार सकता है। मनुष्य को भोग-स्वतन्त्रता नहीं ंहै, जो वक कमव द्वारा संचावलत है। वकनुतु उसे कमव-स्वतन्त्रता है। िह अपने कुसंस्कारों ंको विचारिन्तक्त द्वारा, इच्छािन्तक्त द्वारा और भले कायों के सतत अभ्यास द्वारा सुसंस्कारों ंमें र्बदल सकता है।

दुगुवण तत्काल सुख देते प्रतीत होते हैं, यही सर्बसे र्बडा लोभ है और यही सद्गुण अवजवत करने में सर्बसे र्बडी र्बािा है। इसका वनराकरण केिल वििेक एिं अनुभि द्वारा हो सकता है। परमािा का ध्यान करने से तथा दुष्कमों के कारण उस व्यन्तक्त की आिा को एिं समस्त समाज को होने िाली हावन का वचन्तन करने से व्यन्तक्त दुष्कमव करने से र्बच सकता है, वकनुतु तत्काल सुख प्रतीत होने िाले दुष्कमव उसे वफर लुभा लेते हैं। इस गंभीर समस्या का हल सुगम नहीं ंहै, दुष्टहृदयी इतने िीघ्र नहीं ंर्बदलता। इसीवलए हमारे पिवजों ंने सत्संग को इतना र्बढ़ािा वदया। केिल विद्वज्जनों ंएिं आध्यान्तिक क्षेत्र में उन्नत सन्तों ंका सतत संग ही दुष्टों ंके मन से गलत िारणाओं ंको वनकाल सकता है।

मैं एक अनजान स्त्री हूँ, जो कभी आपसे डमलेगी-इसकी आपने कभी कल्पना भी न की होगी, डकनुतु मेरी प्रार्तना है डक स्त्री होने के कारण आप मुझसे घृणा न करें! मैं र्ो केवल आध्यास्तत्मक जीवन का आनन्द पाने को लालाडयर् हूँ। स्वामी जी, स्त्री होने पर भी कृपा करके मेरी ओर ध्यान दें और मुझे बर्ायें डक क्ा मैं ऐसे आनन्द को प्राप्त कर सकूँगी ? और यडद हाुँ, र्ो ऐसा कब होगा ?

कहर्े हैं डक व्यस्ति के सही गुरु होना अडनवायत है; डकनुतु मैं नही ों जानर्ी डक ऐसे गुरु को मैं कहाुँ र्ोजूँ जो मेरी इस कुषुधा को शीघ्र र्ृप्त कर दे। क्ा आप मेरी सहायर्ा कर सकर्े हैं?

क्ा आपके गुरु र्े ? कौन र्े वह ? कृपया मुझे उनके डविय में बर्ायें। यडद मैं धृष्टर्ा नही ों कर रही हूँ, र्ो कृपया बर्ायें डक क्ा वह सद्गुरु र्े, या हैं?

क्ा मैं जान सकर्ी हूँ डक आपको गुरु अर्वा सद्गुरु कहा जा सकर्ा है?

मुझे यह जान कर र्बहुत प्रसन्नता हुई वक आप आध्यान्तिक जीिन का आनन्द प्राप्त करने को अत्यविक लालावयत हैं। आपके संस्कार अचे्छ एिं आध्यान्तिक हैं। इनको सुरवक्षत रखें। वनयवमत अभ्यास के द्वारा आप आध्यान्तिक आनन्द को प्राप्त कर सकती हैं।

मैं वकसी से भी घृणा नहीं ंकरता। मवहलाओं ंमें मैं वनज आिस्वरूवपत् श्रद्धा रखता हूँ। नारी महािन्तक्त का प्रकटीकृत रूप है। मैं उसकी दुगाव अथिा काली के रूप में उपासना करता हूँ। यद्यवप न्तियों ंको अर्बला (र्बलहीन) कहते हैं, तथावप िे इस िरा पर सवक्रय िन्तक्तस्वरूपा हैं। िमव की सुरक्षा केिल उन्ीं ंके माध्यम से हो रही है। भारतीय नाररयों ंमें भन्तक्त का तत्त्व अन्तवनववहत है। उनमें अविचल भन्तक्त होती है। यवद िे वनश्चय कर लें, तो परमािा-साक्षात्कार अवत िीघ्र प्राप्त कर सकती हैं।

क्ा आप मीरा के समान नहीं ंहोना चाहतीं ं? यवद आपका मन सचमुच ईश्वरोनु्मख हो चुका है, यवद आप अपनी आध्यान्तिक सािनाओं ंमें गंभीर और सुदृढ़ हैं, तो र्बहुत िीघ्र ही आप वदव्य आनन्द प्राप्त कर सकती हैं। आनन्तन्दत हो जायें! वनभीक र्बनें! सुदृढ़ रहें! स्वयं को पहचानें ! साक्षात्कार प्राप्त करें! आध्यान्तिक आनन्द का आस्वादन करें!

यवद आपकी इच्छा िास्तविक है तो गुरु आपको अपने समक्ष प्राप्त हो सकता है। सचे्च वजज्ञासु दुष्प्राप्य हैं। हाँ, मेरे भी गुरु हैं। स्थान का अभाि होने के कारण, मैं उनकेविर्य में विस्तार से नहीं ंर्बता सकता। मैं, न तो गुरु हूँ, न ही सद्गुरु। दसरे की सेिा करने में मुझे आनन्द प्राप्त होता है। मैं वनवश्चत रूप से आपकी सेिा को तत्पर हूँ, तथा मेरे पास जो कुछ भी है, िह आपसे र्बाँटने को तैयार हूँ। मैं आपके संशयों ंका वनिारण करके आपको अध्याि-पथ पर अग्रसर कर दूँगा।

क्ा गुरु या डशक्षक के डनदेशन की सहायर्ा डलए डबना प्राणायाम का अभ्यास करने में र्ीं है ?

सिाारण प्राणायाम का अभ्यास गुरु की सहायता के वर्बना वकया जा सकता है। यवद आप सतकव हैं और सहज र्बुन्तद्ध का उपयोग करते हैं, तो आसन-प्राणायाम इत्यावद का अभ्यास करने में कोई खतरा नहीं ंहै। लोग अकारण ही भयभीत रहते हैं। यवद आप लापरिाह हैं, तो प्रत्ेयेक कायव करने में खतरा है। यवद आप लापरिाही से सीढ़ी उतरते हैं, तो आप वगर कर टाँग की हड्डी तुडिा र्बैठेंगे। जर्ब आप अपने िहर के वकसी व्यस्त क्ेषेत्र में से जा रहे होते हैं, उस समय यवद आप लापरिाही से चलते हैं, तो गाडी के नीचे आ कर कुचले जाने का भय रहेगा। यवद आप सेट्िन पर वटकट लेते समय सतकव नहीं ंरहते, तो अपना र्बटुआ गंिा र्बैठेंगे। यवद दिाइयों ंके वमश्रण र्बनाते समय सतकव नहीं ंहैं, रोवगयों ंको गलत दिाइयाँ अथिा विर् या आिश्यकता से अविक खुराक दे कर, उनके प्राण ले लेंगे। इसी प्रकार जर्ब आप प्राणायाम करते हैं, तो आपको अपने भोजन का भी ध्यान रखना पडेगा। आपको पेट को र्बहुत अविक भर कर नहीं ंखाना चावहए, आपको हल्का, िीघ्र पचने िाला और िन्तक्त देने िाला भोजन करना चावहए। आपको सिोग में संयवमत होना चावहए। पहले आपको कुिक के वर्बना, एक या दो मास तक केिल अनुलोम-विलोम करना चावहए, वफर िीरे-िीरे श्वास-प्रश्वास के अनुपात को १:४:२ से र्बढ़ाते हुए, १६:६४:३२ तक ले जाना चावहए। साँस को र्बहुत िीरे-िीरे छोडें। यवद इन वनयमों ंका पालन वकया जाये, तो प्राणायाम का अभ्यास करने में कोई भय नहीं ंहै।

यवद आप दीघव काल तक कुिक करने का अभ्यास करना चाहते हैं तथा अपान को प्राण से वमला देना चाहते हैं, तर्ब गुरु का होना आिश्यक है। यवद गुरु नहीं ंवमल रहा तो साक्षात्कार प्राप्त योवगयों ंकी पुस्तकें आपको वनदेिन दे सकती हैं। वकन्तु गुरु के पास होना अविक अच्छा है। या आप उनसे वनदेिन प्राप्त करके अपने घर पर अभ्यास कर सकते हैं। उनसे वनयवमत पत्र-व्यिहार करते रह सकते हैं। आि या एक वमनट तक तो आप वर्बना वकसी कवठनाई या भय के कुिक कर सकते हैं। यवद कोई साक्षात्कार-प्राप्त योगी नहीं ंवमलता, तो आप योग के िररष्ठ विद्याथी के पास जा सकते हैं। िे भी आपकी सहायता कर सकते हैं।

२८

क्ा आहार-शुस्ति से मन पडवत्र होर्ा है? क्ा डनराडमि भोजन सास्तिक नही ंहै ?
महाभारर् में हमें लोगो ंद्वारा यज्ञ में समडपतर् बडल के बकरे र्ाये जाने के उदाहरण डमलरे् हैं।

हाँ, भोजन की िुन्तद्ध से मन िुद्ध होता है। '**आहार शुिौ सिशुस्तिः ।**' िैम्पेन (मवदरा) की एक खुराक लें और ध्यान में र्बैठ कर देखें। सन्तरे के रस की एक खुराक वपयें और ध्यान के वलए र्बैठें। आपको अन्तर पता चल जायेगा। अलग-अलग प्रकार का भोजन, मन्तस्तष्क के अलग-अलग भागों ंपर प्रभाि डालता है। मवदरा पीने, माँस और लहसुन खाने hat H . जर्ब आप ध्यान के वलए र्बैठेंगे तो आपका मन चंचल एिं परेिान रहेगा। दि और फल लेने से आप मन को भली-भाँवत एकाग्र कर लेंगे। हमारे ऋवर्-मुवन दि और फलों ंपर ही रहते थे। छान्दोग्य उपवनर्द् में कहा गया है, आहार िुन्तद्ध से मन िुद्ध होता है और तर्ब व्यन्तक्त को मोक्ष की प्रान्तप्त होती है। आपको आहार-संयम रखना चावहए।

मांसाहार सान्तत्त्वक नहीं ंहै। सािक के वलए यह अच्छा नहीं ंहै। एक मास तक दि और फलों ंपर रहें और वफर देखें। हमें करके देखना चावहए। करने से आपको अनुभि हो जायेगा वक वनरावमर् भोजन करना मन के वलए ठीक नहीं ंहै।

२९

इनमें से क्ा अडधक अच्छा है? गृहस्-जीवन व्यर्ीर् करना या सोंन्यासी हो जाना ?

आप एकदम से संसार का त्याग नहीं ंकर सकते। संसार एक ववाल विश्वविद्यालय है। प्रकृवत सिवश्ेरेष्ठ विक्षक है। संसार में रह कर आप दया, सहनन्तक्त इत्यावद सद्गुणों ंका विकास कर सकते हैं। एकाकी गुहाओं ं में रह कर आप इनका विकास नहीं ंकर सकते। संसार सिोत्तम गुरु है। ीरेीरे जर्ब आप उन्नत न्तस्थवत प्राप्त कर लेंगे, तर्ब संन्यास ले सकते हैं। गुरु नानक संसार में ही रहे। उनके दो पुत्र थे। संसार में रहने में कुछ गलती नहीं ंहै। प्राथवना सर्ब कवठनाइयों ंको द र कर देगी।

३०

कही–ंकही ंऐसा सुना है डक साधु और सोंन्याडसयो ंके सार् डमत्रर्ा करने से व्यक्ति का बहर् कुछ बन या डबगड़ सकर्ा है। यडद कोई व्यक्ति डकसी डसि सन्त की भावना को आहर् करर्ा है, र्ो कहरे् हैं डक वह उसे शाप दे देर्ा है और उसे बहर्-सी मुसीबरें् झेलनी पड़र्ी हैं। यह कहाँ र्क सच है ?

सिु एिं संन्यावसयों ंका साथ सदा ही मनमोहक है, यवद िह उत्तम चररत्र से सम्पन्न हैं तो! यवद यही एकमात्र गुण उनमें विद्यमान है तो िे पजा और सिान पाने के पणव अविकारी हैं। िे कभी भी वकसी को कष्ट पहुँचाने का कारण नहीं ंर्बन सकते।

सचे्चे सिु और संन्यावसयों ंका सम्पकव कभी भी लोगों ंकी उन्नवत में र्बाा का अथिा उनकी वनजी हावन का कारण नहीं ंहो सकता। सिु तो उनको सही एिं नैवतक वनयमों ंका पालन करने योग्य र्बनने में सहायता करते हैं। सिु-सन्तों ंके आिीवाद लोगों ंके वलए अनमोल िन हैं। सांसाररक र्बुन्तद्ध से सम्पन्न लोगों ंके मन स्वभाितया वजन कुसंस्कारों ंसे भरे होते हैं, सिु-सन्तों ंका संग उन्ें िुद्ध करने में सहायता करता है।

ईश्वर-साक्षात्कार प्राप्त सन्त को भले ही वकतना उकसाने का प्रयत्न वकया जाये, िह कभी भी वकसी को िाप नहीं ंदेता; र्बन्तल्क सिविन्तक्तमान् परमाा से प्राथवना करता है-उसे खतरों ंएिं अपमान से र्बचाने के वलए नहीं, ं अवपतु उसे और उसके विरोवियों ंको भी ज्ञान, प्रकाि, पवित्रता एिं द्युवत प्रदान करने के वलए। उसे चोट पहुँचाये जाने पर भी

हि कभी वकसी को चोट नहीं ंपहुँचाता। िह अत्यन्त सहज रूप से क्षमा करके उसे भल जाता है। िह अपने प्रवत वकये गये वकसी भी अनुवचत कायव को याद नहीं ंरखता। सच्चा ईश्वर-साक्षात्कार प्राप्त सन्त चोर, लम्पट, कपटी, हत्यारा, आक्रामक, चींटी, श्वान, अछत, ब्राह्मण, पेड, पार्ाण, वर्बचुछु यहाँ तक वक इस समस्त जड-चेतन सृवष्ट में अपने इष्ट की छवि को देखता है। िह सर्बके साथ स्वयं को एक ही देखता है। जर्ब यह न्तस्थवत है वक िह सर्बको आित् ही देखता है, तो िह वकसे िाप दे सकता है?

याद रखें वक िह सिाु या संन्यासी ईश्वर-साक्षात्कार प्राप्त व्यन्तक्त नहीं ंहो सकता जो वकसी भी कारण से वकसी को िाप देता है। यह भी सच है वक कोई पवित्रिाा (भले ही िह सिाु या संन्यासी न भी हो) यवद िारीररक या मानवसक कष्ट के प्रभाि से वकसी को िाप दे दे तो िह तत्काल फवलत हो जाता है।

३१

जब गुरु और भगवान्- दोनो ोंकी कृपा है, र्ब डफर मन डनयस्तिर् क्ो ोंनही ोंहोर्ा ?

इसके साथ-साथ पुरुर्ाथव भी अत्यन्त आिश्यक है। जर्ब आप पुरुर्ाथव करते हैं, केिल तभी कृपा होती है। कोई प्राध्यापक आपके वलए प्रश्ों ंके उत्तर वलख कर आपको सफलता नहीं ंवदलायेगा। गीता कहती है, 'उद्धरेदात्मनात्मानम्।' व्यन्तक्त को स्वयं अपने-आपको उन्नत करने का प्रयास करना चावहए। कृपा व्यन्तक्त को उन्नत होने में सहायता करती है। प्रत्येक को अपने मोक्ष की प्रान्तप्त के वलए स्वयं पररश्रम करना चावहए। आप पछेंगे वक वफर कृपा क्ा है? यवद साधक को अपने गुरु के पत्र प्राप्त होते हैं और उनसे उसकी समस्त िंकाओं ंका समाधान हो जाता है, िह कृपा है। यवद कोई साधक यहाँ आ जाता है और गंगा स्नान कर लेता है, तो यह कृपा है। अनेकों ंइसके वलए लालावयत हैं। यहाँ तक वक वकतने ही करोडपवत यहाँ आने और गंगा स्नान करने के वलए तरसते रहते हैं, वकन्तु उन्ें एक र्बार भी आ कर अपनी इच्छा-प वतव का सौभाग्य प्राप्त नहीं ंहोता। यवद स्वाध्याय के वलए अच्छी पुस्तकें उपलब्ध हैं, तो यह कृपा है। यवद वकसी का स्वास्थ्य इतना अच्छा है वक िह साधना कर सके, तो यह कृपा है। यवद भगिान् चाहें तो एक ही र्बार में झट से सारे जगत् को मुन्तक्त दे सकते हैं, वकन्तु िे ऐसा नहीं ंकरते, उनकी कृपा-दृवष्ट िहीं ंहोती है, जहाँ पुरुर्ाथव होता है।

३२

भगवान् ने यह सोंसार क्ो ोंबनाया है?

भगिान् से पछें वक उन्ोंने यह संसार क्ों ंर्बनाया है? आत्म-ज्ञान प्राप्त करें। तर्ब आप जान लेंगे वक भगिान् ने संसार क्ों ंर्बनाया है। आप अपनी र्बुन्तद्ध से यह नहीं ंसमझ सकते। केिल अन्तज्ञावन द्वारा ही आप इसे जान सकते हैं।

भगिान् ने लीला के वलए संसार की रचना की है, "लोकित् तु लीला कैिल्यम्।" सृवष्ट की रचना के पीछे कुछ उदे्देश्य है। वजस तरह वकरणों ंके वर्बना सयव नहीं ंहोता, उसी तरह सृवष्ट-क्रम के वर्बना भगिान् भी हमें प्राप्त नहीं ंहो सकता। संसार सयव की वकरणों ंकी तरह है। यह उनकी प्रकृवत है। जैसे जादगर अपने माया जाल से कुछ िस्तुएँ र्बनाता है और वफर अन्य कुछ िस्तुओं ंको गायर्ब कर देता है, इसी प्रकार भगिान् भी इस संसार की रचना कर देते हैं और वफर अपनी लीला से उसे विलीन कर देते हैं। भगिान् सिवव्यापक हैं। भगिान् ने संसार कर्ब और क्ों ंर्बनाया, यह प्रश् अवत-प्रश् है, दुर्बोध प्रश् है। इस सम्बन्ध में तकव-वितकव करने से हम अपना समय ही नष्ट करेंगे। संसार के विर्य में पछने से पहले, अपने विर्य में पछें, अपने-आपको जानें। इसे जान लेने से आप सर्ब-कुछ जान जायेंगे।

३३

औद्योडगक क्रास्तन्त के कारण नैडर्क डनयमो ोंएवों नैडर्क िर के पर्न का क्ा कोई इलाज है?

औद्योवगक क्रान्तन्त वकसी को र्बाध्य नहीं ंकरती वक नैवतक स्तर को वगराया जाये। इसमें तो सन्देह नहीं ंहै वक कुछ हद तक तो इसने पतन को र्बढ़ािा वदया है; वकन्तु मुख्य हाथ मानिता को आध्यान्तिक मल्यों ंकी अपेक्षा भौवतक प्रसािनों ंके म ल्यों ंको जान-र्बझ कर श्रेष्ठ वसद्ध करके गलत वदिा-वनदेि देने िालों ंका है। अर्ब भी यवद
मनुर्ष् अपने मन से स्थ ल स्वाथवपरता को वनकाल कर िुद्ध कर लेता है तथा उसमें स्व-विकसन एिं सदाचरण को स्थावपत कर लेता है तो इतने अविक औद्योवगक विकास के रहते हुए भी उच्चतर नैवतक स्तर को र्बनाये रखा जा सकता है।

३४

इस सोंसार के जीवन की क्षणभोंगुररा् को देर्े हुए भी मनुष् मृतुयु को याद क्ो ोंनही ों रर्ा और पाप-कमत करना क्ो ोंनही ोंछोड़रा् ?

प्रत्येक व्यन्तक्त इस संसार में पहले-पहले अचानक मनुर्ष् र्बन कर नहीं ंआ जाता। संसार में जीि जर्ब से इस सृवष्ट-क्रम में प्रिेि करता है, तभी से एक या दि या सौ अथिा सहस्रों ंर्बार नहीं,ं र्बन्तल्क लाखों–ंलाखों ंर्बार जन्म लेता और मृतुयु को प्राप्त होता हुआ वनरन्तर जन्म-मरण के चक्र में पडा रहता है। िास्ति में िह प्रत्येक जन्म में भोगे हुए कमव-फलों ंके संस्कार ितवमान जन्म तक साथ वलये रहता है। अनभोगे अथिा िेर्् र्बचे संस्कार तर्ब तक साथ चलते ही रहते हैं, जर्ब तक वक आिज्ञान की अवग्न से प री तरह भस्मीभ त नहीं ंकर वदये जाते। यद्यवप मनुर्ष् वनत्य ही लोगों ंको मरते हुए देखता है, वफर भी उसका अज्ञान, उसे सत्य को स्वीकारने नहीं ंदेता। अर्ब तक जो अनुभि उसने प्राप्त वकये होते हैं, िह अभी इतने पयावप्त नहीं ंहोते वक उसका ध्यान 'िाश्वत सत्य' अथावत् परमािा की ओर खीचें, वकन्तु एक वदन ऐसा वनवश्चत रूप से प्रत्येक व्यन्तक्त के जीिन में आयेगा, जर्ब वकसी दुलवभ गुण के द्वारा (िह चाहे महािाओं ंके साथ सतंसंग के द्वारा हो, गुरु-भन्तक्त से हो या प्रभु कृपा से हो) िह अन्ततुः िीरे-िीरे विकवसत होता हुआ परम सत्य की ओर उनुमुख होगा।

मनुर्ष् अविकतर अज्ञान से प्रेररत हुआ पाप-कमव की ओर अग्रसर होता है। जर्ब वनुःस्वाथव भले कायों को करने से, जप-स्वाध्याय इत्यावद से तथा गुरु-कृपा से अज्ञान सदा के वलए समाप्त हो जाता है, तर्ब परम लक्ष्य सदैि आँखों ंके सामने रहने लगता है। पाप-कमों में प्रिृत्त होना यह संकेत करता है वक जीि अभी विकास को प्राप्त नहीं ं हुआ है, वक अभी उसे संसार में रह कर और अनुभि प्राप्त करने हैं तथा अभी और वनरन्तर स्थ ल से स क्ष्म की ओर विकवसत होना है। अज्ञान को दर हटाने के वलए तथा भगिान् का सतत स्मरण र्बने रहने के वलए संसार के कठोर आघात ही सर्बसे र्बडे सािन हैं।

३५

विडवक और सच्ची महानरा् जानने के डलए क्ा मानदण्ड हैं?

व्यन्तक्त की सच्ची िास्तविकता उसके पास होने िाली िनरावि से अथिा कोवठयों ंएिं कारों ंसे अथिा उच्च पद से नहीं ंआँकनी चावहए; र्बन्तल्क उसके वनुःस्वाथवता, सिव-प्रेममय दृवष्टकोण, हृदय की वििालता, उदार विचार, विश्ववहत, आि-र्बवलदान, वनरहंकाररता, आि-विलोपनता, अनेकता में एकता देखने की मात्रा, मानिीय सेिाएँ इत्यावद के गुणों ंसे परखनी चावहए। िास्तविक महान् व्यन्तक्त पवित्र होता है, आध्यान्तिक दृवष्ट से उन्नत होता है, उदारवचत्त एिं उदारहृदयी होता है। िह कभी भी अपने ही वलए नहीं ंसोचता तथा अपने वनजी भले, स्वाथवपरता एिं

व्यन्तक्तगत लाभों ंको एक तरफ हटा कर मानि मात्र की भलाई में ही तत्पर रहता है। िह मानिता की भलाई के वलए प्राथवना करता है। जहाँ खुला, विाल, असंकुवचत हृदय है िहीं ंपर िास्तविक महानता है।

३६

धमतपरायण व्यस्ति कौन है?

जो काया, िाचा, मनसा पवित्र है तथा जो यम एिं वनयमों ंका अक्षरिः पालन करता है। संगीन के सामने होने पर भी हि अपने िमव पर अविग रहता है। छोटे-छोटे तुच्छ लाभों ंऔर स्वाथों के वलए िह कभी भी सदाचरण से विचवलत नहीं ंहोता। िह सदैि पवित्र, भगिान् का भय मानने िाला, आि-संन्तस्थत तथा वनुःस्वाथी होता है। िह विश्ववहत का सोचने िाला एिं उदार दृवष्टकोण िाला होता है। िह सबके प्रवत िीर और सहनिील होता है। िह दानिीलता, सादगी, उदात्तता, गंभीरता, विनम्रता, त्याग, िान्तन्त इत्यावद समस्त सद्गुणों ंकी खान ही होता है। अहंकार, काम, क्रोि, लोभ, चतुराई तथा दि इत्यावद दुगुवणों ंसे िह पणवतया परे रहता है। ऐसा नेक एिं िमवपरायण व्यन्तक्त सभी की श्रद्धा का पात्र है। उसका कभी भी कोई ितुरु नहीं ंहोता, क्योंवक िह वमत्र–ितुरु-सभी से समान रूप से प्रेम करता है।

३७

कोई भी व्यस्ति अपनी युवावस्ा को दीघत काल र्क स्ायी कैसे रर् सकर्ा है ?

इसके वलए योग-पद्धवत सिवश्रेष्ठ है। वचवकत्सा के अन्य सभी प्रचवलत सािनों ंसे यह श्रेष्ठ एिं सस्ती है। उत्साहपिवक प्राणायाम और आसन करें। ये दोनों ंिीयव को सुरवक्षत रखने तथा िन्तक्त को ओजस में पररिवतवत करने में सहायता करते हैं। िीर्ावसन, सिाांगासन, मत्स्यासन, हलासन, पवश्चमोत्तान आसन, पादहस्तासन तथा योगमुद्रा के साथ भन्तिका प्राणायाम का अभ्यास करें। जब तक 'केिल कुिक' की न्तस्थवत तक न पहुँच जायें, तब तक प्राणायाम का अभ्यास करते रहें। जब श्वास लेने अथिा छोडने की आिश्यकता ही नहीं ंरहती, तब िीयव न्तस्थर हो जाता है; अथावत् वकसी भी रूप में िीयव-पतन नहीं ंहोता। आयुिेवदक औषवि 'च्यिनप्राि' का वनरन्तर सेिन करते रहने से युिािस्था बहुत दीघव काल तक बनी रहती है।

३८

'डशवा'ज़ टेरजर' नामक रचना में 'आर यू रीयली क्वाडलफाइि?' नामक शीतक लेर् के पैरा ३ में आपने डलरा् है, "यडद इसे (साधक को) कोई वस्तु देने से इन्कार कर डदया जाये, र्ो उसे उस वस्तु के प्रडर् इच्छा ही समाप्त कर देनी चाडहए।" क्ा यह कर्न झूठी आत्म-रु्डष्ट को प्रोत्साहन देना र्ा पराडजर् मानडसकर्ा को बढावा देना नही ंहै? कृपया इस असोंगडर् का समाधान करके कृर्ार्त करें।

"यवद उसे (सािक को) कोई िस्तु देने से इन्कार कर वदया जाये तो उस िस्तु के प्रवत उसे पुनुः इच्छा ही नहीं ंकरनी चावहए।"

इस कथन को तब तक बार-बार पढ़ते जायें, जब तक यह आपके सम्पणव व्यन्तक्तत्व में व्याप्त न हो जाये, जब तक इसका सही सार-तत्त्व परी तरह आपके भीतर न उतर जाये। केिल तभी इसके पीछे वनवहत महान् सत्य

के सही भिा को आप समझ पायेंगे। 'न चाहो, न ठुकराओ' - एक आदिव सिाक का यह आदिव– ाक् होना चावहए।

उसे वकसी भी िसुतु-िििर् के प्रवत ललक, चाहना अथिा लगिा नहीं ंहोना चावहए, भले ही िह उसकी वकतनी ही मनभाती िसुतु क्ों ंन हो। जो कुछ भी वर्बना वकसी प्रयास के संयोगिि उसे वमल जाये, (र्बस िह उसके नैवतक स्तर को वगराने िाला न हो, तो) उसका सिाक को स्वागत करना चावहए। उसे वकसी भी िसुतु-पदाथव के प्रवत लगिा इसवलए नहीं ंहोना चावहए; क्ोंवक दैि-इच्छा से िह िसुतु यवद उससे अलग कर दी जाये, तो उसे मानवसक क्लेि झेलना पड सकता है। प्रत्येक िसुतु का व्यन्तक्त को प्रभु-इच्छा से ही संयोग अथिा वियोग होता है, भले ही मनुर्ष् ने उसके वलए प्रयत्न वकया हो अथिा नहीं।ं जो कुछ भी वमलना है, िह वमल कर ही रहता है।

सिाक-वजज्ञासुओं ंको भले और रुबुरे, सुख और दु:ख, पे्रम और घृणा इत्यावद जैसे सभी द्वनद्वों ंसे मानवसक विरन्तक्त विकवसत करनी चावहए। ऐसा मानवसक समता का भिा सद्ग्रन्थों ंके स्वाध्याय से तथा सन्तों ंके संग इत्यावद से आि-विचार को प्राप्त करके वकया जा सकता है। सिाक में आतम् त्याग, आि-तुवष्ट और आि-अस्वीकृवत का होना आध्यान्तिक क्षेत्र में प्रगवत करने के वलए अवत आिश्यक है।

यवद सिाक अपने प्राप्त भाग्य के प्रवत सनुतुष्ट रहता है और वजन इच्छाओं ंके प्रवत पहले विचार करके आनन्तन्दत होता था, उनके आगे भी मानवसक रूप से झुकता नहीं ंहै, तो यह परावजत मानवसकता का द्योतक नहीं ं है। वनवश्चत रूप से यह लोमडी के 'अंग र खट्टे हैं' िाली प्रिृवत्त नहीं ंहै। सै्वन्तच्छक आि-अस्वीकृवत तथा त्याग के द्वारा अथिा कुछ अनचाहा हो जाने पर भी समता र्बनाये रखने से अत्यविक इच्छा–न्तक्त विकवसत हो सकती है; अतु: यह अवनिायव है वक चेतना की समस्त अिस्थाओं ंमें मन का सनुतुलन र्बनाये रखा जाये।

३९

र्कनीकी अर्ों में नाड़ी-शुस्ति क्ा हैयहकैसे ज्ञार् हो डक व्यस्ति ने पूरी र्रह से नाड़ी-शुस्ति की अवस्ा प्राप्त कर ली है?

नाडी–ुन्तद्ध से अथव है-नावडयों ंकी स्वच्छता अथिा िुद्धता। िास्ति में अूँगरेजी का 'निव' िब्द नाडी का पणव अथव नहीं ंहै। देखा जाये तो अूँगरेजी में इसके वलए कोई उपयुक्त िब्द नहीं ंहै।

पणव उपिास (अच्छा हो यवद कुछ भी ठोस या तरल भोजन न वलया जाये), आसन-प्राणायाम का अभ्यास तथा कठोर िारीररक व्यायाम-ये सर्ब वमल कर नावडयों ंमें से चर्बी तथा अन्य अिांवछत पदाथव वनकाल कर समस्त प्रणाली में सिार ला कर नाडी–ुन्तद्ध में सहायता करते हैं। आसन एिं प्राणायाम तन्तन्त्रकाओं ंको िुद्ध कर सकते हैं, व्यवद इन्ें सही ढंग से वकया जाये।

जर्ब व्यन्तक्त नाडी–ुन्तद्ध की न्तस्थवत प्राप्त कर लेता है तो िरीर हल्का हो जाता है। मल की मात्रा कम हो जाती है। िरीर की गवत में लचीलापन और व्यिहार में सवक्रयता आ जाते हैं। सुस्ती अथिा आलस् का वचह्न भी र्ेर् नहीं ंरहता। चलते समय प्रतीत होता है मानो िरीर हिा में तैर रहा हो। िाणी की ककविता अथिा रूखापन हट जाता है तथा सुमिुरता उसका स्थान ले लेती है। कदना, छलूँगें जैसे लगाना और नृत्य करते हुए प्रतीत होना नाडी–ुन्तद्ध प्राप्त व्यन्तक्त कायव करते समय ऐसा देखा जा सकता है। व्यन्तक्त यो अमुक कायव करने, अमुक लक्ष्य प्राप्त करने इत्यावद जैसी भिाना के वलए अन्दर से कोई अिणवनीय िन्तक्त पे्ररेरत करती रहती प्रतीत होती है।

डबना हमारी डकसी गलर्ी के ही हमारे सार् होने वाले गलर् काम या व्यवहार के डलए प्रडर्शोध लेने के सबसे बडढया और सबसे र्ाब ढोंग क्ा हैं?

गलत व्यिहार वकसी कारण से हो, अथिा वनरिार हो, यवद व्यन्तक्त िास्तविक नैवतक और आध्यान्तिक न्तिक्त अवजवत करना चाहता है और प्रभु की कृपा प्राप्त करता चाहता है, तो उसे वकसी भी ढंग से प्रवतिो नहीं ंलेना चावहए। मन की िान्तन्त और सनुतुलन को वंकंवचत् भी खोये वर्बना उसको िान्तन्त से सहन कर लें। अपने को हावन पहुँचाने िाले का भला करें। अपने को अपिब्द कहने िाले को आिीिाद दें। आपको जो व्यन्तक्त परीन करता हो, उसकी भलाई के वलए प्राथवना करें। जयदि, िम्स तर्बोज, ईसामसीह, गौरांग तथा अन्य सन्तों ंके चररत पढ़ें। भगिान् के भक्त यवद स्वयं को भगिान् के प्रवत प णवतया समवपवत कर देते हैं, गजेन्द्र और िौपदी की भाँवत पणवरूपेण भगिान् की िरण में चले जाते हैं, तो भगिान् स्वयं अपने भक्तों ंकी रक्षा करते हैं। प्रवतकार के रूप में वकसी भी प्रकार का सहारा ले कर स्वयं को वनम्न कोवटकृत न को। वचन्तन में भी प्रवतिो का विचार, भले ही अपने वनम्न मन की तुवष्ट के वलए ही हो, व्यन्तक्त को आध्यान्तिक रूप में द वर्त कर देता है।

अपने विरोिी को भगिद्गीता अथिा रामायण जैसी आध्यान्तिक पुस्तक भेंट करना तथा अज्ञानि अनुवचत कायव से र्बचने एिं आिज्ञान प्राप्त करने की उसके वलए प्राथवना करना, यह सिोत्तम ढंग है उस व्यन्तक्त से प्रवतिो लेने का, वजसने अकारण ही आपके प्रवत अनुवचत कायव या व्यिहार वकया है। भगिान् से हावदवक प्राथवना करते हुए मौन का पालन करें और समभाि र्बनाये रखें।

४१

यडद डकसी उन्नर् योगी को कोई गम्भीर रोग हो जाये र्ो क्ा उसका मानडसक सनुतुलन डबगड़ जार्ा है ? ऐसी पररस्तरुडर् में उसकी क्ा प्रडर्डक्रया होर्ी है?

नहीं,ं कभी नहीं!ं यवद देह सम्बन्धी अथिा िारीररक कष्ट सम्बन्धी कोई विचार भी उसे आता है, या कुछ भी ऐसा होने से जो देह-मन के वलए सहन करना कवठन हो, उसे िान्तन्त से सह नहीं ंपाता, तो याद रखें, िह उन्नत योगी अथिा सन्त या संन्यासी नहीं ंहै। िह व्यन्तक्त, वजसे अपने या अपने आस-पास के अथिा संसार के सम्बन्ध में कोई विचार नहीं ंआते, िह-जो वनज आिा में अथिा अपने वप्रयतम इष्टदेि में, या अपने दयालु गुरु में ही ध्यानस्थ रहता है, और जो वकसी भी प्रकार की सीवमत िस्तु-पररन्तस्थवत एिं व्यन्तक्त के प्रवत पणवतया विस्मरणीय रहते हुए स्वयं का सम्बन्ध उस असीम, वनरामय, अप्रवतर्बन्ध, सिवव्यापक ब्रह्म से ही र्बनाये रखता है, िही िास्तविक एिं उन्नत योगी अथिा भक्त या ज्ञानी है, अन्य दसरा नहीं।ं

अपने रोग के प्रवत अथिा सीवमत, नश्वर िरीर सम्बन्धी या समस्त संसार सम्बन्धी उसके उपेक्षाप णव भाि की समानता सारे संसार में वकसी के साथ भी नहीं ंकी जा सकती। िह सदैि वनज आि-स्वरूप में न्तस्थत रहता है तथा वकसी भी प्रकार की पररन्तस्थवत में अपना सनुतुलन वर्बगडने नहीं ंदेता। िह इस र्बात में दृढ़ विश्वास रखता है वक मृतुयु प्रते्येक की प्रतीक्षा में है और िह वकसी-न-वकसी समय आ कर प्राण हर लेगी; तथा यह भी वक िोक, मोह, क्षुिा, वपपासा, जरा और मृतुयु नामक र् उवमवयाँ प्राणी मात्र में समान हैं, केिल मानि में ही नहीं।ं और यह भी वक आिा अमरणिील, अनश्वर और िाश्वत ब्रह्म ही है। अतुः कवठन से कवठन परीक्षा की घवडयों ंमें भी िह मन से आिान्त अथिा विकल नहीं ंहोता।

४२

क्ा श्रीमद्भगवद्गीऱ् सचमुच ही युिभूडम में भगवान् श्री कृष्ण के मुर् से उच्चररर् की गयी ऱ्ी अर्वा यह कडव की काल्पडनक गाऱ् है?

हााँ! इसमें वंकंवचत् भी सने्देह नहीं ंहै। यह सचमुच युद्धभ वम में भगिान् श्री कृष्ण द्वारा अजुवन को वदया गया उपदेि है। यह किल वचरंजीिी व्यास जी की काल्पवनक कृवत मात्र नहीं ंहै। इन दो श्लोकों ंको देखें, जो गीतामाहात्म्य में आपको वमलेंगे :

गीऱ् सुगीऱ् कर्तव्या डकमन्यैः शास्त्रडविरैः ।
या स्वयों पद्मनाभस्य मुर्पद्माडद्वडनःसृऱ् ।।

भारऱ्मृर्सवतस्वों डवष्णोवतक्त्राडद्वडनःसृर्म्।
गीऱ्ागोंगोदकों पीत्वा पुनजतन्म न डवद्यरे् ।।

गीता मानि कृवत नहीं ंहै। बौन्तद्धक तकव-वितकव को छोड कर इस र्बात में विश्वास रखें। भगिान् श्री किराचायव और रामानुज जी, वजन्ोंने गीता पर भार्ष् रचे हैं, को स्मरण करें। भगिान् श्री कृष्ण ने अपनी एक भक्त लीलार्बाई से स्वयं कहा है वक िह स्वयं और गीता एक ही हैं, दोनों ंमें कोई भेद नहीं ंहै, एक की पजा करने से दसरे की पजा हो जाती है। गीता के अठारहिें अध्याय के ६८ से ७१ तक के श्लोक ध्यान से पढ़ें, इससे आपके हृदय में पािन ग्रन्थों ंके प्रवत श्रद्धा और विश्वास उत्पन्न होगा।

४३

कृपया क्ा आप कोई ऐसे प्रभावशाली ढोंग एवों उपाय बऱ्ायेंगे डजनके द्वारा काम-शस्ति रपान्तररर् हो सके ऱ् उसका ओज में उदात्तीकरण हो जाये ?

काया–िाचा-मनसा कठोर संयम का पालन करें, वनरथवक और व्यथव वचन्तन छोड दें। हर अिस्था एिं पररन्तस्थवत में मन का सनुतुलन र्बनाये रखें और भगिान् का वचन्तन करें। िीऱ्ासन, सिाांगासन तथा ऊर्ध्व पद्मासन करें, साथ ही विपरीतकरणी मुिा करें। सतत भगिन्नाम-स्मरण, सतत जप, ध्यान, गीता अध्ययन, भागित तथा रामायण जैसे सद्ग्रन्थों ंका पाठ करते रह कर अपनी िीयव–न्तक्त की रक्षा करें। वििेक और िैराग्य (सांसाररक विर्यों ंमें आसन्तक्त) को विकवसत करें। जैसे-जैसे िैराग्य में िृन्तद्ध होगी, िैसे ही साथ-साथ िीयव–न्तक्त को सुरवक्षत रखने के प्रयास सहज हो जायेंगे। वजतना ही िीयव सुरवक्षत होगा, उतनी ही िन्तक्त ओज में रूपान्तररत होगी; वजसका अथव है–िारीररक, मानवसक, नैवतक तथा आध्यान्तिक िन्तक्त का प्रचुर मात्रा में होना तथा िीघ्रतम उन्नत अिस्था को प्राप्त होना। प्राणायाम िारीररक एिं मानवसक संयम र्बढ़ाने में र्बहुत सहायता करता है। मन पर वनयन्त्रण का अथव है-प्राण–न्तक्त पर वनयन्त्रण तथा िीयव नष्ट होने पर वनयन्त्रण। इस िीयव–न्तक्त पर वनयन्त्रण हो जाने का अथव है-प्रचुर मात्रा में ओजिृन्तद्ध, अथावत् आध्यान्तिक दृवष्ट से विकवसत होने की क्षमता में िृन्तद्ध। इच्छाओं ं
को वनम्नतम करते हुए गहन सािना करने से काम–न्तक्त आध्यान्तिक िन्तक्त में पररिवतवत हो जायेगी। और अविक जानकारी प्राप्त करने के वलए मेरी पुस्तक 'प्रैन्तक्टस ऑफ ब्रह्मचयव' (ब्रह्मचयव-सािना) पढ़ें। पछे गये प्रश्न का इस पुस्तक में विस्तृत उत्तर वमल जायेगा।

४४

क्या यडद सच न बोलना आवश्यक ही हो गया हो, अडपरु् अडनवायत ही हो जाये र्ो सच न बोलने से समझौर्ा डकया जा सकर्ा है? क्या ऐसे में असत्य बोलने को न्याय-सोंगर् कहा जायेगा ?

सत्य सत्य है और असत्य तो असत्य ही है, दोनों ंका परस्पर उतना ही अन्तर है वजतना वकसी िृत्त की परवरवि के विपरीत वर्बनदुओं ंअथिा उत्तरी एिं दवक्षणी धु्रि का परस्पर अन्तर है। जो व्यन्तक्त नैवतक पररपणवता प्राप्त करना चाहता है, जो परमिाा को पाना चाहता है और िमव से पे्रम करता है, उसे सत्य पर अटल रहना चावहए, भले ही वकतनी भी संकटप णव पररन्तस्थवतयाँ हों,ं कैसी भी गिीर न्तस्थत हो। हररश्चन्द्र को याद करें, इतनी मुसीर्बतों ंमें भी िह कैसे सत्य पर अविग रहा। कैसे उसका नाम अभी भी उसी प्रकार चमक रहा है! हररश्चन्द्र सत्य की साकार प्रवतमा थे। यह एकमात्र उदाहरण ही व्यन्तक्त को भयंकर से भयंकर न्तस्थवतयों ंका सामना होने पर भी सत्य पर वटके रहने की िन्तक्त देने में पयावप्त है। भले ही वकतना भी आिश्यक एिं अवनिायव हो, और हालात की माँग वनजी स्वाथाविि वकतनी भी आिश्यक हो, झठ को तो वनष्ठुरता से द र भगा देना चावहए। सत्य और झठ को कभी भी एक-दसरे से वमलाया नहीं ंजा सकता। एक का द सरे से वमलान र्बहुत ही गलत है। इसमें सने्देह नहीं ंवक भागित तथा अन्य पुराणों ंमें कुछेक ऐसे उदाहरण वमलते हैं जहाँ असत्य र्बोलना सही ठहराया गया है; वकनुतु ऐसी घटनाएँ अपिाद स्वरूप ही हैं, िह हर समय और हर व्यन्तक्त के वलए सही नहीं ंमानी जा सकतीं।ं इस सम्बन्ध में और अविक जानकारी के वलए मेरी पुस्तक 'ऐवथकल टीवचंग्स' (नैवतक विक्षा) पढ़ें।

४५

वकसी व्यन्तक्त को यवद प्रारब्धि िियुािस्था में ही मृतुयु अथिा गिीर रोग से ग्रस्त होना वलखा हो, तो क्या महामृतुंयुंजय मन्त्र उसे इन पर विजय पाने में सहायता कर सकता है?

परमिाा की कृपा से प्रारब्ध को परावजत वकया जा सकता है। भगिान् की कृपा िहाँ होती है जहाँ सच्ची भन्तक्त और पणव पुरुर्ाथव है। पुरुर्ाथव तभी सिि है, जर्ब मन पवचत्र हो। मन तर्ब पवित्र होता है, जर्ब व्यन्तक्त दया और दान करता हो। जर्ब भगिान् कृपा एिं करुणा र्बरसाते हैं, तो दैिी वनयम उसके आगे नहीं ंचलते। उनकी कृपा में अपार िन्तक्त है। हम माकवणे्डय का उदाहरण जानते हैं वजसने अपने पुरुर्ाथव तथा भगिद्-भन्तक्त से मृतुयु पर विजय प्राप्त की थी। उसके प्रारब्ध में िियुािस्था में मृतुयु वनवश्चत थी; वकनुतु जर्ब भगिान् की कृपा हुई तो यमराज अपनी इच्छा पवतव कर नहीं ंसके। अतुः तीव्र पुरुर्ाथव से प्रारब्ध को परावजत करना सिि है।

४६

कुछ दाशतडनक र्कत एवों बुस्ति पर आधाररर् जीवन के ऊपर बहर् बल देर्े हैं। आपका क्या डवचार है?

तकव और र्बुन्तद्ध को सिोच्च स्थान कैसे वदया जा सकता है? मदोन्मत्तता की न्तस्थवत में मन, र्बुन्तद्ध और तकव-िन्तक्त व्यथव हो जाते हैं। ऐवनस्थीवसया (संज्ञाहीनक औषवि) के प्रभाि से तावकवक मन कहाँ रहता है? पन्द्रह वदन तक वनरन्तर पणव उपिास के र्बाद क्या व्यन्तक्त की तावकवक र्बुन्तद्ध पणवतया सही रहती है? वनिा और मछाव की अिस्था में यह लुप्त हो जाती है। ऐसी जडी-र्बवटयाँ भी हैं जो खाते ही मन को पंगु र्बना देती हैं। अतुः ऐसे र्बहुत से कारण हैं वजनसे व्यन्तक्त की तावकवक र्बुन्तद्ध असमथव हो कर कायव करना र्बन्द कर देती है। इस तकविील मन को

अथिा तकव पर ओिाररत जीिन को सिोच्च स्थान कैसे वदया जा सकता है? अन्तज्ञावन ही सिोच्च क्षमता है और जर्ब व्यन्तक्त इस मनुः िन्तक्त को पणव विकवसत कर लेता है, तर्ब उसका विकास परिपणव रूप से होता है तथा िह आिो-साक्षात्कार प्राप्त कर लेता है। समावि की अिस्था में प्राप्त हुआ ज्ञान ही उच्चतम ज्ञान है। यही सम्यक्-दृवष्ट अथिा तत्त्वज्ञान है।

४७

समि औिध-पिवतयों ों में से कौन-सी पिवत् सबसे अविक प्रभावशाली और अहाविकर है? कृपया कारण सवहत् बतायें।

सभी वचवकत्सा पद्धवतयों ं के अपने-अपने लाभ और हावनयाँ हैं। प्रत्येक की दसररयों ं पर प्रािान्यता है। प्रत्येक की अपनी कवमयाँ हैं। मेरे दृवष्टकोण से आयुिेद का मेरे हृदय में सिोच्च स्थान है। इसका ििन्तरर भगिान् द्वारा प्रवतपादन वकया गया है, जो वक आयुिेद के वपता हैं। आिुवनक समय में वजतने वचवकत्सा विज्ञान हैं, उनमें आयुिेद का स्थान सिोपरर है। इसका प्रभाि स्थायी और अर्बावित है। अन्य अविकांि वचवकत्सा िािों ं का यह मल एिं स्रोत है। जहाँ तक वर्बना देरी के तत्काल उपचार का प्रश्न है ऐलोपैथी (विर्म वचवकत्सा) का स्थान सर्बसे आगे और सर्बसे ऊपर है। होवमयोपैथी सर्बसे अविक हावन रवहत पद्धवत है और मल्य की दृवष्ट से भी सर्बसे सस्ती है।

४८

मैं जप, ध्यान इत्यावद की साधना का अभ्यास करत् रहा हूँ; वकन्तु मेरा मन एकाग्र नही ों हआ, इधर-उधर जात् रहा। मैं इसे वनयस्तित् करने का प्रयत्न भी करत् रहा, वकन्तु सन्तोजनक सफलत् नही ों वमली। वजतनी उन्नवत् मेरी होनी चावहए त्ी, उतनी नही ों हो रही है। क्ा करूँ ?

यवद आप िीघ्र उन्नवत करना चाहते हैं तो आपको और अविक प्रयास करना चावहए था। और अविक जप, िारणा और ध्यान करें। िैराग्य और अभ्यास को र्बढ़ायें। रावत्र के समय सत्संग और कीतवन करें। वनराि न हों; ं समय आने पर आपको पयावप्त सफलता वमलेगी। िीरे-िीरे लगे रहें।

४९

कहत् हैं वक यह त्ो, एक अकेले की एक की ओर उड़ान है। वफर गुरु की अथवा गुरु-कृपा की कहाँ आवश्यकत् रह जात् है? उपवनिदो ों में भी कहा गया है वक ईश-कृपा से ही सब-कुछ होगा।

ईि-कृपा आप कैसे प्राप्त करेंगे? जर्ब आप स्वयं का िुन्तद्धकरण कर लेंगे। स्वयं को अनुिावसत कैसे करना है, यह आप कैसे जानेंगे? उनको ध्यानपिवक देख कर जो पहले परिपणवता-प्रान्तप्त के इस पथ पर चल कर सफलता प्राप्त कर चुके हैं। वजन्होंने इस लक्ष्य को प्राप्त वकया है, िह कौन हैं? यही हैं, वजन्हें गुरु कहा जाता है। अतुः आपको उनसे सहायता लेने की आिश्यकता है। उनके वनजी व्यन्तक्तगत उदाहरण की, उनसे उत्साह और उनकी कृपा प्राप्त करने की आिश्यकता है। अतुः हम इस वनष्कर्व पर पहुँचते हैं वक गुरु और उनकी कृपा, दोनों ं ही आिश्यक हैं। यह सभी कुछ अवनिायव है- आि-कृपा, गुरु-कृपा और ईश्वर-कृपा।

५०

क्ा अडधक बड़ा है-पे्रेम या बुस्ति, भस्ति या ज्ञान ?

अपनी रुबुन्तद्ध को विबे्बे में र्बन्द रहने दें! पे्रेम और र्विेक एक ही हैं। भन्तक्त और जार एक हैं। पे्रेम ज्ञान की ओर ले जाता है। एक, द सरे की सहायता करता है। लोग पुस्तके एद लेते हैं और तकव करना आरि कर देते हैं, यह र्बडा है या िह र्बडा है? यह सर्ब पिवता है। भगिान् पे्रेम और ज्ञान, दोनों ंही हैं। व्यन्तक्त को इन वनरथवक र्बातों ंमें समय नष्ट नही करना चावहए।

५१

स्वामी जी ! मैं लर्नऊ में रहरा् हूँ। यह ऋडिकेश से बहर् डभन्न है। जब मैं ऋडिकेश से लर्नऊ वापस जाऊँगा, र्ो यहाँ के शान्त वार्ावरण की कमी बहर् अडधक लगेगी। वहाँ का वार्ावरण अत्यन्त बनावटी है। मैं वहाँ क्ा साधना करँ ?

क्ों? ं आप िहाँ भी र्बहुत र्बवढ़या सिाना कर सकते हैं। संसार र्बािा नहीं ंहै। आपको िेदान्त का अत्यन्त विसूतृत एिं व्यािहाररक ज्ञान है। रामतीथव जी की ज्वतन्त आिा आप में हैं। ब्राह्ममुहूतव ध्यान कक्षाएँ आरि कर दें। लखनऊ वनिावसयों ंकी इन रूप में आप महान् सेिा कर सकते हैं। मोहल्ले-मोहल्ले जा कर िेदान्त पर प्रिचन को। प्रत्येक मोहल्ले में स्वाध्याय केन्द्र खोलें। क्रम से प्रत्येक मोहल्ले में प्रातुः ब्राह्ममुहूतव में ध्यान-कक्षाएँ चलायें। इससे आप समस्त मानि जावत की और स्वयं अपनी सेिा करेंगे। लोगों ंको उनके जीिन के िास्तविक लक्ष्य के प्रवत जागरूक करें। ऐसा करने से आपकी आिा भी जागरूक रहेगी।

५२

क्ा यह सम्भव है डक कोई जीवात्मा, जो इस जन्म में पुरुि शरीर में जन्मी है, उसका आगामी जन्म स्त्री शरीर में हो ?

हाँ, हो सकता है। विवभन्न िरीर िारण करते हुए जीिािा को विविि अनुभिों ंमें से वनकलना पडता है। पुरुर् िरीर में जीिािा में वनभीकता, र्बल इत्यावद गुणों ंतथा नारी देह में िैयव, दया, क्षमा इत्यावद गुणों ंका अनुभि होता है। इसके अवतररक्त न तो कोई पुरुर्देहािारी पणवतया पुरुर् के गुण वलये होता है और न कोई िी परी तरह से नारी गुणों ंसे सम्पन्न होती है। पुरुर् देह में नारी और नारी देह में पुरुर् भी होते हैं। मनुर्ष् में पिुओं ंके लक्षण भी पाये जाते हैं। कुछ पुरुर्ों ंमें कुत्ते के, वकसी में गिे के, वकसी-वकसी में गीदड के और वकसी में िेर के भी स्वाभाविक लक्षण होते हैं। एक जन्म में जैसा भी गुण मुख्य रूप से विकवसत हो जाता है, आगामी जन्म में जीिािा िैसी ही देह िारण कर लेती है। इसवलए वदव्य गुणों ंको विकवसत करें। आप िीघ्र उन्नत होंगें और अन्ततुः वदव्यता का ही रूप िारण कर लेंगे।

५३

पुनजतन्म के सम्बन्ध में डनष्कितर्: आपके क्ा डवचार हैं? क्ा आप सचमुच पुनजतन्म में डवश्वास करर्े हैं?

क्ा कहा ? वहनद पररिार में जन्म ले कर, अपनी विराओं ंमें महान् ऋवर्यों ंका रक्त प्रिावहत होता होने पर भी क्ा आपके मन में इसके प्रवत कोई सन्देह हैं? हाँ, वनुःसन्देह पुनजवन्म होता है।

सिवप्रथम, ऐसे सैकडों ंचमत्काररक एिं अद्भुत उदाहरण छोटे-छोटे लडके-लडवकयों ंके देखने में आये हैं, जहाँ उनमें अचानक अत्यविक ज्ञान का उदय हो जाता है। एक र्बावलका, वजसने कभी कोई भी पुस्तक नहीं ं पढ़ी, गीता-पाठ करती है। इसका आप इसके अवतररक्त, वक उसने अपने गत जन्म में गीता का पणव ज्ञान प्राप्त कर वलया था और अर्ब परमािा की कृपा से िह ज्ञान इस जन्म में भी उसके चेतन मन में आ गया है, अन्य क्ा स्पष्टीकरण आप दे सकते हैं? और वफर, आिा की उन्नवत अथिा विकास के वलए पुनजवन्म एक आिश्यकता है। पररप णवता को एक ही जन्म में प्राप्त नहीं ंवकया जा सकता। कुछेक म ल-सद्गुण विकवसत करने के वलए भी अनेकों ंजन्म लग सकते हैं। और यवद आपने आि-साक्षात्कार प्राप्त करना हो तो सभी सद्गुणों ंमें पररपणवता प्राप्त करनी पडती है। आपको प णव रूप से आिान्तिद्ध प्राप्त करनी पडती है। अतुः िीिािा के पणवरूपेण विकसन के वलए पुनजवन्म आिश्यक है।

आपने कभी वकसी कीट को िृक्ष के एक पत्ते से द सरे पत्ते पर जाते हुए देखा है? यह एक पत्ते के अन्तन्तम छोर तक पहुँच कर, जर्ब द सरे पत्ते को पकड लेता है, किेल तभी पहले पत्ते को प रा छोडता है। जीि की यात्रा भी इसी प्रकार से है। एक िरीर को छोडने से पहले ही यह अपने कमावनुसार एिं इच्छाओं ंके अनुसार दसरी देह (स्थ ल या स क्ष्म) का वनमावण कर लेता है; और यह अपने समस्त संस्कारों ंएिं िासनाओं ंसवहत नये िरीर में प्रिेि कर जाता है।

५४

मृत्युु और आगामी जीवन के बीच का अन्तराल डकर्ना होर्ा है? इस बीच के समय में जीवात्मा कहााँ रहर्ी है ?

यह अन्तराल सर्बका अलग-अलग होता है। यह दो िर्व का भी हो सकता है, और २०० िर्ों का या इससे अविक समय का भी हो सकता है। कोई वनवश्चत वनयम इसके सम्बन्ध में नहीं ंहै। यवद इस संसार में आसन्तक्त र्बहुत अविक हो, तो मृत्यु के तुरन्त र्बाद ही िीिािा पुनुः जन्म ले सकता है। देहरादन में एक लडकी है वजसे अपने वपछले जन्म की परी स्मृवत है। गत जन्म के चार िर्ों र्बाद उसने पुनुः यह जन्म ले वलया। वजन्होंनें अपने जीिन-काल में र्बहुत से भले कायव वकये हैं, िे इस िरती पर पुन: आने से पहले २०० या ३०० िर्व की अिवि तक स्वगवलोक में रहते हैं।

दुष्ट व्यन्तक्त अन्य दसरे स्थान में जाता है। आप इसे नरक कह सकते हैं, अथिा यह ऐसा स्थान हो सकता है, जहाँ उसे अपने इच्छानुकल सुख-भोग प्राप्त नहीं ंहोते। मद्यपान करने िाले को िहाँ मवदरा नहीं ंवमलती। यह जेल के समान स्थान भी हो सकता है, जहाँ उसे चट्टानें तोडने का अथिा ऐसा ही कोई अन्य कठोर काम करना पड सकता है। वकन्तु वजस व्यन्तक्त ने भले काम वकये होते हैं अथिा जो लोकोपकारक होता है और उसने लोगों ंके वलए कुएँ खुदिाने, िमावथव वचवकत्सालय र्बनाने जैसे सेिा कायव वकये होते हैं, िह व्यन्तक्त स्वगवलोक में जा कर दीघ व काल तक सुख भोगेगा।

५५

यडद आत्मा अमर है, र्ो स्वामी जी, आप अपना जन्म-डदन-जो डक शरीर से सम्बस्तन्धर् है- क्ो ोंमनारे् हैं?

मैं अपना जन्म-वदन नहीं ंमनाता, भक्त मनाते हैं। ऐसे जन्म-वदिसों ंको मनाना परब्रह्म की पजा करने के समान है। गुरु की प जा परब्रह्म की प जा है। भक्तजनों ंको जन्म-वदन मनाने से आनन्द प्राप्त होता है, और ि लाभान्वित होते हैं, उन्नत होते हैं। जर्ब जन्म-वदिस मनाया जाता है तो प्रत्येक िर्व उस वदन से पुनः एक आध्यान्तिक तरंग उत्पन्न हो जाती है तथा अविक-से-अविक लोगों ंको 'द विाइन लाइफ सोसायटी' के और मेरी विक्षाओं ंके सम्बन्ध में जानने का अिसर प्राप्त होता है। जन्म-वदिस महोत्सि समस्त सािकों ंको जीिन का िास्तविक लक्ष्य स्मरण कराने के वलए अनुस्मारक होता है। ऐसे अिसरों ंपर व्याप्त होने िाला भक्तों ंका पिान और ग्रहणीील भाि उन पर गुरु और भगिान् की कृपाि्िृष्ट करता है। जन्म-वदन मनाने के वलए एकवत्रत हुए असंख्य भक्तों ंके हृदयों ंमें उत्पन्न हो कर सिवत्र व्याप्त होने िाली िान्तन्त और भन्तक्त इत्यावद की भािनाएँ िरा पर दर-दर तक पहुँच कर िान्तन्त, सामंजस् और आध्यान्तिकता का विकास करती हैं।

वहनद जो र्बुद्ध जयन्ती, महाीिर जयन्ती इत्यावद के रूप में िावमवक गुरुओं ंऔर सन्त-महााओं ंके जन्मोत्सि मनाते हैं, िह वनरथवक नहीं ंहैं। वहनद पंचांग में ऐसी र्बहुत-सी जयन्तन्तयों ंके तथा अन्य पािन वदनों ंके सम्बन्ध में अंवकत है, वजससे वक ये सर्ब जयन्तन्तयाँ और पािन वदिस लोगों ंको, उनके वलए आिश्यक आध्यान्तिक प्रेरणा प्रदान करें और िे जीिन के परम लक्ष्य-आि-साक्षात्कार को प्राप्त करने के वलए विकवसत उत्साह के साथ लग जायें। वजतने अविक ऐसे पािन वदिस मनाये जाते हैं, उतना ही अविक हमें अपनी आध्यान्तिक उन्नवत की सािना में िृन्तद्ध करने की प्रेरणा के अिसर वमलते हैं।

५६

जब मैं प्रार्तना के डलए बैठर्ा हूँ, र्ो डनम्न मन इधर-उधर भटकर्ा रहर्ा है, डकनुतु दूसरा मन डबना रुके त्रि पाठ करर्ा जार्ा है, क्ोडोंक यह उसका स्वभाव बन चुका है। परनुतु जब मैं पूरा सचेर् हो कर श्लोक उच्चारण करने का प्रयास करर्ा हूँ र्ो कभी-कभी भूल जार्ा हूँ और कई बार र्ो मुझे िोत्र आरम्भ से दोहराना पड़र्ा है। र्ो क्ा मन दो हैं? इस कडठनाई से छुटकारा कैसे हो ?

नहीं।ं मन दो नहीं ंहैं। वकनुतु मन की एकाग्रता िीरे-िीरे र्बढ़ती है, और मन का िह भाग जो आध्यान्तिकता की ओर रुवच रखता है-आप इसे उच्चतर मन कह सकते हैं-िह स्वयमेि सािना में प्रिृत्त हो जाता है, जर्ब वक इसका दसरा भाग, जो सांसाररक संस्कारों ंके प्रवत अविक झुकाि रखता है, िह उन्हीं ंसंस्कारों ंमें उलझा रहता है। स्वभाि की िन्तक्त यन्त्रित् प्राथवनाएँ दोहराती रहती है। वकनुतु आपको चावहए वक उच्चतर भाग को श्लोक के अथों पर एकाग्र करके रखें। जर्ब मन की एकाग्रता न्तस्थर रहेगी तो वनम्न मन को विर्य से भटकने का अिसर कम वमलेगा। लापरिाही से की जाने िाली सािना की सारी समस्ा यह रहती है वक यह यन्त्रित् अथावत् मीीन के समान चलती रहती है और सािक के जीिन में कुछ भी प्रभाि नहीं ंछोड पाती।

५७

क्ा डहन्दू-धमत-ग्रन्ो ोंमें ऐसी भडवष्वाडणयाँ हैं जो पूणत हई हो? यडद हैं, र्ो कृपया उनके सम्बन्ध में बर्ायें।

भगिान् ने हमें सदा के वलए एक िचन दे रखा है वक जर्ब भी कभी िमव की हावन होगी अथावत् िमव पर संकट आ पडेगा और जर्ब अिमव, िमव को नष्ट करने का प्रयत्न करेगा तो िह िमव की रक्षा करने के वलए इस िरा पर अितररत होंगें। उस िचन को प रा करने के वलए िे समय-समय पर अनेकों ंर्बार ऐसे सन्त-महाित्माओं ंके रूप में आते रहे हैं वजहोंनें र्बाह्य आक्रमणों ंसे िमव की रक्षा की है और िमव को नष्ट होने से र्बचाया है। उन्होंनें वहनदि–मव में नयी िन्तक्त और न तन उत्साह का संचार वकया है। इसीवलए वहनदि–मव वनरन्तर समृद्ध हो रहा है। जर्ब भी आिश्यकता होगी, सन्त-महाित्मा आ जायेंगे, कहीं ंआकाि से नहीं,ं प्रतुयुत् यहाँ के लोगों ंमें से ही आयेंगे।

वहनद ि–मव प णवरूपेण केिल एक ही सन्त अथिा िमवदत में विश्वास नहीं ंरखता। पुराणों ंमें भविष् में होने िाली पररन्तस्थवतयों ंके सम्बन्ध में की गयी भविष्र्ियाणयाँ भी सत्य वसद्ध हुई हैं।

५८

यडद मैं ईसामसीह से प्रेम करर्ा हूँ, र्ो क्ा मुझे केवल अकेले उनसे ही प्रेम करना चाडहए; अन्य डदव्यात्माओ,ों यर्ा मदर मेरी और अन्य प्रर्ीको ोंअर्वा मूडर्तयो ोंसे नही ोंकरना चाडहए?

नहीं।ं एकमात्र यीिु के प्रवत ही प्रेम नहीं ंहोना चावहए, भले ही अन्य ईसाई सन्त उन जैसे महान् न भी हों।ं यवद आपमें उनके प्रवत भी श्रद्धा है तो उन्हें यीिु की उसी वदव्यता का प्रकटीकरण मानते हुए, उनकी भी पजा की जा सकती है। भगिान् के सभी 'सन्हेंदिाहक' (सन्त) हमारी श्रद्धा और भन्तक्त के एक-समान पात्र हैं। वकसी के स्वभाि और भािनाओं ंके अनुसार कोई अविक श्रद्धा का पात्र हो सकता है, वकनुतु इसका अथव यह नहीं ंहै वक िह व्यन्तक्त दसरों ंका र्बवहष्कार कर दे। एकमात्र कोई भी एक सन्त या िमवद त भगिान् का आदेि-पत्र ले कर अथिा स्वगव-द्वार की चार्बी ले कर नहीं ंआया है।

५९

मेरा दृढ मर् है डक सोंर्ो ोंसे प्रार्तना करना अर्वा उनकी पूजा करना पूणतर्या गलर् है। उन्होंनें भगवान् से प्रार्तना की और स्वयों अपने डलए मोक्ष प्राप्त डकया, उसी र्रह हम भी डकसी सन्त-महात्मा पर डनभतर डकये डबना अपने डलए मोक्ष प्राप्त कर सकर्े हैं।

नहीं,ं ऐसा नहीं ंहै। सन्त और महाित्मा हमारी श्रद्धा और भन्तक्त के पात्र हैं, क्ोंवक उन्होंनें हमें ईश्वर-साक्षात्कार का मागव वदखाया है। एक नौवसन्तखया, जो अभी-अभी ही नौकरी में प्रविष्ट हुआ है, उससे यह अपेक्षा रखी जाती है वक िह अपने उस िररष्ठ व्यन्तक्त के प्रवत विनम्रता एिं ग्रहणिीलता का भाि रखे, जो उसे प्रविवक्षत कर रहा है, भले ही िह प्रविक्षक भी उसी जैसा एक व्यन्तक्त है। आध्यान्तिक क्षेत्र में भी ऐसा ही है। सन्तों ंको सिान देने से तथा उनकी विक्षाओं ंका अनुसरण करने से आपकी आध्यान्तिक उन्नवत होगी। आप भगिान् को अविक भली-भाँवत जान सकेंगे और प्रेम कर सकेंगे।

६०

कोई व्यस्ति मुझे यह बर्ाने का प्रयास कर रहा है डक (उसके शब्ो ोंमें) 'डनडवतकल्प समाडध केवल एक ऐसी स्नायु-दशा है डजसके सार्-सार् कडर्पय मनःशस्तियो ोंको शस्तिहीन कर डदया जार्ा है।' मुझे क्ा उत्तर देना चाडहए? क्ा इसका कोई उत्तर है?

जो मनुर्ष् वनविवकल्प समावि की ििैता को समझ नहीं ंसकता, उसे समझाने की कोविि करना व्यथव है। तावकवक रुबुन्तद्ध ने भले ही पयावप्त उन्नवत कर ली हो, वकनुतु संियिादी व्यन्तक्त को इस सत्य के प्रवत जागरूक होने के वलए और अविक उन्नत होना पडेगा। ऐसे संियिावदयों ंको उत्तर देने का प्रयत्न करने से पहले व्यन्तक्त को दािवनक वनवहताथों एिं अनुभ वत के रहस्ाकि अथों का भली-भाँवत अध्ययन वकया हुआ होना चावहए।

६१

'दी लाइफ डिवाइन' की एक अत्यन्त दुरुह र्कतशास्त्र से सम्बस्तन्धर् शृ्रोंर्ला में अन्तर्: श्री अरडवन्द महडित ने यह कहर्े हए पररसमास्तप्त की, "और ये सब व्याख्याएँ कुछ भी व्याख्या नही ों करर्ी हैं।" र्ब डफर क्ा सचमुच कोई लाभ है, कोई अर्त है डक इस शब्-जाल की बारीडकयो ोंमें जाया जाये और इनका अनुसरण डकया जाये ?

अन्तन्तम अथों में, िब्द सत्य की व्याख्या नहीं ंकरते; वकनुतु िह संकेत देते हैं वजनके द्वारा व्यन्तक्त सत्य की सीिी अनुभवत प्राप्त कर सकते हैं। िब्दों ंका सापेक्ष मल्य है और उनको वनवश्चत रूप से उपयोग में लाना चावहए, भले ही िह हमारे िास्तविक लक्ष्य की पवतव नहीं ंकरते। सत्य के ज्ञान से सम्बन्तन्धत बािाओं ंको सापेक्ष सािनों ंद्वारा दर वकया जा सकता है और इस प्रकार परम सत्य का साक्षात्कार प्राप्त वकया जा सकता है।

६२

मुझे र्ो ऐसे लगर्ा है डक डकसी भी पूणतर्या डवकडसर् योगी ने कभी भी केवल उच्च, गूढ, अव्यावहाररक अर्वा अन्तदतशी डवियो ोंपर डलर्ने और र्ोड़ी सी रुडच रर्ने वाले लोगो ोंको प्रभाडवर् करने के अडर्ररि सोंसार से सम्बस्तन्धर् अर्वा डवकास से सम्बस्तन्धर् कुछ भी योगदान नही ोंडकया।

र्ब डफर आप, अत्यडधक महान् एवों सवोत्कृष्ट प्रर्ीर् होने वाली अरडवन्द महडित की पुिक 'दी लाइफ डिवाइन' डजसे लगभग कोई भी पढर्ा नही,ों और कोई भी समझ नही ोंसकर्ा, अर्वा 'डटरटाइज़ ऑन कॉडमक्स फायर' पुिक या र्ो आपकी पुिकें, डजनमें से प्रायः सभी ऐसी लगर्ी हैं जो डकसी को भी व्यस्तिगर् रप से अर्वा सामूडहक रप से साोंसाररक दृडष्ट से सहायर्ा नही ोंपहुँचार्ी,ों इन सबके सम्बन्ध में आप क्ा कहर्े हैं?

यह सोचना ठीक नहीं ंहै वक योगी जन केिल वलखते भर ही हैं, िे मानिता की उन्नवत के वलए कभी कुछ नहीं ंकरते। जो सहायता िे करते हैं, उसे सािारण मनुर्ष् समझ नहीं ंसकता, और मनुर्ष् को योवगयों ंसे वकसी वििेर् प्रकार की सहायता की आिा रखने का अविकार भी नहीं ंहै; क्ोंवक योगी िही करते हैं जो िास्ति में अच्छा है, िह नहीं ंजो मनुर्ष् को भौवतक दृवष्ट से सुवििाजनक है। अतीन्तन्द्रय अथिा अवतभौवतक वियों ंसे सम्बन्तन्धत पुस्तकें, जो जीिन का िास्तविक लक्ष्य और उसे प्राप्त करने के ढंग की भली-भाँवत व्याख्या करती हैं, िह संघर्वरत मानिता के वलए अत्यन्त सहायक हैं। योगी जन ऐसी पुस्तकें दसरों ंके भले के वलए, आध्यान्तिक

दृवष्टकोण से और व्यािहाररक दृवष्टकोण से भी वलखते हैं। वकनुतु ि इससे अविक भी र्बहुत कुछ करते हैं, ि र्सिी एिं अदृश्य सहायता पहुँचा देते हैं।

६३

'केवल कुम्भक' कैसे डकया जार्ा है? इसका अभ्यास करना पूरी र्रह से स्पष्ट नही ोंहआ है। इसे 'पूरक और रेचक से रडहर् कुम्भक' कहा गया है। यह समझ नही ोंआर्ा; क्ोडोंक कुम्भक से पहले श्वास को लेना अर्वा छोड़ना र्ो आवश्यक है।

'किल कुिक' के अभ्यास के सम्बन्ध में आपकी उलझन आश्चयवजनक नहीं ंहै; क्ोंवंक प रक या रेचक वकये वर्बना कुिक करना असिि लगता है। वकनुतु इसका अथव यह है वक किल कुिक में श्वास को-अचानक ही वकसी भी क्षण, जर्ब मन एकाग्र होने ही िाला होता है तर्ब-अिरुद्ध कर वलया जाता है।

वकसी ऐसी विविष्ट मानवसक न्तस्थवत के क्षण प्राण का विराम, योगी के वलए ऐसे समय में जर्ब वक उसका मन िारणा के वलए लगभग तैयार ही होता है, अत्यन्त सहायक हो जाता है। अतः 'किल कुिक' िारणा के वलए अनमोल सहायता है। इस प्रकार आप देखेंगे वक इस कुिक की प्रवक्रया में प रक अथिा रेचक की ओर स्वैन्तच्छक ध्यान नहीं ंवदया जाता। इसे हम 'श्वास को अचानक अिरुद्ध' करना कह सकते हैं। योगी सुविचाररत परक अथिा रेचक, 'किल कुिक' से पिव नहीं ंकरता है। जर्ब उसने 'किल कुिक' में जाना होता है तो उस समय श्वास-प्रश्वास की जो भी न्तस्थवत हो, उसकी ओर ध्यान न देता हुआ 'किल कुिक' में चला जाता है। यह उस समय परक के मध्य में अथिा रेचक के मध्य में कहीं ंभी हो सकता है। श्वास अिा अन्दर अथिा अिा र्बाहर भी हो सकता है। यह भी हो सकता है वक श्वास परा वलया जा चुका हो अथिा प रा छोड वदया गया हो। श्वास की चाहे जो भी न्तस्थवत हो, जैसे ही एकाग्रता होने लगती है, उसी समय ध्याता, 'किल कुिक' में तत्काल श्वास को रोक देता है। मुझे विश्वास है वक अर्ब आप भली-भाँवत समझ गये होंगें।

६४

योग के ज्ञान का प्रचार करने के मेरे कायत में आप मुझे कोई डवशेि परामशत देंगे ?

व्यािहाररक योगाभ्यास सम्बन्धी वनदेिन देने के साथ-साथ सदैि सदाचार, यम और वनयमों ंके महत्त्व पर पयावप्त र्बल दें। विद्यावथवयों ंको उदात्त आदिविाद की प्ेरेरणा दें। उनको उदात्त सद्गुण अपनाने, भलाई करने और वनष्काम कमव करने के वलए प्ेररत करते रहें। आपको उनके वलए वनवश्चत रूप से आत्म-िुन्तद्ध और स्व-वनयन्त्रण की आिश्यकता पर र्बल देना चावहए। मनुष् की मलभत प्रकृवत में रूपान्तरण लाना ही िास्तविक आन्तररक योग है। मानि को, सम्पणवतया आध्यान्तत्मकीकरण करने की प्रवक्रया के द्वारा उसके वनम्नतर स्वभाि का स्थान िीरे-िीरे उज्ज्वल वदव्य स्वभाि को ले लेना चावहए। यह सर्ब अत्यन्त प्रभािपणव ढंग से, वकनुतु साथ ही अत्यन्त सहानुभवत, समझदारी एिं सक्ष्म दृवष्ट से करना चावहए। उद्देश्य तो वदव्य चेतना प्राप्त करना है।

६५

जब डचडकत्सक भी असफल हो जार्ेहैं र्ब् क्ा प्रार्तना रोगो ोंको दूर कर सकर्ी है? क्ा यह सत्य है डक प्रार्तनाओ ोंद्वारा ऐसी बहर्-सी बार्ें हो सकर्ी हैं डजनको यह सोंसार स्वप्न में भी नही ोंसोच सकर्ा ?

वचवकत्सक तथा और्वियाँ किेल भगिान् के हाथ के उपकरण हैं। जर्ब तक भगिान् न चाहें कोई भी व्यन्तक्त रोगी का उपचार नहीं ंकर सकता, और कोई भी रोग-मुक्त नहीं ंहो सकता। मनुर्ष् को पररश्रमपिवक और ियिपिविवक अपनी ओर से हर सिंि प्रयास करना चावहए, वकनुतु प्रत्येक पररणाम के वलए परमेिा की कृपा पर वनभवर रहना चावहए। कष्ट को िान्तन्तपिवक सहन करना और उसे भगिान् का भेजा हुआ िरदान मान लेना, ज्ञान है। प्राथवना व्यन्तक्त की अन्तवनवहत िन्तक्तयों ंको जागृत कर देती है। यह भगिान् द्वारा प्रिावहत होने िाली िन्तक्तयाँ ही हैं जो वनवश्चत रूप से चमत्कार कर सकती हैं।

६६

आपने कहा है डक डनवृडत्त-मागत के साधको ंको या र्ो बैंक में र्ोड़ा-बहर् धन रर्ना चाडहए, नही ंर्ो उसे डभक्षावृडत्त पर डनभतर रहना चाडहए। अब मेरे पास न र्ो धन है और न ही मुझे डभक्षा के डलए हर दरवाजे पर जाना अच्छा लगर्ा है; डकनुतु मुझे सोंन्यास लेने की र्ीव्र इच्छा है। क्ा आप मेरी यह डपपासा शान्त करने का ढोंग बर्ाने की कृपा करेंगे?

समस्त भारत में ऐसे र्बहुत से र्बवढ़या से र्बवढ़या आश्रम हैं, जहाँ वनष्काम सेिा सवहत कायव चलते हैं। उन्ें सदा ही सच्चे और समथव कायवकतावओं ंकी आिश्यकता रहती है। आप ऐसे वकसी भी आश्रम में रह सकते हैं और िहाँ आश्रम की गवतविवियों ंमें सहायता कर सकते हैं। िहाँ िे आपकी आिश्यकताओं ंका ध्यान रखेंगे। वकनुतु एक से दसरे आश्रम में स्थान न र्बदलते रहें। आप अपनी रुवच के अनुसार वकसी भी एक का चयन कर लें और वफर िहीं ंपर स्थाई रूप से रहें।

६७

मैंने पढा है डक डकसी एक गुरु से दीक्षा प्राप्त कर लेने के बाद भी यडद उस व्यस्ति को कोई बहर् अडधक अच्छा व्यस्ति डमल जार्ा है, र्ो वह उस व्यस्ति का डशष् बन सकर्ा है; और अब भले ही वह पहले वाले व्यस्ति का डशष् नही ंरहा है, र्ो भी उसे उस व्यस्ति का सम्मान करना चाडहए। आपके इस डविय में क्ा डवचार हैं?

संसार में अविकांि लोगों ंको यह सौभाग्य प्राप्त नहीं ंहोता वक िे ब्रह्मवनष्ठ सन्तों ंके सम्पकव में आ सकें। उनके साथ प्रायः ऐसा हो जाता है। र्बहुत से पररिारों ंमें प्रायः कुलगुरु र्बनाने की परम्परा होती है और ऐसे हर पररिार का अपना-अपना कुलगुरु होता है तथा उस पररिार में उत्पन्न होने िाले व्यन्तक्त को उसी गुरु को अपना गुरु मानना पडता है। यह व्यन्तक्त िािों ंमें र्बताये गये स्तरों ंके अनुसार वकसी भी प्रकार से गुरु कहलाने के योग्य नहीं ंहोता। यह आध्यान्तिक व्यन्तक्तत्व-सम्पन्न भी नहीं ंहोता, किेल एक िावमवक व्यन्तक्त होता है। यह ईश्वर- साक्षात्कार प्राप्त नहीं ंहोता; वकनुतु पद खाली न रहे, इस दृवष्ट से उसे िावमवक नेता के रूप में वनिावररत कर वलया जाता है। सािक वजज्ञासु उससे दीक्षा प्राप्त करके अपना गुरु मान लेता है और उसके उपदेिानुसार सािना आरि कर देता है तथा िह कुछ सीमा तक उन्नवत भी कर जाता है। वकनुतु यह किेल िहीं ंतक ही हो पाती है, जहाँ तक िह गुरु पहुँच सका होता है। उस स्तर से आगे ले जाने की क्षमता उसके गुरु में नहीं ंहोती, क्ोंवक िह ईश्वर-साक्षात्कार प्राप्त व्यन्तक्त नहीं ंहै। ऐसी न्तस्थवत में यवद सािक को उच्चतर स्तर तक पहुँचे हुए गुरु का सम्पकव प्राप्त हो जाये, तो िह वनवश्चत रूप से उसका विर्ष् र्बन सकता है। िास्ति में यवद िह पहला गुरु एक सच्चा एिं वनष्कपट व्यन्तक्त है तो िह स्वयं ही अपने उस विर्ष् को अविक उपलन्तब्ध प्राप्त गुरु के चरणों ंकी ओर वनवदवष्ट कर देगा।

यवद यह गुरु र्बदलने का प्रश् ऐसे सिाक के मन में उठता है वजसने ऐसे गुरु से दीक्षा प्राप्त की हुई है जो उच्चतम न्तस्थवत तक पहुँचा हुआ है, तर्ब वफर कमी सिाक में है, गुरु में नहीं। और ऐसी न्तस्थवत में सिाक यवद अन्य गुरु के पास चला भी जाये, तो भी उसकी कमी प री नहीं हो सकती। उसे वनवश्चत रूप से अपनी कमी द र करनी चावहए और एक ही गुरु के प्रवत वनष्ठा रखनी चावहए। गुरु परिवतवत करने की अपनी इच्छा को दृढ़ताप िवक हटा देना चावहए।

ïि हिमें र्बताते हैं वक यवद हमने एक र्बार ब्रह्मवनष्ठ सन्त को अपना गुरु मान वलया है, तो हमें अपनी वनष्ठा को र्बदलना नहीं चावहए। आध्यान्तिक सम्बन्ध िाश्वत होता है। यवद सिाक उसे तोडने का प्रयत्न करता है और अन्य सभी तरह के वसद्धों एिं ज्ञावनयों के पीछे भागता वफरता है, तो िह अपने पथ पर एक इंच भी आगे नहीं र्बढ़ सकता। उपवनर्दों के मन्त्र में इस सम्बन्ध में अत्यन्त सुन्दर ढंग से कहा गया है :

यस्य देवे पराभस्तियतरा् देवे र्ा गुरौ।
सैर्यैरे् कडर्ा् ह्यरा्तः प्रकाशने्ते महात्मनः ।।

अथावत् भगिान् के प्रवत वजसकी परम भन्तक्त है और उतनी ही भन्तक्त अपने गुरु के प्रवत है, उसके समक्ष उपवनर्दों के सत्य स्वयमेि ही प्रकट हो जायेंगे। यवद भगिान् के प्रवत भन्तक्त को परिवतवत नहीं वकया जा सकता, तो गुरु के प्रवत भन्तक्त को भी परिवतवत नहीं वकया जा सकता।

एकलव्य के महान् उदाहरण को न भ लें। उसने तो अपने गुरु के दिवन तक नहीं वकये थे, वफर भी उसकी भन्तक्त इतनी महान् थी वक उसने अपने गुरु की प्रवतमा र्बना कर रख ली और उसकी भािना इतनी गहन थी वक गुरु की वमट्टी की प्रवतमा ने ही उसे िर विद्या के गुप्त रहस्ों में पारंगत कर वदया। िास्ति में भाि का ही मुख्य महत्त्व है।

हाँ, उपगुरु अनेकों हो सकते हैं। भागित में िवणवत अििि त के आख्यान से हमें यही विक्षा वमलती है। हमें सभी सन्तों का सिान करना चावहए। आध्यान्तिक गुरु हममें आध्यान्तिकता का र्बीज र्बो देते हैं। अर्ब हमारा कतवव्य है वक उसे जल से सींचें, तावक िह हमारे भीतर विकवसत हो और ठीक समय पर हमें आि-साक्षात्कार का फल प्रदान करे।

६८

मैं अपने सोने का समय कम करना चाहरा् हूँ और डनद्रा पर भी डनयिण करना चाहरा् हूँ। क्ा मुझे इसके डलए डकसी औडध की सहायरा् ले लेनी चाडहए?

और्वि की सहायता से आपको वनिा कम करने का प्रयास नहीं करना चावहए। इससे तो आपकी िरीर-व्यिस्था वर्बगड जायेगी। िरीर को वनिा के द्वारा पयावप्त आराम वदलाना अत्यन्त आिश्यक है। जर्ब आप वनयवमत रूप से गहन समावि में प्रिेि करने लग जाते हैं, तो िरीर-प्रणाली को स्वयमेि ही पयावप्त आराम वमल जाता है, तर्ब वनिा को घटाया जा सकता है। इससे आपके स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाि नहीं पडेगा।

वनिा को अत्यन्त िीरे-िीरे तथा साििानी से कम करना चावहए। पहले, एक मास तक ९.३० पर सोयें और प्रातः ४ र्बजे उठ जायें। एक मास के र्बाद १० र्बजे सोयें और सुर्बह ३.३० र्बजे उठ जायें। वफर एक मास के र्बाद १०.३० र्बजे सो जायें और प्रातः ३ र्बजे उठना आरम्भ कर दें। इस प्रकार आप िीरे-िीरे अपनी नींद घटा सकते हैं। वदन के समय सोना वनवश्चत रूप से र्बन्द कर देना चावहए।

६९

यवद भगिान् सिवसमथव और सिविन्तत्तमान् हैं, तो िह ऐसा क्ों ंनहीं ंकरते वक प्रत्येक व्यन्तत्त अपना-अपना काम ठीक तरह से करे?

प्रत्येकव्यन्तत्तअपना कामठीक प्रकार से ही करता है। चोर वनवश्चतरूपसे चोरी करताहै। दुष्ट व्यन्तत्त अिश्य ही दुष्कमव करता है। यह कतवव्य कमव हैं। याद रखें, यह संसार वत्रगुणिाक और सापेक्ष्य है। पूाँ की प्रत्येक गवत, प्रत्येक कदम सत्-वचत्-आनन्द की ओर का ऊर्ध्वगामी प्रयास है। विश्व एक सापेक्ष्य जगत् है। िेश्याएूँ, सन्त, दुजवन, राजा और रंक सभी अपने-अपने वनवश्चत कामों ंमें लगे हुए हैं। अच्छाई और रुबुराई सापेक्ष्य ब्दिावलयाूँ हैं। रुबुराई का अन्तस्तत्व भलाई को मवहमान्तित करने के वलए है। घृणा का अन्तस्तत्व पे्रम को मवहमान्तित करने के वलए है। एक दुष्ट व्यन्तत्त सदैि दुष्ट ही नहीं ंरहता। यवद उसे सही सान्तत्त्वक लोगों ंके साथ में रखा जाये तो पलक झपकते ही िह सन्त र्बन सकता है।

७०

यडद भगवान् न्यायी और दयालु हैं, र्ब डफर सोंसार में इर्ने दु:र्् और कष्ट क्ो ोंहैं? कई बार हम देर्े् हैं डक भले लोग कष्ट भोग रहे हैं और धोर्ेबाज लोग सुर्् पा रहे हैं। इसके डलए आप क्ा कारण बर्ायेंगे ?

संसार के कष्ट व्यन्तत्त की आूँखें खोल देते हैं। यवद संसार में दु:ख-ददव न होते तो कोई भी मोक्ष के वलए प्रयत्न न करता। कई र्बार भगिान् के िरदान ही कष्टों ंका िेि िारण करके आते हैं।

महिाा लोग कष्टों ंको भगिान् के आिीिावद के रूप में लेते हैं; क्ोंवंक यह उनमें सहनिीलता और दया की भािना को विकवसत करते हैं और हर समय प्रभु का स्मरण र्बनाये रखने में सहायता करते हैं। इसीवलए िे कष्टों ंका स्वागत करते हैं। िे सांसाररक सुख-भोग और समृन्तद्ध को नहीं ंचाहते। उनका दृवष्टकोण र्बदल चुका होता है। िे सुख या दु:ख-दोनों ंमें ही सदा अपना मानवसक सनुतुलन र्बनाये रखते हैं। आप उनकी मनु:न्तस्थवत को समझ नहीं ंसकते। hat a कष्टों ंमें भी प्रसन्न होते हैं। आपका मन अभी सांसाररक है। आप इन र्बातों ंको नहीं ंसमझ सकते।

७१

मोक्ष-प्रास्तप्त के डलए समदृडष्ट अडनवायत बर्ायी गयी है। इस सम्बन्ध में यडद आप बर्ायेंगे डक 'अछूर्वाद' का क्ा महि है, र्ो मैं आपका अत्यन्त धन्यवादी होऊुँगा। मैं अत्यन्त रडढवादी डसिान्तो ोंको मानने वाला हूँ। यडद एक गज दूरी से भी कभी मेहर्र या अछूर्् डदर्् जाये र्ो मैं उसी समय स्नान करर्ा और कपड़े धोर्ा हूँ। कृपया बर्ाइए डक क्ा इन डनयमो ोंका पालन करना चाडहए?

भगिान् से प्राथवना करें वक आपके जीिन में िह वदन िीघ्र लायें जर्ब आप वकसी झािू िाले को देखते ही एकता की भािना से भरे हुए उसे हर्षपिवक गले लगा लेंगे। िह वदन महान् होगा। आपका हृदय अत्यन्त छोटा, र्बद्ध और संकुवचत है। इसे वििाल र्बनाने का प्रयत्न करें। िीरे-िीरे 'अछतिाद' को मन से वनकाल दें। नहीं ंतो यह आपकी आध्यान्तिक उन्नवत के वलए र्बहुत र्बडी र्बािा र्बन जायेगा। आपको इसमें र्बहुत अविक समय लगने की

ि़सिाना है। 'अछतिाद' के विचार ने आपके भीतर र्बहुत गहरी जडें जमायी हुई हैं। मानि को मानि से अलग करने िाले इन सर्ब र्बन्धनों ंको इसी क्षण कठोरता से तोड िालें। आप िणवनातीत आनन्द एिं परम िान्तन्त अनुभि करेंगे।

७२

जब कुण्डडलनी जाग्रर् हो जाये, र्ो उसे डवडभन्न चक्रो ोंमें से होर्े हए सहस्रार र्क कैसे ले जाया जार्ा है और डफर योगी जहाँ उसकी इच्छा हो, उस चक्र-डवशेि पर उसे कैसे रोक कर रर् सकर्ा है? और डफर पुनः डवडभन्न चक्रो ोंसे होर्े हए मूलाधार र्क उसे वापस कैसे लार्े हैं। कृपया मुझे कुण्डडलनी की गडर्यो ोंके सम्बन्ध में बर्ाइए।

आपको योवन मुिा के अभ्यास के द्वारा कुण्डवलनी को सहस्रार चक्र पर ले जाना पडेगा। यवद आप परी तरह से इच्छाहीन हो जायें, यवद िासनाओं ंका पणवतया क्षय हो जाये, तो कुण्डवलनी वर्बना वकसी प्रयास के, पवित्रता की िन्तक्त से अपने-आप ऊर्ध्वगमन कर जायेगी। प्रारब्ध की िन्तक्त से कुण्डवलनी का स्वयं ही अिैगमन हो जायेगा। यह स्वयं प्रत्येक चक्र पर रुकेगी। आपको इसे कहीं ंन्तस्थर करने का प्रयास करने की आिश्यकता नहीं ंहै। आपके वलए अविक अच्छा होगा वक योग के इन रहस्ों ंको सीखने के वलए वकसी योग्य गुरु के सही वनदेिन में रहें। कुण्डवलनी जाग्रत करने और उसे सहस्रार तक ले जाने का प्रयास करने से पहले प री तरह से सदाचारी जीिन जीने का प्रयास करें। वफर जर्ब आप इस पथ पर चल पडते हैं और सच्चाई से सािना अथिा योगाभ्यास करने लग जाते हैं, तर्ब आप स्वयं ही जान जायेंगे वक कुण्डवलनी को एक चक्र से द सरे चक्र पर कैसे ले जाया जाता है। विसूतृत जानकारी के वलए मेरी पुस्तक 'कुण्डवलनीयोग' को देख सकते हैं।

७३

क्ा इस डवश्व की सोंरचना, अणुओ ोंके परस्पर सोंघार् से सोंयोगवश हए सोंगठन से हई है ? मेरी प्रार्तना है डक मुझे सृडष्ट के डवकास-क्रम के सम्बन्ध में बर्ाने की कृपा करें।

यह विश्व अणुओं ंके परस्पर संघात से संयोगिि हुए संगठन का पररणाम नहीं ंहै। विवभन्न दिवनों ंके अनुसार सृवष्ट के विकास-क्रम के वसद्धान्त अलग-अलग हैं, तथावप इनमें सर्बसे अविक मान्यता िेदान्त के वसद्धान्त की है। इसके अनुसार, यह विश्व एक सुव्यिन्तस्थत जैविक इकाई है, वजसको संचावलत करने िाली, उसके पीछे वनवहत एक सिवज्ञ एिं सिवव्यापक सत्ता है। व्यिहाररक दृवष्ट से यह दृश्य जगत् सािभौम चैतन्य सत्ता के द्वारा प्रेररत की गयी मल अव्यक्त प्रकृवत का क्रवमक विकास है। मल अव्यक्त प्रकृवत के कायव िसुतुगत दृवष्ट से, पंचतन्मात्राएँ (िब्द, स्पिव, रूप, रस और गन्ध), जो वक पंचमहाभतों ं(आकाि, िायु, अवग्न, जल और पृथ्वी) को जन्म देती हैं, और व्यन्तक्तपरक दृवष्ट से अन्तुःकरण चतुष्टय (मन, र्बुन्तद्ध, वचत्त और अहंकार), ज्ञानेन्तन्द्रयाँ, कमेन्तन्द्रयाँ, पंचप्राण और स्थल िरीर हैं। ये सभी, जो वक अव्यक्त के कायव हैं, सत्य प्रतीत होते हैं, यद्यवप िास्ति में ऐसा नहीं ंहै; क्ोंवक ये सभी कायव एक ही सिवव्यापक िुद्ध चैतन्य के ऊपर आिाररत हैं। पारमावथवक दृवष्ट से मन की अन्तस्थर कल्पना के द्वारा र्बनाये गये एक क्षवणक र्बाह्य रूप के अवतररक्त िसुतुतुः यह दृश्य जगत् कुछ है ही नहीं।ं

७४

यडद एक व्यस्ति पूणत गुरु है, र्ो वह एक-सार् ही समय के सभी िरो ोंपर कायत कर सकने में सक्षम होर्ा है। उसमें अर्ीस्तिय-दशतन एवों अर्ीस्तिय-श्रवण की असाधारण शस्तियााँ होर्ी हैं। अपने डवद्यार्ी के बोलने से पहले ही, प्रश्न पूछने के डलए मुर् र्ोलने से पहले ही क्ा वह उसके मन की बार् नही ोंसमझ सकर्ा, जैसे डक श्री रामकृष्ण परमहोंस कर सकर्े र्े? क्ा डजसमें ये शस्तियााँ हो,ों या केवल मन के डवचार जान लेने की शस्ति ही हो, उसे गुरु कह सकर्े हैं?

अतीन्तन्द्रय-दिवन और अतीन्तन्द्रय-श्रिण सदा ही यन्त्रित् चलती रहने िाली प्रवक्रयाएूँ नहीं ंहैं। जर्ब तक गुरु अपना ध्यान वकसी की ओर केन्तन्द्रत नहीं ंकरता, तर्ब तक यह आिश्यक नहीं ंहै वक उसे सािक के मानवसक वचन्तन एिं संियों ंके सम्बन्ध में जानकारी हो। ऐसे गुरु की दिा की कल्पना करें, वजसे हर समय यह पता चलता रहता हो वक प्रत्येक व्यन्तक्त क्ा सोच रहा है! समावि की अिस्था में वसद्ध महािा सर्ब-कुछ देखता और सुनता है। दसरे व्यन्तक्त के विचार जान लेने इत्यावद जैसी िन्तक्तयाूँ प्राप्त कर लेने का अथव वनवश्चत रूप से पररपणवता प्राप्त कर लेना नहीं ंहै। साथ ही इन िन्तक्तयों ंके न होने का अथव भी पररपणवता प्राप्त न वकये होना है। पणव गुरु यवद चाहे, तो ये न्तिक्तयाूँ प्राप्त कर सकता है; वकनुतु आप उसे ऐसा करने के वलए र्बाध्य नहीं ंकर सकते।

७५

ऐसे व्यस्ति के डलए आपका क्ा परामशत होगा, डजसे पररस्तस्र्डर्वश दूसरी बार दीक्षा लेनी पड़ गयी हो, डकनुतु उसे अभी भी दीक्षा में श्रिा न हो ? इसका पररणाम आकितण और डवकितण- दोनो ोंकी डमडश्रर् भावनाओ ोंका उत्पन्न हो जाना है। बचपन से मन में बैठे हए अचे्छे डसिान्तो ोंऔर अब डकसी के बर्ाये गये डवश्वासो ोंके बीच मन में सोंघित डनरन्तर चलर्ा रहर्ा है और अडनिय बना रहर्ा है। ऐसी स्तस्र्डर् में यडद आत्मा की आवाज कड़ा डवरोध प्रकट करे, र्ो आप क्ा परामशत देंगे ?

अपनी भिानाओं ंको अथिा मन की सुफुरणाओं ंको आिा की आिाज समझने की गलती न करें। जर्ब पयावप्त समय तक आप अपने विचारों ंको िान्त रख सकने की कला में वनपुण हो जायें, किल तभी आिा की आिाज सुन सकने की क्षमता प्राप्त हो गयी समझ सकते हैं। और जर्ब यह आपको सुनने लग जाती है, तर्ब आप स्वयमेि ही इसके वनदेिों ंका अनुसरण करने लग जाते हैं और सभी संिय वमट जाते हैं। दुविािाओं ंका वनिारण करने का एकमात्र उपाय दृढ़वनश्चयता है। और जर्ब तक दुविािा रहती है, तर्ब तक दृढ़वनश्चय होना कवठन है। आपको अपनी संकल्प–िन्तक्त का उपयोग करना होगा और परस्पर दुविािा उत्पन्न करने िाले विचारों ंमें से वकसी एक-जो आपके विचारानुसार, अथिा वजस पर आपको विश्वास है, के विचारानुसार गलत है-को वनकाल फेंकना होगा।

७६

कडलसन्तरणोपडनिद् में यह कहा गया है डक इस कडलयुग में पापो ोंके डवनाश के डलए एकमात्र उपाय महामि का जप करना है। डकनुतु इस मि में दो नाम आर्े हैं, 'हरे राम' और 'हरे कृष्ण' । ये दोनो ों नाम डभन्न-डभन्न हैं, और यडद भि दो अलग-अलग इष्टो ोंका नाम जप करर्ा है, र्ो क्ा यह व्यडभचाररणी भस्ति नही ोंहो जायेगी? और डफर, इस मि का जप करर्े समय वह भि डकस के रप पर मन एकाग्र करेगा, डकसका ध्यान करेगा ?

यह व्यवभचाररणी भन्तक्त के समान नहीं ्है। व्यवभचाररणी भन्तक्त तो यह है वक कुछ क्षण भगिान् की पजा करना और वफर ि्र् सारा वदन र्बच्चों,् पत्नी, िन-सम्पवत्त इत्यावद को प्ेरेम करते रहना। राम और कृष्ण के नामों ्के पीछे आिार स्वरूप परम इष्ट तो एक ही हैं, िह हैं भगिान् विषुणु। ध्यान के वलए आप अपने झुकाि, अवभरुवच अथिा श्रद्धा के अनुसार भगिान् श्री कृष्ण अथिा श्री राम में से वजसको भी चाहें, रख सकते हैं।

७७

शीघ्र आध्यास्तत्मक सफलर्ा के डलए आप अपने डशष्ो ्ोंको कैसे प्रडशडक्षर् करर्े हैं?

दवर्त सांसाररक संस्कारों ्को प री तरह से ि्ुारने के सिक्त उपाय के तौर पर, मैं अपने विद्यावथवयों ्को कुछ महीनों ्या ि्र्ों के वलए अपने-आपको सवक्रय सिा में लीन कर देने के वलए कहता हूँ। प्रविक्षण का समय प्रत्ेयेक विद्याथी के विकास के अनुसार अलग-अलग होता है। उन सर्बको खाना पकाना, र्बतवन कपडे िोना तथा रोगी की देख-रेख करना वनवश्चत रूप से आना ही चावहए। उन्ें सािु-संन्यावसयों ्की सिा हर सि्ि रूप से करनी ही चावहए। इसके साथ-साथ उनमें सभी योगाभ्यास, एकाग्रता, जप, ध्यान इत्यावद को सीखने की क्षमता आनी चावहए। उन्ें योग और दिवन ि्ाि पर लेख वलख सकने की योग्यता वनवश्चत रूप से विकवसत करनी चावहए। उनको कीतवन करना तथा प्रिचन देना भी आिश्यक रूप से आ जाना चावहए। मैं उन्ें इन सर्बके सम्बन्ध में भी प्रविक्षण देता हूँ। उन्ें कुछेक सािारण रोगों ्के उपचार के सम्बन्ध में प्रविवक्षत कर देता हूँ। और जर्ब यह देखता हूँ वक विद्याथी अर्ब अपनी इन्तन्द्रयों ्पर संयम करने में सक्षम हो गये हैं और िारणा और ध्यान में आगे र्बढ़ गये हैं, साथ ही अर्ब उनमें समस्त सान्तत्त्वक गुणों ्का विकास हो चुका है, तर्ब मैं उन्ें गहन ध्यान में उतरने के वनदेिन दे कर वकन्हीं ्िीतल एकान्त स्थलों ्में भेज देता हूँ।

७८

मैं यह जानना चाहता हूँ वक हमें क्ों ्र्बनाया गया है और वफर र्बना कर इस दयनीय एिं दु:खद दिा में क्ों ्िाल वदया गया है? आप तकव देंगे वक आपका न कभी जन्म हुआ है और न ही कभी मृतुयु होगी। तर्ब वफर हम सर्ब, संस्कारों ्और माया के पाि से मुक्त अपनी पणव-पररिुद्ध, सिविन्तक्तमान् अिस्था में क्ों ्नहीं ्है?

इस प्रकार के प्रश्, अवत-प्रश्-दुर्बोि प्रश् हैं-वजनका उत्तर खोजने के वलए, आप भले ही सहस्ों–लाखों ्िर्व विर फोडते रहें, वकनुतु वफर भी नहीं ्जान पायेंगे। र्बुन्तद्धमान् लोग इस सृवष्ट के 'क्ों'् और 'कैसे' प्रश्ों ्के पीछे नहीं ् जाते हैं। यवद एक छोटा-सा र्बालक अपने वपता से प्रश् पछे, "पापा, आपने मुझे कैसे उत्पन्न वकया?" तो वपता जी क्ा उत्तर देंगे। िह तो केिल इतना ही कहेंगे, “प्रतीक्षा करो, जर्ब तुम र्बालक से पुरुर् र्बन जाओगे तर्ब यह अपने-आप समझ जाओगे।" तुम्हारी और तुम्हारे जैसे और र्बहुत से सािकों,् वजनमें प्रकाि प्रिे करने का अभी प्रयत्न कर रहा है, की यही न्तस्थवत है। गाडी को घोडे के आगे जोतने जैसी उल्टी र्बात न करें। आि-साक्षात्कार प्राप्त करें। तर्ब आपको ये सर्ब प्रश् समझ आ जायेंगे। अभी इस समय तो गिीरतापिवक स्वयं को सािना में लगा दें और मल, विक्ेषेप एिं आिरण को दर हटा दें। इन विर्यों ्के सम्बन्ध में व्यथव के तकव-वितकों ्में न फूँसें। आप मुझसे दिवन िाि के अन्य विर्यों ्से सम्बन्तन्धत प्रश् पछ सकते हैं। आप जहाँ-कहीं ्भी जायेंगे, इस विर्य में आपको यही उत्तर वमलेगा। आप मेरी र्बात समझ गये हैं न?

७९

एक राष्टर का चररत्र अपनी भूर्पूवत मडहमा में पुनः डकस प्रकार उद्धाडसर् हो सकर्ा है?

जहाँ तक भारतिर्व की र्बात है, यह ि सुतुतः एक आध्यान्तिक दि है। प्राचीन समय में सिवत्र आश्रम हुआ करते थे जो वदव्य आदिों से स्पन्तन्दत तथा ऐसे श्रद्धास्पद आचायों से भरप र होते थे जो प णवतया व्यािहाररक एिं साक्षात्कार प्राप्त वकये हुए होते थे। उन आचायों के विर्ष् तक अत्यन्त उन्नत तथा अपने गुरु के उपदिों ं के प्रवत अत्यन्त ग्रहणिील थे। इस ितवमान युग में हास का मुख्य कारण है पवश्चमी सभ्यता की अन्धािुन्ध नकल। उनके आिुवनक रहन-सहन एिं व्यिहार को वर्बना यह सोचे-विचारे वक ि ह हमारी नैवतक, भौवतक, मानवसक और आध्यान्तिक उन्नवत में कहाँ तक सहायक हैं और परम पररप णवता अथिा मोक्ष, जो वक जीिन का मुख्य एिं एकमात्र उदे्देश्य है, को प्राप्त करने में वकतने सहायक हैं, उनकी नकल करना है। जो कुछ द सरों ं में र्बहुत र्बवढ़या है, शे्रष्ठ है, उसका अनुकरण करने की उपेक्षा कर देने में तो आिुवनक व्यन्तक्त कुिल है; वकन्तु जो उसके नैवतक विकास को भ्रष्ट कर देने िाला है, उसे ग्रहण करने को तत्पर रहता है। ऐसी न्तस्थवत में विश्व के हर कोने में, वििेर् रूप से भारत में आश्रमों ं की संख्या में पयावप्त मात्रा में िृन्तद्ध होनी चावहए। आध्यान्तिकता भारत का जन्मवसद्ध अविकार है, यद्यवप अन्य वकसी दि के वलए भी इसमें कोई र्बािा नहीं ं है। अतः भारत को इस वदिा में पहल करनी चावहए तथा विश्व के उन कोनों, ं जहाँ भौवतकिाद का अन्धकार व्याप्त है, को प्रकावित करना चावहए।

द सरे, वकसी भी िमव में भेदभाि वकये वर्बना, प्रत्येक के वलए िावमवक विक्षा आिश्यक कर दी जानी चावहए। िावमवक असवहषु्णुता र्बहुत से युद्धों, ं ितु्रताओं ं और मतभेदों ं इत्यावद का एक कारण रहा है। लडका हो या लडकी, िी हो या पुरुर्, विक्षा प्रत्येक व्यन्तक्त को वनःिुल्क एिं अवनिायव रूप से दी जानी चावहए। िा और मिव, विज्ञान और िमव, जुडिाँ र्बहनों ं की भाँवत, आिुवनक सांसाररक उन्नवत में वर्बना वकसी प्रकार की र्बािा पहुँचाये, साथ-साथ चलते रहने चावहए।

लोगों ं को यह समझ में आना चावहए वक वकसी भी प्रकार का कमव, यवद िह िमव के विपरीत कमव नहीं ं है, तो िह मोक्ष के लक्ष्य को प्राप्त करने के मागव में र्बािक नहीं ं है, और उन्ें अपनी रुवच के अनुसार अपने-अपने के्षत्र में उन्नवत करने की प री छ ट दी जानी चावहए। प्राचीन काल की प्रथाएँ, यवद िह विकास-पथ में र्बािक नहीं ं हैं, तो उन्ें हर प्रकार से सुरवक्षत रखा जाना चावहए, वििेर् रूप से जो हमारे भारतिर्व की प्राचीन मवहमा का स्मरण वदलाने िाली हैं। िैज्ञावनक उन्नवत के नाम पर उद्योगों ं के और जीविकोपाजवन के प्राचीन सािनों ं को प णवतया त्याग नहीं ं वदया जाना चावहए, र्बन्तल्क उन्ें पहले की तरह चलते रहने वदया जाना चावहए, क्योंवक केिल उनको र्बनाये रखने में ही जीिन का निीनीकरण वनवहत है। आध्यान्तिकता के के्षत्र में आश्रम जो आदिव िीर पुरुर्ों ं का वनमावण करें, उन्ें चावहए वक िे समय-समय पर अपने आश्रमिावसयों ं को यात्राओं ं पर भेज कर आिज्ञान का प्रचार-प्रसार करें।

समय-समय पर आध्यान्तिक सम्मेलन वकये जाने चावहए तथा सािना की विवियों ं अथिा अनुष्ठानों ं के विर्य में र्बताया जाना और कराया जाना चावहए। ऐसी सुिारिादी प्रवक्रयाएँ चलती रहनी चावहए, केिल भारत में ही नहीं ं प्रत्युत् समस्त संसार में हर स्थान पर चलती रहनी चावहए। और भगिान् की इच्छा है वक इसमें भारतिर्व अग्रणी र्बने। अर्ब यह भारतिावसयों ं का प्रिान कतवव्य र्बन जाता है वक इसे तत्काल प्रारि कर दें।

८०

धूम्रपान कैसे बन्द डकया जाये ?

आदत का पररत्याग कर दें। स्नायविक उते्तजना को प्रभािहीन करने के वलए कोई िामक और्वि ले लें। म्रपान करने िाले सावथयों ं से दर रहें। अपने मन को वकसी-न-वकसी काम में व्यस्त रखें। मन को खाली एिं वनन्तिय न छोडें। स्वच्छता के वनयमों, ं अचे्छे स्वास्थ्य के वसद्धान्तों ं तथा आदिव-जीिन के वनयमों ं के विर्य में पढ़ें। मानि-प्रणाली पर तम्बाक के विनािकारी प्रभाि के सम्बन्ध में अपने मन को भली-भाँवत समझाते रहें। सत्य,

अवहंसा और ब्रह्मचयव का पालन करें। आध्यान्तिक पुस्तकें पढ़ें तथा उनके ऊपर मनन करें। योगासन-प्राणायाम का अभ्यास करें। भगिान् का स्मरण हर समय करते रहें। सभी दुगुवण अपने-आप नष्ट हो जायेंगे।

८१

भगवद्गीरा् में बहर् से उन डवियो ोंके सम्बन्ध में बर्ाया गया है, जो ब्रह्मज्ञान के डजज्ञासुओ ोंके डलए अत्यन्त लाभदायक हैं; डकनु्तु आियत की बार् है डक सृडष्ट की रचना करने के उदे्देश्य के सम्बन्ध में कुछ भी चचात नही ोंकी गयी है। भगवान् ने सृडष्ट की रचना आरम्भ ही क्ो ों की?'

सृवष्ट की रचना के उदे्देश्य सम्बन्धी गीता में भगिान् का मौन यथाथव में उनके वदव्य वििेक का प्रकटीकरण है। यही प्रश् विवभन्न मन्तस्तष्कों ंमें विवभन्न रूपों ंमें उठा करता है। ब्रह्म में अविद्या का उदय कैसे हुआ? कमव कर्ब आरि हुए? वनराकार ब्रह्म ने आकार क्ों ंिारण वकये ? परम प्रकाि में अज्ञान का अन्धकार अथिा माया का अन्तस्तत्व कैसे हो सकता है? ये सर्ब, तथा ऐसे ही अन्य अनेकों ंप्रश् उठते हैं। इन सर्ब प्रश्ों ंका कोई उत्तर नहीं ंहो सकता। इसमें उस 'परम तत्त्व' की पणव जानकारी वनवहत है, जो इन सर्ब प्रश्ों ंके पीछे तथा परे है, जो समस्त कारणों ंका मल कारण, समस्त विर्यों ंका म ल विर्य है। यह वकसी विर्य–िसु्तु की भाँवत नहीं ंजाना जा सकता। और जर्ब सर्बका 'मल विर्य' (वनज आत्म-तत्त्व) स्वयं को जान लेता है, तर्ब िाणी और विचार समाप्त हो जाते हैं। संिय संियकताव में लीन हो जाता है। उस परम मौन में प्रश्ों ंका समािान अवनिवचनीय रूप से हो जाता है। समस्ा सुलझ जाती है; वकनु्तु िाणी विन्तस्मत हो कर म क रह जाती है-और प्रश् अनुत्तररत ही रहता है।

अतः भगिान् गीता में इस लोकोत्तर प्रश् के सम्बन्ध में मौन हैं; वकनु्तु िह सिविन्तक्तमान् परमािा इस प्रश् का उत्तर जानने के मागव एिं सािन र्बता देते हैं। सृवष्ट की संरचना क्ों ंकी गयी, इसकी वचन्ता न करें; अवपतु सृवष्टकताव को जानने का प्रयास करें। संसार जैसा है, उसमें रहते हुए उससे अतीत जाने का प्रयत्न करें। इसी में र्बुन्तद्धमत्ता है। र्बौन्तद्धक स्तर से इस रहस् को जानने का प्रयत्न करना केिल मानवसक वनरािा प्राप्त करना मात्र ही है।

लोकातीत विर्यों ंमें कोई 'क्ों' ं नहीं ंहै। 'क्ों' ं तो केिल लौवकक िसु्तुओं ंका होता है। तकव सीवमत एिं नश्वर है। 'क्ों' ं तो केिल भगिान् ही जानते हैं। आत्म-साक्षात्कार प्राप्त करें, तर्ब आपको उत्तर वमल जायेगा, तर्ब आप माया का तथा अन्य सर्बका मल उद्गम एिं प्रकृवत जान जायेंगे।

८२

गाँधी जी की हत्या के सम्बन्ध में आपकेक्ाडवचार हैं?

दैिी इच्छा ही सर्ब ओर कायावन्तित है। देह छट जाने का अथव व्यन्तक्त की मृतु्यु नहीं ंहै। यवद व्यन्तक्त चाहे तो िह िरीर छट जाने के र्बाद भी अपना कायव पणव कर लेगा। वकसी भी कायव को करने िाला केिल यह िरीर नहीं ंहोता। िास्ति में जो कताव है, उसका वकया गया कायव कभी नष्ट नहीं ंहोता। केिल िरीर की हत्या कर देने से उसे वकसी भी कायव को करने से रोकना सिंभव नहीं ंहै। गाँिी जी गीता के वद्वतीय अध्याय के उपासक थे और उनका दृढ़ विश्वास था वक उनमें संन्तस्थत वनज स्वरूप आत्मा अनश्वर है।

८३

आप कहरे् हैं, "आत्मा हमारा विाडवक स्वरप है और हम विाव में सवतव्यापक एवों पररपूणत हैं।" आप यह भी कहरे् हैं, "जीव आत्मा में वैयस्तिकरा् (अलगाव) का भाव है; डकनुतु परम आत्मा में नही.ों...." प्रश्न

उठता है-क्ा आिा-तत्त्व दो हैं? एक ियैन्तक्तक भिा में फूँसा हुआ और दसरा व्यन्तक्तपरक न हो कर समवष्टपरक ?

ाास्ति में आिा एक ही है जो वनरपेक्ष अथिा असीम है। सापेक्ष आिा पररपणव आिा से अलग नहीं ंहै; वकनुतु यह केिल वनरपेक्ष आिा-तत्त्व को, उपावियों ंके अथिा मन के माध्यम से देखना है। वकसी भी िसुतु का अपना एक स्वतन्त्र वनज स्वभिा होता है; वकनुतु जर्ब उसे विकृत रंगीन ििी में से देखा जाये तो िह िसुतु भी विकृत और रंगीन वदखायी देती है। वकनुतु इसका अथव यह नहीं ंहै वक िह िसुतु एक ही समय में सही और विकृत-दोनों ंहै; अन्तर केिल यह है वक हम इसे वकस माध्यम से देखते और ज्ञान प्राप्त करते हैं। वनरपेक्ष आिा को सीवमत मन के माध्यम से अनुभि करने तथा मन को ज्ञान का उपकरण र्बनाने में भी यही र्बात है। सािवभौम वनरपेक्ष सत्ता एक ही है, भेद हमारे र्बोि (ज्ञान) के माध्यम का है।

८४

मैं अपने अनुभव से इस डनष्कित पर पहुँचा हूँ डक लोगो ोंके प्रडर् अपने व्यवहार में भलाई करने से सदा लाभ नही ोंहोरा्। डफर भले होने और भला करने का क्ा लाभ है जब भलाई को न रो् कोई कुछ समझरा् है न ही उसका कुछ सही लाभ होरा् है? कृपया आप इस पर प्रकाश डालें।

लौवकक दृवष्ट से भले ही भलाई आपको कुछ लाभ पहुँचाये या नहीं, ं वफर भी आप सदा भलाई करें और भले ही रहें। इसमें सन्ेदेह नहीं ंवक सांसाररक लोग सामान्यतया ऐसे भोलेभाले लोगों ंको अपनी इच्छाप वतव करने और कई र्बार ठग लेने के वलए भी, आदिव व्यन्तक्त समझते हैं। वकनुतु इससे कोई अन्तर नहीं ंपडता, क्ोंवक भगिान् तो हमेिा भलाई के साथ हैं, और जो िमव पर दृढ़ रहता है तथा भगिान् पर भरोसा रखता है, उसी के साथ भगिान् रहते हैं। दया के सद्गुण के वर्बना तथा गलत कायव करने से भगिान् का भय होने के स्वभिा के वर्बना वकसी को भला आदमी नहीं ंकहा जा सकता। भलाई एिं दया साथ-साथ चलते हैं।

भला व्यन्तक्त संसार में रहता है; वकनुतु हमेिा उसका झुकाि आध्यान्तिकता की ओर ही होता है। िह व्यिहारिक पुरुर् जैसा नहीं ंहोता। भले होने का अथव है पवित्रता तथा परमिा के प्रवत भन्तक्त-भािना को प्रचुर मात्रा में विकवसत करना। भला करने से आप अपने वलए भलाई का र्बीज र्बो देते हैं। यवद एक भला कायव वकया जाता है तो आपके वलए उसका मिुर फल उत्पन्न हो जाता है और आपने चाहा हो अथिा न चाहा हो, उसका सुखद भोग आपको प्राप्त होता ही है। यवद कोई र्बुरा कमव वकया जाता है तो उसके फलस्वरूप आप चाहें या न चाहें, कडिा एिं विपरीत फल आपको भोगना ही पडेगा। आपकी भलाई को भले ही कोई मान्यता दे या न दे, आप आजीिन भला करते जायें और भले ही र्बनें। केिल इसी के द्वारा आपको वचत्तिुन्तद्ध तथा उसके उपरान्त आिज्ञान की प्रान्तप्त होगी। सांसाररक रुवचयों ंिाले लोग, वजन्ें आिा सम्बन्धी कुछ भी ज्ञान नहीं ंहै, केिल िही हैं जो यह नहीं ं समझते वक भलाई करने से ही िीरे-िीरे विकवसत होता हुआ मानि पररपणवता की न्तस्थवत को प्राप्त कर सकता है। आध्यान्तिक अवभरुवच के लोगों ंके साथ ऐसा नहीं ंहै, क्ोंवक िह भली-भाँवत इस र्बात को समझते हैं वक भला करने और भले होने से उन्ें जीिन का लक्ष्य अथावत् परमिा-साक्षात्कार प्राप्त करने में सहायता वमलेगी।

इसे स्मरण रखें वक भगिान् भला करने और भला व्यन्तक्त र्बनने को ही महत्त्व देते हैं। और सदैि उसका फल प्रदान करते हैं। िास्ति में तो िह उन्हीं ंलोगों ंमें वनिास करते और उन्हीं ंके साथ रहते हैं। भला व्यन्तक्त सचमुच स्वयं में उनकी विद्यमानता को, तथा सिवत्र उनकी उपन्तस्थवत को वर्बना वकसी संिय के अनुभि करता है। अपने में, अपने साथ और अपने चारों ंओर भगिान् की उपन्तस्थवत के प्रवत जाग्रत रहे वर्बना स्वयं को भला व्यन्तक्त समझ लेना तो उपहास मात्र ही है। यवद भला होने पर और भले कायव करने पर लोग महत्त्व नहीं ंदेते तो भला र्बनने एिं भला करने के लाभ पर प्रश् न करें, क्योंवक कायव करना मनुष्य् के हाथ में है, उसके भले या र्बुरे फल पर उसका अविकार नहीं ंहै।

८५

यवद राजनीवतज्ञ न हो, ों त्ो क्ा विश्व में शान्तन्त हो जायेगी

राजनीवतज्ञों ंके होने अथिा न होने पर विश्व की िान्तन्त वनभवर नहीं ंकरती। यवद लोग व्यन्तक्तगत रूप से और सामवहक रूप से पररपणव रूप से िमव, वििेक, सत्य और न्याय के वसद्धान्तों ंको समझ कर जीिन जीते हैं, तो उस पर यह वनभवर करती है। जर्ब तक लोग इस स्तर तक ऊपर नहीं ंउठते, तर्ब तक जो िासन को चलाने िाले हैं, िे अपने स्वाथव एिं लोभ से प्रेररत होते हुए उसी के अनुसार कायव करते रहेंगे तथा करोडों ंलोगों ंकी भािनाओं ंएिं कष्टों ंकी ओर ध्यान न देते हुए उन्हें कुचलते रहेंगे तथा युद्धों ंको आमन्तन्त्रत करते रहेंगे, भले ही यह युद्ध वकतने भी विनािकारी क्यों ंन हों।ं

८६

मैं वपछले पाँच िर्षों से कठोर तप और ध्यान कर रहा हूँ। वकन्तु यह सब करने पर मैंने पाया है वक मेरे संकट और समस्याएँ बढती ही जा रही हैं। मेरी नौकरी चली गयी है, मैं भुखमरी झेल रहा हूँ। अब मैं क्ा करूँ ? क्ा यही भगवान् की कृपा है? अपनी साधना मैं कैसे चलत्ी रख् सकत्ा हूँ, जब मेरे पास त्ाने के को कुछ नही ोंहै?

कहते हैं वक भगिान् तो चट्टानों ंकी परतों ंमें रहने िाले मेंढक तक को भी भोजन देते हैं। वकिं आपके सम्बन्ध में ही िे कैसे असफल हो गये? यह सचमुच आश्चयव की र्बात है! क्ा िे अपने कतवव्य को परा करने से चक गये हैं? ऐसा तो नहीं ंहो सकता। िह तो पणव रूप से दयामय हैं, सर्बके वहतैर्ी हैं! िास्ति में िह आपमें साहस, प्रत्युत्पन्नमवत, सहनिीलता, सुदृढ़ आत्म-र्बल, िैयव, दया और प्रेम जैसे उन सद्गुणों ंको विकवसत करना चाहते हैं वजनके द्वारा उनका यह उपकरण (आप) उनकी वदव्य लीला के वलए पणवतया उपयुक्त र्बन जाये। हाँ, वनवश्चत रूप से यही र्बात होगी।

संघर्वरत एिं सच्चे सािक को इसवलए भी अविक मुसीर्बतों ंऔर कष्टों ंका सामना करना पडता है, क्योंवक उन्हें परम िान्तन्त और परिुद्ध आनन्द के साम्राज्य को प्राप्त करने के पथ पर िीघ्रता से अग्रसर होना होता है।

राजपररिार की राजकुमारी मीरा ने िैभिपणव महलों ंके सुख-ऐश्वयव से पणव जीिन को त्याग वदया और राजपताना की जलती रेतीली िरती पर वनकल पडी। िृन्दािन के मागव में चलते समय उसने भख-प्यास को सहन वकया। िह िरती पर सोयी, वभक्षािृवत्त पर जीिन-वनिावह वकया। पाण्डिों ंके सहायक भगिान् श्री कृष्ण थे, तो भी उन्हें असंख्य कष्टों ंका सामना करना पडा। द्रौपदी की रक्षा करने िाले भीम, अजुवन और स्वयं िमवपुत्र युविविर के होते हुए भी

उसे अत्यविक दुभावग्यप णव न्तस्थवत में से गुजरना पडा था। वजन कष्टों ंमें से पाण्डिों ंको, श्री राम को और मीरा को वनकलना पडा था उन सर्ब कष्टों ंके सामने हमारे कष्ट तो कुछ भी नहीं ंहैं। राजा हररश्चन्द्र और उनकी िमवपत्नी की मुसीर्बतों ंकी ओर देखें! उन्हें सत्य का पालन करने के वलए श्मिानभवम में दास र्बन कर चाण्डाल का काम करना पडा। ये कष्ट ही मनुर्ष् के आि-र्बल को सुदृढ़ एिं विकवसत करते हैं। केिल कष्ट सहन करने से ही व्यन्तक्त आध्यान्तिक पथ पर चलने में सक्षम होता है। वचन्तन्तत न हों!ं प्रत्येक पग पर भगिान् िवि की कृपा एिं दया को अनुभि करें। सभी कवठनाइयाँ इस प्रकार समाप्त हो जायेंगी जैसे सयव की गरमी के सामने कोहरा समाप्त हो जाता है। परमािा की कृपा में प णवतया अविग विश्वास रखें।

विडवक एवों सचे्चे गुरु के क्ा डचह्न हैं? क्ा साधारण मनुष् के डलए यह सम्भव है डक वह विडवक गुरु का चयन कर सके ? यडद ऐसा सम्भव है, त्ो वह कैसे यह करे ?

जो सद्ग्रन्थों ंका ज्ञाता अथावत् श्रोत्रीय हो एिं जो ब्रह्म में प णवतया प्रवतवष्ठत अथावत् ब्रह्मवनष्ठ हो, िही िास्तविक गुरु होता है। जो व्यन्तक्त िीतिकील, कामनाओं ंसे रवहत तथा वनष्पाप हो, िह सच्चा गुरु हो सकता है। ऐसा गुरु अपने ज्ञान एिं सक्षमता के द्वारा उन प्रावणयों ंको अपनी ओर स्वयं ही खीचं लेता है, वजन्हें वनदेवित करने के वलए िह उपयुक्त समझता है। जर्ब व्यन्तक्त को ऐसा लगे वक िह वकसी ऐसे महापुरुर् की ओर स्वतः ही न्तखंचा चला जा रहा है वजसे प्रेम वकये वर्बना, वजसकी प्रिंसा और सेिा वकये वर्बना िह रह नहीं ंसक रहा, जो अविकुषुब्ध प्रिान्तिास्था, करुणा एिं आध्यान्तिक अनुभवत की साकार प्रवतमा है, तो ऐसे महान् व्यन्तक्त को गुरु र्बनाया जा सकता है। गुरु िह है वजसमें विर्ष् कोई भी कमी न ढ ूँढ़ सके और जो विर्ष् के वलए उस आदिव पर प्रवतवष्ठत हो, जहाँ विर्ष् को पहुँचना है। संक्षेप में, िास्तविक गुरु भगिान् का प्रकवटत स्वरूप होता है और वजस मनुर्ष् में पररपणव वदव्यता अवभव्यक्त होती हो, उसे गुरु के रूप में चयन वकया जा सकता है। गुरु और विर्ष् का परस्पर सच्चा और अटट सम्बन्ध है, वर्बलकुल उसी प्रकार से जैसे मनुर्ष् और भगिान् के मध्य होता है। यह प्राकृवतक वनयम है वक विश्व में जर्ब भी कोई घटना होनी होती है, तो वर्बलकुल उस वनवश्चत समय पर उसके अनुसार िैसी ही पररन्तस्थवतयाँ र्बन जाती हैं। जर्ब विर्ष् उच्चतर प्रकाि ग्रहण करने के वलए तैयार होता है, तर्ब उस समय परमािा के वििानानुसार उसका सम्पकव उसके अनुकल गुरु से हो जाता है।

मन का आत्मा से क्ा अन्तर है?

आिा, जो वक असीम और सिवदा एिं सदा सिवव्यापक है, का मन एक िीवर्र् सीवमत व्यन्तक्तत्व रूप अथिा पररन्तच्छन्न इकाई है। मन असंख्य इच्छाओं ंका समह है, इसवलए यह जड और िेन्तक्तहीन है। वकन्तु यह चेतन और िन्तक्तिाली इसवलए प्रतीत होता है, क्ोंवक चेतन आिा का प्रकटीकरण इसके माध्यम से होता है, िास्ति में केिल मन ही मनुर्ष् का असली व्यन्तक्तत्व है और यह समस्त कायों का िास्तविक कताव है। संसार की सभी घटना-पररन्तस्थवतयों ंका प्रत्यक्ष एिं परोक्ष रूप से कताव-भोक्ता यह मन ही है। आिा अपने-आपमें पररपणव है और मन के वकसी भी अनुभि से अप्रभावित रहती है। मन नश्वर है, जर्ब वक आिा अमर है।

हमारे सन्त एवों पस्वी महात्मा व्याघ्र अर्वा मृग-चमत को उपयोग में लारे् हैं। क्ा पशु की हत्या करना अर्वा करवाना और वह भी ऐसे व्यस्तियो ोंद्वारा, जो आध्यास्तत्मक पर् पर इर्ना उन्नर् हो चुके हो, ों पाप नही ोंहै? मृर् पशु के चमत पर बैठ कर अपनी मुस्ति की आकाोंक्षा रर्ना क्ा एक साधु के डलए उडचर् है ?

इसमें सर्बसे ओिश्यक इस र्बात को समझना और याद रखना चावहए वक आसन के रूप में उपयोग में लाये जाने िाले मृग अथिा व्याघ्र-चमव को प्राप्त करने के वलए कभी भी उस पिु की हत्या नहीं ंकी जाती। मृग सदा ही संन्यावसयों ंऔर महवर्वयों ंके आश्रमों ंका एक अंग हुआ करते थे और जर्ब यह मृग अपनी स्वाभाविक मृत्युु को प्राप्त होते होंगें तभी यह चमव, जो वक िनों ंमें प्राप्त करने में सुविवाजनक भी रहता होगा, ले वलया जाता होगा। उस समय ि निासी सिाु-तपन्तस्वयों ंके वलए िि की अपेक्षा मृग-चमव अथिा िृक्षों ंकी छाल अविक सरलता से उपलब्ध
हो जाती थी।

व्याघ्र-चमव को भी इसी ढंग से प्राप्त वकया जाता था, वकनुतु अविकांरूप में तो मृग-चमव ही प्रयोग में लाया जाता था। िैसे भी मृग-चमव को आसन के रूप में उपयोग में लाना र्बताया गया है।

आध्यान्तिक दृवष्टकोण से, तपस्वी सन्तों ंने अनुभि वकया है वक मृग-चमव आसन-रूप में प्रयोग करना समस्त वसन्तद्धयों ंकी प्रान्तप्त के वलए अत्यन्त अनुक ल है। सािना से उत्पन्न होने िाली िन्तक्तयाँ मृगचमव के आसन द्वारा अविक सुरवक्षत रहती हैं।

९०

क्ा मैं पिुको ोंकी सहायर्ा से प्राणायाम कर सकर्ा हूँ?

हााँ! वकनुतु उनमें वदये गये वनदिेनों ंको परी तरह से और कई र्बार पढ़ना एिं समझना अत्यन्त ओिश्यक है। यवद कहीं ंपर कोई संयि अथिा अस्पष्टता आपको लगती हो तो वकसी अचे्छे जानकार एिं अनुभिी व्यन्तक्त से पछ कर वफर अभ्यास आरि करें। वनयवमत रूप से विविवत् अभ्यास करें। यवद आप िीघ्र उन्नवत करना चाहते हैं
तो आपको मेरी पुस्तक 'साइंस ऑफ प्राणायाम' (प्राणायाम-सािना) के प्रथम दो अध्यायों ंमें वदये गये वनदिेनों ंका भलीभााँवत अनुसरण करना चावहए। आप कुिक का समय िीरे-िीरे र्बढ़ा कर दो वमनट तक ले जा सकते हैं। अविक आगे के स्तरों ंमें पहुाँचने के वलए गुरु की सहायता लेना अविक अच्छा रहेगा।

९१

क्ा डववाडहर् मडहला डबना डकसी हाडन के प्राणायाम का अभ्यास कर सकर्ी है?

योगाभ्यास, वकसी भी प्रकार का हो, िी-पुरुर् दोनों ंही कर सकते हैं। जो अभ्यास िरीर से सम्बन्तन्धत हैं जैसे हठयोग अथिा कुण्डवलनीयोग, इनमें मवहलाओं ंको िारीररक वभन्नता एिं सीवमतताओं ंके कारण कुछेक सीमाओं ंको ध्यान में रखना चावहए। प्राणायाम-सािना के वलए मवहलाओं ंको वकसी भी प्रकार की कोई हावन नहीं

है।

९२

भगवद्गीर्ा की डशक्षा युि के मैदान में क्ो ोंदी गयी र्ी ?

गीता उपदेि के वलए युद्धभ वम का चुनाि करने में वनवश्चत रूप से भगिान् का कुछ वििेर् कारण था। िे हमें समझाना चाहते थे वक वििेकिीलता अथिा ज्ञान आरामकुसी पर र्बैठ कर या लेटते समय के वलए नहीं होना चावहए। यवद संघर्व-काल में ज्ञान व्यन्तक्त का साथ नहीं देता तो िह ज्ञान है ही नहीं! भरे पेट से, आराम से र्बैठा हुआ
कोई भी व्यन्तक्त दिवनिा की चचाव कर सकता है। आराम से आग तापते हुए तो कोई भी व्यन्तक्त योगिा सम्बन्धी कवठन से कवठन विर्य पर प्रिचन कर देगा। वकन्तु यह तो वििेक नहीं है, यह तो परम ज्ञान के सम्बन्ध में वदखािटी अथिा मौन्तखक ज्ञान मात्र ही है। यह पाखण्ड है। ऐसे लोग जर्ब परीक्षा का समय होता है, जर्ब उनके ज्ञान को व्यिहार क्षेत्र में उतर कर कष्टों का सामना करना पडता है, तर्ब िह र्बुरी तरह से असफल हो जाते हैं। भगिान् श्री कृष्ण का पांचजन्य जोर से गजवन करते हुए कहता है, नहीं! नहीं, नहीं, यह ज्ञान नहीं है; िास्तविक ज्ञान, सच्चा वििेक आपकी युद्धभ वम में भी भलीभाँवत सहायता करेगा, प णव संकटकालीन पररन्तस्थवतयों में आपके साथ रहते हुए आपको समस्याओं से उर्बरने में सक्षम र्बनायेगा, आपकी मुसीर्बतों में, उनको सुलझाने की िन्तक्त देगा, प्रलोभनों में न फँसने की क्षमता देगा और परीक्षा की घवडयों में विजयी र्बनायेगा। कवठनाइयों को पररिवतवत करते हुए आप उन्ें अपनी विलक्षणता वसद्ध करने का सुअिसर र्बना लेंगे; क्ोंवक प्रायः कवठन पररन्तस्थवतयाँ ही व्यन्तक्त को महान् र्बनाने का कारण र्बन जाती हैं।

प्रलोभन और परीक्षाएँ भले ही वकतनी भी िन्तक्तिाली क्ों न हों, सुदृढ़ चररत्र िाले व्यन्तक्त उनसे परावजत नहीं होते, प्रत्युत् इसके विपरीत केिल ऐसे अिसरों पर ही उनकी िन्तक्त प्रकट होती है। दुर्बवल मानवसकता िाला व्यन्तक्त उस समय तो दिवनिास् की र्बात करता है, जर्ब सर्ब-कुछ उसकी इच्छाओं के अनुक ल चल रहा हो, वकन्तु परीक्षा की घडी आते ही सारी की सारी दािवनकता पंख लगा कर उड जाती है। जर्ब वक सुदृढ़ मानवसकता सम्पन्न व्यन्तक्त सामान्य पररन्तस्थवत में अपनी योग्यता का भले ही प्रदिवन न करता हो, वकन्तु जर्ब संकट उपन्तस्थत हो जाता है, तर्ब िह अपनी सामर्थ्व अवभव्यक्त करके आश्चयवचवकत कर देता है।

भगिान् श्री कृष्ण को अपने प्रिचन के वलए युद्ध के मैदान का चयन करने के पीछे वनवहत इस आिय को सािकों को समझना चावहए। अजुवन के माध्यम से उन्ोंने समस्त मानि-जावत को जो महान् समत्वयोग के विर्य में ज्ञानोपदेि देना था मानो यह स्थान ही उसके वलए अत्यन्त उपयुक्त प्रस्तािना थी।

९३

मैं पूरा आधे घण्टे का शीर्ासन का अभ्यास कर रहा हूँ; डकन्तु मैं स्वप्न-दोष से मुि नही ों हो पाया हूँ। मेरी साधना में क्ा कमी है? कामवासना को कैसे नष्ट करूँ?

िीर्ावसन का दीघव काल तक का अभ्यास वनःसन्देह आपकी कामिासनाओं को नष्ट करने में र्बहुत सहायता करेगा; वकन्तु इसके साथ ही आपका वचन्तन भी िुद्ध होना चावहए। वकसी भी कामुक विचार को मन में स्थान नहीं देना चावहए। सत्संग करें। सान्तत्त्वक आहार लें। न्तियों की ओर न देखें। अपने में िैराग्य विकवसत करें। इन्तन्द्रयों को संयवमत करें। यवद आप वनवश्चत सफलता पाना चाहते हैं, तो इन सर्ब वनदेिों का पालन करना होगा। यवद आप कामुक विचारों को पोवर्त करते रहते हैं, यवद कामी पुरुर्ों का साथ करते हैं, यवद आप िुद्ध सान्तत्त्वक

भोजन नहीं ंलेते, वफर अपनी कामिासना को कैसे नष्ट कर सकते हैं, भले ही क्ों ंन तीन घण्ेटे तक िीर्ावसन करते रहें?

९४

मैंने अभी ही सोंन्यास डलया है। क्ा मैं पररव्राजक जीवन जी सकर्ा हूँ अर्वा मुझे एकान्तवास करना चाडहए?

नये संन्यासी के वलए कठोर सिानाप िवक छह िर्व तक पणवतया एकान्तिास करना आिश्यक है। यह आपकी मन की न्तस्थवत पर वनभवर करता है। पररव्राजक जिीन में विर्विवत् सिाना नहीं ंका जा सकती। सर्ब जगह विक्षेप अथिा विकर्वण रहते हैं। कुछ िर्ों तक आपको विर्य-पदाथों से दर रहना चावहए। कठोर एकान्तिास से र्बहुत लाभ होगा। िर्व में एक र्बार, कुछ वदन के वलए ऋतु-पररितवन के वलए वकसी दसरे स्थान पर आप जा सकते हैं। यवद लगे वक आप तमस् में प्रििे करने लगे हैं, तो तुरन्त सवक्रय सेिा में लग जाना चावहए। आरि में दो या तीन िर्व के वलए वनष्काम सेिा कायव अच्छा रहेगा। वफर उसके र्बाद पणव एकान्त। र्बीच-र्बीच में कभी कुछ वदन के वलए, अपने मन की सुदृढ़ता की परीक्षा के उद्देश्य से पररव्राजक जिीन अपना सकते हैं।

९५

मैं डववाडहर् पुरुि हूँ। सोंन्यासी बनने की मेरी अडर् र्ीव्र चाह है। पाररवाररक जीवन से मुझे डवरस्ति हो गयी है। अभी हाल ही में मेरे बच्चे की मृत्यु हो गयी है। मेरी धमतपत्नी भी एक धमतपरायण मडहला है। यडद मैं सोंन्यास ले लूँ, र्ो क्ा मैं अपनी पत्नी के सार् रहरे् हए आध्यास्तत्मक साधना कर सकर्ा हूँ?

अभी आपके वलए संन्यास लेना उवचत नहीं ंहै, भले ही पुत्र की मृत्यु के कारण आपके मन में वंकंवचत् िैराग्य उत्पन्न हुआ हो। संन्यास लेने के र्बाद आपको अपनी पत्नी के साथ नहीं ंरहना चावहए। आपको तो िस्तुतुः अपने घर में भी नहीं ंरहना चावहए, क्ोंवक आपके मन के एक कोने में मोह अभी भी वछपा र्बैठा है। पुराने सांसाररक संस्कार आपको छलने के वलए घात लगाये र्बैठे होंगें। माया अत्यन्त िन्तक्तिाली है। आपको अपनी सारी िन्तक्त पुराने संस्कारों ंएिं लालसाओं ंके साथ गुप्त-संघर्व करने में खचव करनी पडेगी। आध्यान्तिक सिानाएँ करने के वलए िन्तक्त ही िेर् नहीं ंर्बचेगी। भले ही आप यह सोचते हैं वक आपमें उच्चकोवट का िैराग्य आ गया है और आपकी िमवपत्नी भी िमवपरायण नारी है, तो भी आपको उससे र्बहुत दर रहना होगा। उसके सम्बन्ध में सोचना तक भी नहीं ंहोगा। यह सच्चा संन्यास है। संन्यास लेना और पत्नी के साथ रहना, यह कैसा संन्यास है! इस तरह आप मोह और सांसाररक संस्कारों ंएिं िासनाओं ंको कैसे नष्ट करेंगे ?

९६

कई बार जुकाम अर्वा ऐसे ही डकसी-न-डकसी कारण से, मेरी कोई एक नाडसका बन्द हो जार्ी है और श्वास अच्छी र्रह से नही ोंआर्ा, डजसके कारण प्राणायाम करने में कडठनाई लगर्ी है। श्वास-प्रश्वास की गडर् अबाध करने के डलए मैं क्ा करूँ?

अपनी र्बन्द नावसका में िागे का एक वसरा (वकनारा) िालें। आपको छीर्कें आने लगेंगी। इससे आपकी र्बन्द नावसका खुल जायेगी। या वफर जो नावसका र्बन्द हो, उसके विपरीत करिट ले कर पाँूच वमनट के वलए लेट जायें। इससे भी श्वास ठीक आने लगेगा। भन्तिका प्राणायाम को चार र्बार करें, आप ठीक हो जायेंगे।

९७

जीवात्मा और परमात्मा में क्ा भेद (अन्तर) है?

अविद्या अथिा मन में प्रवतवर्बन्तम्बत आिा-ीजीिाा है। परमिाा परम-आिा, ब्रह्म अथिा िुद्ध आिा है। आनुभाविक दृवष्टकोण से, ीजीिाा सीवमत और सोपाविक है, जर्ब वक परमिाा असीम, िाश्वत, सत्-वचत्-आनन्द ब्रह्म है। तत्त्वतुः ीजीिाा- अविद्या के नष्ट हो जाने पर-परमिाा से अवभन्न है।

९८

भगवान् ने सुन्दर युवडर्यो ोंकी सृडष्ट क्ो ोंकी है? उनकी इस सृडष्ट-रचना के पीछे डनडिर् रप से कोई कारण होगा ही। हमें उनका सुर्-भोग करना चाडहए और डजर्नी भी हो सके, सन्तानोत्पडत्त करनी चाडहए। हमें वोंश-परम्परा को चलरे् रर्ना चाडहए। यडद सभी लोग सोंन्यासी हो कर वनो ोंमें चले जायेंगे रो् सोंसार का क्ा होगा ?

ये सुन्दर युिवतयाँू और िन-दौलत आपको अपने जाल में फूँूसाने के वलए माया के उपकरण हैं। यवद आप सदा वनम्न विचारों, ं दवर्त इच्छाओं ंिाले सांसाररक मनुर्ष् ही रहना चाहते हैं, तो र्बडी प्रसन्नता से रहें, आपको प णव स्वतन्त्रता है। आप तीन सौ पचास न्तियों ंसे ििाह करें और वजतनी इच्छा हो, उतनी सन्तानोत्पवत्त करें। कोई आपको नहीं ंरोकता। वकनुतु िीघ्र ही आपको ज्ञात हो जायेगा वक जो सनुतुवष्ट आप पाना चाहते हैं, िह संसार आपको नहीं ंदे सकता; क्ोंवक सभी िसुतु-पदाथव दि, काल और समय की सीमा में आर्बद्ध हैं। यहाँू पर मृतुयु, रोग, िृद्धािस्था, वचन्ताएूँ, तनाि, भय, हावन, वनरािा, असफलता, अवप्रय कटु भार्ण, गरमी, सदी, सपव-दंि, िृविश्चक-दंि, भकम्प, दुघवटनाएूँ इत्यावद सर्ब-कुछ है। एक क्षण के वलए भी आपको मानवसक िान्तन्त नहीं ंवमल सकती। अभी आपका मन िासनाओं ंऔर अपवित्रता से भरा हुआ है, इसवलए आपकी विचार एिं ििवेक-र्बुन्तद्ध मवलनता से आच्छावदत एिं विपरीत हो गयी है। आप जगत् की भ्रामक प्रिृवत्त को तथा आिा के िाश्वत आनन्द को समझने की क्षमताओं ंको खोये हुए हैं।

िासना को अत्यन्त िन्तक्तिाली ढंग से वनयन्तन्त्रत वकया जा सकता है। इसके वलए र्बहुत सिक्त उपाय हैं। िासना को वनयन्तन्त्रत कर लेने पर, आप अपने भीतर से, आिा से िास्तविक आनन्द को प्राप्त करेंगे।

सर्ब लोग संन्यासी नहीं ंर्बन सकते। उनके अनेकों ंर्बन्धन और आसन्तक्तयाँू हैं। िे िासनाओं ंसे भरे हुए हैं; अतुः संसार का त्याग नहीं ंकर सकते। िे अपनी पवत्नयों, ं र्बच्चों ंऔर िन-सम्पवत्त से जकडे हुए हैं। आपका तकव प णवतया गलत है। यह असिि है। क्ा आपने अतीत से अर्ब तक के वकसी इवतहास में ऐसा सुना है वक सभी मनुर्ष् संन्यासी हो गये हैं और संसार वनजवन हो गया ? वफर आप ऐसा र्बेतुका तकव क्ों ंकर रहे हैं? आपके म खवतापणव विचार और िैतानी दिवन, जो अपने में िासना और कामुक िृवत्तयों ंको वलये हुए हैं, को सही वसद्ध करने की, यह आपके मन की चालाकी है। भविर्ष् में कभी इस प्रकार की र्बात न करें, क्ोंवक इससे आपकी म खवता और कामुक िृवत्त प्रकट हो जायेगी। इस संसार के वलए वचन्ता न करें। अपने सम्बन्ध में सोचें। भगिान् सिविन्तक्तमान् हैं, यवद सभी लोग संन्यासी हो कर िन-गमन कर भी जाते हैं, और यह जगत् प णवतया वनजवन हो

जाता है, तो भी भगिान् किल अपनी इच्छा मात्र से ही पल भर में करोडों ंलोगों ंकी सृवष्ट कर देंगे, पलक झपकते ही कर देंगे। यह आपकी वचन्ता का विर्य नहीं ंहै। आप तो अपनी कामिासना को दर करने के उपाय खोवजए।

९९

आत्मा डकस मागत से शरीर छोड़ कर जार्ी है?

जर्ब तक प्राण ऊर्ध्वगमन करते हैं और अपान वनम्नगमन करते रहते हैं, तर्ब तक जीिन चलता रहता है। वकनुतु, जैसे ही दोनों ंमें से एक वनर्बवल हो जाता है, तर्ब जीिनिन्तक्त देह छोड जाती है। यवद उस समय अपान दुर्बवल है, तो जीि या तो विर या नावसकाओं, ं या कान और मुख से वनकलता है। यवद प्राण दुर्बवल हो तो यह मलद्वार से र्बाहर वनकलता है।

१००

सूक्ष्म शरीर क्ा है ?

इस स्थल भौवतक िरीर के भीतर एक सक्ष्म िरीर है, जो इस प्रकार है जैसे फुटर्बाल के भीतर 'र्बै्लैर' अथावत् िायु भरने िाली रर्बड की थैली रहती है। यह भौवतक िरीर की प णवतया प्रवतम वतव अथिा प रक है। यह पाँूच कमेन्तन्द्रयों, ं पाँूच ज्ञानेन्तन्द्रयों, ं पाँूच प्राण, मन, र्बुन्तद्ध, वचत्त और अहंकार से वनवमवत है। कुछ इसे 'दी िर्बल' (वद्वक) कहते हैं। यह सक्ष्म िरीर ही मनुर्ष् की मृतुयु हो जाने पर उसके स्थ ल िरीर को त्याग कर स्वगवलोक को गमन करता है। उस 'परम सत्य' की ज्ञान प्रान्तप्त के द्वारा सक्ष्म िरीर का अन्त हो जाने से ही व्यन्तक्त जन्म-मरण के चक्र से मुक्त हो सकता है।

१०१

भारर् में ७० लार् साधु हैं और करोड़ो ोंरुपये इन साधुओ ोंको स्तर्लाने-डपलाने में नष्ट हो रहे हैं। प्रत्येक साधु या सोंन्यासी समाज के ऊपर परजीवी के रप में भार बना हआ है। सोंन्यासी होने पर भी उसे राजनैडर्क क्ेषेत्र में कायतरर् होना चाडहए। एकान्त जीवन जीने की अर्वा सोंन्यास परम्परा अपनाने की अर्वा डनवृडत्त मागत अपनाने की कोई आवश्यकर्ा नही ोंहै। हमें केवल कायतकर्ातओ ोंकी ही आवश्यकर्ा है।

यह एक िोकपणव गलती है। यह जनगणना झठी है। संन्यावसयों ंऔर सािुओं ंकी सची में वभखाररयों ंको सन्तिवलत कर वलया गया है। िास्तविक संन्यासी वगने-चुने और दुलवभ हैं। उनकी संख्या तो उँूगवलयों ंपर वगनी जा सकती है। किल एक िास्तविक संन्यासी ही इस पृथ्वी का सम्राट् है। िह कभी कुछ लेता नहीं। ं िह तो सदैि देता ही है। िह संन्यासी ही थे, वजन्ोंने अतीत काल में मवहमामयी उदात्त कायव वकये। किल संन्यासी ही हैं जो ितवमान में और भविर्ष् में भी महान् एिं विलक्षण कायव कर सकते हैं। जर्ब तक यह संसार है, तर्ब तक श्री िंकराचायव का नाम कभी भी वमटाया नहीं ंजा सकता। यह स्वामी दयानन्द, स्वामी वििेकानन्द, स्वामी रामतीथव और स्वामी रामकृष्ण परमहंस ही थे, वजन्ोंने सद्ग्रन्थों ंकी उदात्त विक्षाओं ंका प्रचार वकया और हमारे िमवग्रन्थों ंको सुरवक्षत रखा। किल एक संन्यासी ही वकसी भी प्रकार का िास्तविक लोक-संग्रह का कायव कर सकता है, क्ोंवंक उसे वदव्य ज्ञान प्राप्त है, और िह अपना परा-का-परा समय इसी ओर लगा देता है। एक ही सच्चा संन्यासी समस्त

संसार का भाग्य र्बदल सकता है। यह िन्तक्तिाली िंकराचायव ही थे, वजन्ोंनें किेल अद्ैवत का वसद्धान्त स्थावपत वकया। िह अभी भी हमारे हृदय में वनिास करते हैं।

परमहंस जन रोटी के कवतपय टुकडों ंपर जीिन वनिावह करते हैं और उसके र्बदले में द्वार-द्वार भटक कर िेदान्त, उपवनर्दों,ं रामायण और भागित के ज्ञान को भारत के

कोने-कोने तक पहुँचाते हैं। समस्त विश्व उनके प्रवत ऋणी है। हम सर्बको उनका आभार मानना चावहए। उनकी रचनाएँ अभी भी हमारा वनदेिन कर रही हैं। र्ीि तगीता के कवतपय श्लोकों ंका अध्ययन करके देखें। आप तुरन्त स्वयं को वदव्य िैभि एिं मवहमा की व्यापक ऊँचाइयों ंतक उन्नत हुआ अनुभि करेंगे। आप अपने-आपको एक पररिवतवत व्यन्तक्त पायेंगे। अिसाद, दुर्बवलता, तनाि और व्याकुलताएँ सर्ब तत्काल समाप्त हो जायेंगे।

जैसे विज्ञान, मनोविज्ञान, जीिविज्ञान और दिवनिािा आवद वियों ंमें िोि-छात्र अथिा स्नातकोत्तर विद्याथी होते हैं, र्बिलकुल उसी प्रकार स्नातकोत्तर योगी एिं संन्यासी होने चावहए जो अपना समय अध्ययन और ध्यान में लगाते हुए आि-तत्त्व की खोज करें। यह स्नातकोत्तर योगी जन विश्व को, िमव के क्षेत्र में अपनी अनुभ वतयाँ एिं उपलन्तब्धयाँ प्रदान करेंगे। िे अन्य विद्यावथवयों ंको प्रविक्षण देंगे और प्रचार हेतु विश्व में भेजेंगे।

यह गृहन्तस्थयों ंका, जमीदारों ंका, राजाओं ंऔर महाराजाओं ंका दावयत्व है वक िे इन संन्यावसयों ंकी देख-रेख करें और ये संन्यासी, र्बदले में उनकी आिाओं ंकी देख-रेख करेंगे। इस प्रकार संसार-चक्र भली-भाँवत चलेगा। िरा पर िान्तन्त का साम्राज्य रहेगा।

प्रत्येक िमव में ऐसे एकान्तिावसयों ंके सम ह हैं जो एकान्तप णव एिं ध्यानमय जीिन व्यतीत करते हैं। र्बौद्ध मिव में वभक्षु हैं, मुन्तिम िमव में फ़क़ीर हैं, स फी मत में स फी फकीर हैं, ईसाई िमव में फादर और 'रेिरेन्ड्स' (श्रद्धेय) हैं। यवद आप इन आश्रमों ंको अथिा संन्यावसयों ंको अथिा जो त्यागमय एिं वदव्य भािनाओं ंसे प णव जीिन जी रहे हैं, उन सर्बको समाप्त कर देंगे तो िमव की मवहमा ही समाप्त हो जायेगी। यही लोग तो हैं, जो संसार के ििों को सुरवक्षत रखे हुए हैं। यही लोग तो हैं जो गृहन्तस्थयों ंको उस समय िैयव एिं िान्तन्त प्रदान करते हैं, जर्ब िे लोग कष्टों ंऔर मुसीर्बतों ंमें होते हैं। यह सन्त वदव्य ज्ञान और िान्तन्त के अग्रद त हैं। ये आिज्ञान के सन्देिदिाहक हैं। आध्यान्तिक विज्ञान और उपवनर्दों ंके रहस्ों ंके ये प्रचारक हैं। ये रोवगयों ंके रोग का वनिारण, असहायों ंको सहायता, वनरािों ंको प्रसन्नता, वनर्बवलों ंको िन्तक्त तथा भयग्रवसतों ंको साहस, िेदान्त के ज्ञान के द्वारा तथा 'तत्त्वमवस' महािाक् के महत्त्व को स्पष्ट करने के द्वारा प्रदान करते हैं।

राजनैवतक स्वराज्य तो हमने प्राप्त कर वलया है; वकन्तु क्ा यह मानि को िाश्वत िान्तन्त एिं स्वतन्त्रता दे सकता है? क्ा यह राजनैवतक स्वराज्य मानि के कष्टों ंऔर अज्ञान को प णवरूपेण समाप्त कर सकता है? क्ा यह स्वराज्य जीिन की िास्तविक समस्ाएँ हल कर सकता है? इससे मनुष्य को थोडी-सी अविक सुख-सुवििाएँ वमल जायेंगी। िह और अविक मक्खन, िेर्बलरोटी और जैम खा सकेगा। वकन्तु िह वफर भी दयनीय और दुःखी ही र्बना रहेगा, क्ोंवक िह अभी भी अज्ञानग्रस्त ही है; उसे आिा सम्बन्धी ज्ञान नहीं ंहै। आिज्ञान प्राप्त कर लेने पर ही िास्तविक, िाश्वत और स्थायी सुख एिं आनन्द की उपलन्तब्ध हो सकती है। किेल आि-स्वराज्य अथिा आि-साक्षात्कार ही मनुष्य को सच्ची स्वतन्त्रता एिं अमरत्व प्रदान कर सकता है। किेल आि-स्वराज्य ही उसे िास्तविक मुन्तक्त, अविराज्य और परम प णव सन्तुवष्ट दे सकता है।

जो राजनैवतक क्षेत्र में कायवरत हैं, उन्ें भी गीता और उपवनर्दों ंकी भािना सवहत जीिन जीना चावहए। उन्ें नैवतक क्षेत्र में प्रिेि करने से प िव, नैवतक प्रविक्षण, आि-त्याग, आि-संयम, आध्यान्तिक अनुिासन तथा अपने वनजस्वरूप का र्बोि प्राप्त करना चावहए, उन्ें तीन प्रकार के तप-मन, िाणी और कमव सम्बन्धी, जो

भगिद्गीता में र्बताये गये हैं, उनका तथा पतंजवल महवर्व के यम और वनयमों ंका अभ्यास करना चावहए। उनें आिा के अमरत्व, संसार की मायामय प्रकृवत, आिा के ऐक् और जीिन के ऐक् के विर्य में स्पष्ट एिं पणव जानकारी प्राप्त कर लेनी चावहए। उनें यह र्बात भलीभाँवत समझनी चावहए वक समस्त विश्व एक ही पररिार है, वकिल तभी
हि दे की और स्वयं अपनी सेिा, सचे्चे अथों में कर सकते हैं।

१०२

कृष्ण, भगवान् नही ोंहै। वह अवर्ार नही ोंहै। वह एक कामुक ग्वाला र्ा, जो गोडपयो ोंके सोंग रास रचाया करर्ा र्ा।

उस समय श्री कृष्ण भगिान् की क्ा आयु थी भला ? क्ा िे सातिर्ीय र्बालक नहीं ंथे? उस समय उनमें िासना की क्ा झलक भी हो सकती है? रासलीला के रहस् को, मिुयव भाि को, भन्तक्त की सिोच्च पराकाष्ठा को, आि-वनिेदन अथिा भगिान् के प्रवत प णव समपवण के रहस् को कौन समझ सकता है? यह तो वकिल नारद
महवर्व, िुकदेि, चैतन्य महाप्रभु, मीरार्बाई, हावफ़ज, रामानन्द जी और सन्तखयाँ अथिा गोवपयाँ ही थीं, ं वजन्ोंनें रासलीला के रहस्ों ंको समझा। सन्तखयाँ ही किल इसकी अविकाररणी थीं। ं जर्ब िे अभी र्बालक ही थे, क्ा तर्ब उन्ोंनें चमत्कार नहीं ंवकये थे? क्ा उन्ोंनें स्पष्टतः नहीं ंवदखा वदया था वक िे भगिान् हरर के अितार ही हैं? र्बाल्यािस्था में ही उन्ोंनें अपनी माता को विराट् रूप के दिवन नहीं ंकराि वदये थे क्ा ? कावलय नाग के फन पर खडे हो कर क्ा उन्ोंनें उसका िि नहीं ंवकया? उन्ोंनें क्ा स्वयं ही असंख्य कृष्ण रूप िारण नहीं ंकर वलये थे?
गोवपयाँ कौन थीं? ं क्ा िे भन्तक्तभाि से मदोन्मत्त ऐसी वदव्यािाएँ नहीं ंथीं ंजो सिवत्र श्री कृष्ण को ही व्याप्त देखती थीं, ं जो स्वयं को भी कृष्णमयी ही देखती थीं? ं र्बाँसुरी की ध्ववन ही उनें वदव्य आनन्दावतरेक की अिस्था में पहुँचा देती थी। िे देह-चेतना से अतीत थीं। ं

१०३

श्री राम एक साधारण मनुष् हैं। वह भगवान् का अवर्ार नही ोंहैं। वह अपनी पत्नी के डवयोग में फूट-फूट कर रोये। इजिीर् के बाण से आहर् हो कर लक्ष्मण जब अचेर् हो धराशायी हो गये र्े, र्ब उनके रुदन से आकाश में दरार पड़ने जैसा हो गया र्ा। यडद भगवान् र्े र्ो राम अपने डदव्य स्वभाव को क्ो ोंभूल गये ? सीर्ा की अडि-परीक्षा के समय वह शोक-सागर में िूब गये र्े। यडद वह अपना डनजस्वरप जानर्े र्े, र्ो सीर्ा-हरण पर इनें शोकार्ुर क्ो ोंहए ?

इस प्रश् का उत्तर यह है वक श्री राम िास्ति में परब्रह्म थे। िे कभी वकसी र्बात से विचवलत नहीं ंहुए, न ही उन्ोंनें यथाथव में कुछ भी ऐसा वकया था। िे कभी भी िोक या हर्व से ग्रवसत नहीं ंहुए; जन्म-मरण, सुख-दुःख से कभी प्रभावित नहीं ंहुए।

वकन्तु आजीिन उन्ोंनें सािारण मनुर्् के समान व्यिहार वकया। उनें ऐसा करना पडा, क्ोंवक राििण
को यह िरदान प्राप्त था वक िह देि, असुर, राक्षस, यक्ष, सपव, रीछ-भाल इत्यावद वकसी के द्वारा मारा नहीं ंजा सकेगा। राििण ने अवभमानिि मनुर्् को िन्तक्तहीन समझ कर इनमें उसका नाम सन्तिवलत नहीं ंवकया था, अतः उसका किल मनुर्् द्वारा ही िि सम्भि था। इसवलए श्री राम को सािारण मनुर्् र्बन कर ही रहना था। नहीं ंतो, यवद श्री राम स्वयं का भगिद् स्वरूप प्रकट कर देते तो ब्रह्माजी के िरदान के अनुसार राििण का िि न कर पाते।

१०४

क्ा डदवोंगर् आत्मा कोई भी मूर्त रप धारण कर सकर्ी है?

ह्ॉं! वकनुतु सभी आिाओं ंमें मतव रूप िारण करने की िन्तक्त नहीं ंहोती, किल िही उन्नत आिाएूँ मतव रूप ारिण कर सकती हैं जो अवतभौवतक िन्तक्त से सम्पन्न हैं। िह मानि आकार िारण करती हैं, आियन कुसी पर र्ैबैठती हैं और आियन पर र्ैबैठे हुए के साथ हाथ वमलाती हैं। िह र्बातचीत भी करती हैं। उनका स्पिव जीवित मानिनिरीरिारी जैसा ही सूपृश्य और गमव होता है। थोडे ही समय के र्बाद आिा का हाथ अदृश्य हो जाता है।
आिाओं ंके वचत्र भी उतारे (खीचें) गये हैं।

१०५

यह जानने की मेरी र्ीव्र इच्छा है, डक मेरे पडर् की आत्मा इस समय कहॉं है। मैं अडर्
अनुगृहीर् होऊँगी यडद आप मुझे बर्ायें डक मरणोपरान्त आत्मा का क्ा होर्ा है और डदवोंगर् आत्मा की शास्तन्त के डलए हम क्ा कर सकरे् हैं, र्ो हम देहधाररयो ोंको क्ा वह देर् अर्वा सुन सकरे् हैं। प्रेर्ात्मवादी जो यह कहरे् हैं डक मृर्ात्माओ ोंके सार् हम माध्यम (मीडियम) नामक साधन के द्वारा वार्ातलाप कर सकरे् हैं, उसमें कहॉं र्क सच्चाई है ? क्ा उससे उत्तर देने वाला
वह मृर्ात्मा ही होर्ा है?

प्रेर्तिािद के, 'मीवियम' के और 'वक्रस्टल गेव ंग' (स्फवटक में से देखना) इत्यावद के सिोहन में स्वयं को न फूँसने दें। ये आपको भटका देंगे। मृतिााओं ंके साथ सम्पकव इत्यावद सर्ब सनक है वजसका िास्तविक आध्यान्तिकता से कुछ सम्बन्ध नहीं ंहै। जिीन का लक्ष्य इससे वभन्न है। जिीन का िास्तविक उदे्देश्य है अपने
ास्तिविक अनश्वर वनज-आितत्त्व का साक्षात्कार करना। एकमात्र यह लक्ष्य प्रान्तप्त ही आपको पररप णव आनन्द एिं ान्तिन्त प्रदान करेगी।

आिा का न तो जन्म होता है और न ही मृतुयु। जैसे कोई व्यन्तक्त एक कमरे से द सरे कमरे में जाता है,
ठीक इसी प्रकार आिा अन्तस्तत्व के एक स्तर से दसरे में प्रिेि होती है। मृतुयु के र्बाद और पुनजवन्म से पहले के र्बीच के समय में जिीिाा अपने कमों के कुछ एक भाग का सक्ष्मतर लोकों ंमें भुगतान करती है। वफर वनवश्चत समय आने पर जिीिाा नया िरीर िारण कर लेती है।

वदिंगत आिा की सुवनवश्चत िान्तन्त का सिवश्ेरेष्ठ सािन है कीतवन करना। अपने जप को र्बढ़ा दें, अन्य लोगों ंके कष्टों ंका वनु:स्वाथव सेिा और दान द्वारा वनिारण करें और हृदय की गहराइयों ंसे प्राथवना करें।

अपने पवत की वदिंगत आिा से सम्पकव स्थावपत करने का प्रयत्न न करें। वदिंगत आिा से सम्पकव करने से, उनके उच्चतर आनन्दपणव लोकों ंमें गमन करने के ऊर्ध्वगामी पथ में आप र्बािा खडी कर देंगी और उनें िरा-र्बन्धन में जकड देंगी। अपने पवत को नीचे वगराने का प्रयास न करें। इससे उनकी िान्तन्त भंग होगी। 'मीवियम' को वनयन्तन्त्रत करने िाला प्रेत-वनयन्त्रक अज्ञानी और ितव है। िह झठ कहता है।

१०६

हमें अपनी सारी शस्तियॉं सामूडहक आडर्तक डवकास की ओर लगा देनी चाडहए। यडद हम अपना समय आध्यास्तत्मक ज्ञान का प्रचार-प्रसार करने में, गीर्ा अध्ययन और सोंकीर्तन में नष्ट न

करें, प्रतुयुर् उस शस्ति को उपयुति उद्देश्य प्रास्तप्त में लगायें, रो हमारी आडर्तक प्रगडर् शीघ्र होगी, उसके उपरान्त जो लोग चाहें वह दशतन और धमत की ओर प्रवृत्त हो जायें।

हमें अपनी भौवतक एिं िारीररक िन्तक्तयों ंको विकवसत करके उन्नवत के उसी विखर पर, िन्तक्त और सुख-ऐश्वयव के उसी स्तर पर पहुँच जाना चावहए वजस पर पवश्चमी दि पहुँचे हुए हैं, न वक दिवन ििों ंऔर ऐसी ही अन्य र्बातों ंमें लगे रहें!

इस संसार 3/4 दो प्रकार के कायवकतावओं–सामावजक और िावमवक की आिश्यकता है। सामावजक कायवकताव अपने कायव करेंगे। िावमवक कायवकताव आध्यान्तिक ज्ञान के प्रचार-प्रसार का ििवर् कायव करेंगे। एक र्बढ़ई का अपना कायवक्षेत्र होता है और एक वर्बजली-वमिी का अपना क्षेत्र है। आप र्बढ़ई को वर्बजली-वमिी का और वर्बजली-वमिी को र्बढ़ई का काम करने के वलए नहीं ंकह सकते। सामावजक, आवथवक, राजनैवतक और औद्योवगक विकास एिं रचनािक कायव उनकी अपनी-अपनी वदिाओं ंमें होना र्बहुत आिश्यक है। इनकी उपेक्षा नहीं ंहोनी चावहए। वकन्तु केिल िमव ही लोगों ंकी रक्षा कर सकता है। िमव के अभाि में तो मनुष्य् कहीं ंका भी नहीं ं रहता। यहाँ तक वक अन्य क्षेत्रों ंमें कायव करने िाले भी स्वयं को अनुिावसत वकये वर्बना, आध्यान्तिक आिार के वर्बना, िावमवक प्रविक्षण प्राप्त वकये वर्बना तथा सत्य, अवहंसा और ब्रह्मचयव का अभ्यास वकये वर्बना एक अच्छे कायवकताव नहीं ंर्बन सकते। नेता यवद स्वाथी और भ्रष्टाचारी हों ंतो िह समाज को भ्रष्ट कर देंगे; क्योंवक िह अपने वनजी अविकार और पद के वलए ही लडते रहते हैं।

र्बिलरोटी, मक्खन, जैम और र्बवढ़या वर्बसुकुट आपको स्थायी िान्तन्त नहीं ंदे सकते। सुख-सुविाएँ आध्यान्तिक जीिन और िान्तन्त के विरुद्ध हैं। ये व्यन्तक्त को नीचे वगरा देते हैं। अन्ततः व्यन्तक्त की इस िरा पर आिश्यकताएँ तो र्बहुत ही कम है। भगिान् का ध्यान तो आपको केिल मुसीर्बतों ंमें ही आयेगा। आिश्यक तो आध्यान्तिक सम्पदा है, जो वक अक्षय है।

वजस कायव से व्यन्तक्त का अज्ञान द र होता है और उसे प्रसन्नता प्राप्त होती है, िहीं ंउसके कष्टों ंको द र करके िाश्वत सुख प्रदान कर सकता है। और िह कायव आध्यान्तिक प्रचार है। िह कायव भन्तक्त और योग एिं िेदान्त के ज्ञान का प्रसारण है। यही मानि का सिोच्च कायव है। यही सिोपरर यज्ञ अथिा योग है, समस्त यज्ञों ंसे श्रेष्ठ यज्ञ है।

केिल भारत के पास ही सिोपरर वदव्य सम्पदा है। विश्व के विवभन्न भागों ंके सािवक िननान् लोग योग के अभ्यास के वलए, ऋवषयों,ं सन्तों,ं योवगयों ंएिं मनीवषयों ंसे वनदेिन प्राप्त करने के वलए तथा यह अनश्वर सम्पवत्त पाने के वलए वहमालय की ओर आते हैं।

नि से प्रसन्नता नहीं ंवमलती। पवश्चमी देिों ंके लोग इतना िन पा कर भी वर्बलकुल अिान्त हैं। इसी से हम अनुमान लगा सकते हैं वक केिल आध्यान्तिक जीिन ही सच्ची िाश्वत िान्तन्त एिं प्रसन्नता दे सकता है।

१०७

योगी, अपनी यौडगक दृडष्ट से भौडर्क रिो ोंके सूक्ष्म अोंगो ोंको कैसे देर् लेरा है ?

जैसे आप भौवतक पदाथों को, आँखों ंके रूप में प्राप्त भौवतक उपकरण की सहायता से देखते हैं, उसी तरह योगी स क्ष्मतर उपकरणों ंकी सहायता से सक्ष्म तत्त्वों ंको देखते हैं। जहाँ तक ज्ञान का सम्बन्ध है, अन्तज्ञावन के स्तर के अवतररक्त अन्य सभी वनम्न िरातलों ंपर दृष्टा और दृश्य के परस्पर सम्बन्ध का अन्तस्तत्व है। केिल इतना है वक वकसी िसुतु को देखने का कारण भी उसी से वनवमवत होना चावहए वजससे िह िसुतु र्बनी है।

योगी की दृवष्ट को इससे और अविक परी तरह से समझने के वलए आपको स्वयं योगी र्बनना चावहए।

१०८

यडद सब-कुछ भगवान् द्वारा पूवत-डनधातररर् एवों पूवत-डनयोडजर् है, र्ो व्यस्ति कुछ भी करने अर्वा न करने का प्रयास क्ो ोंकरर्ा है? क्ा डकसी व्यस्ति को डकसी काम में बार-बार असफलर्ा प्राप्त होना भी भगवान् की इच्छा समझना चाडहए? क्ा यह विाव में सत्य है डक हमें वही डमलर्ा है डजसके हम योग्य होर्े हैं अर्वा ऐसा है डक हम जो चाहर्े हैं, विाव में उसके योग्य नही ोंहोर्े! मेरी सीडमर् बुस्ति में र्ो इस सोंशय का कोई स्पष्ट उत्तर समझ में नही ोंआर्ा। अर्ः आपकी महान् बुस्ति की ओर ही मैं अपना यह सोंशय भेजर्ा हूँ और आशा करर्ा हूँ डक आप इसे स्पष्ट कर भी देंगे।

यह सत्य है वक सर्ब-कुछ भगिान् द्वारा पिव-वनिावररत और प िव-वनयोवजत है; और उनके पिान आदिेनुसार ही सर्ब-कुछ घटता है। इसके साथ ही भगिान् ने प्रते्येक व्यन्तक्त को सही या गलत करने की, पे्रय-मागव और श्रे्रय-मागव में से वििेक से चयन करने की स्वतन्त्र इच्छान्तक्त भी दी है। यवद व्यन्तक्त सांसाररक सुख-भोगों ंकी क्षणभंगुर और दुःखद होने की िास्तविक रुबुन्तद्ध अथिा वििेक से सम्पन्न हो कर जागरूक रहता है तो िह सही वदिा में अपने प्रयास एिं पररश्रम से अपने प्रारब्ध को, अथावत् उस जन्म में भोगने र्बाले पके हुए कमों के फल को र्बदल सकता है। भगिान् की विविर् अहैतुकी कृपा के वर्बना कोई भी व्यन्तक्त अपना कुछ भी र्बना या वर्बगाड नहीं ंसकता। साक्षात्कार प्रान्तप्त तक के वलए भी भगिान् की कृपा का होना आिश्यक है। और कृपा प्राप्त करने के वलए गहन पुरुर् प्रयत्न, वजसे पुरुर्ाथव कहते हैं, वजसका योगिावसष्ठ में आद्यन्त िणवन वकया गया है, करना पडता है।

वकसी भी वकये जाने िाले कायव की सफलता या असफलता, केिल भगिान् की कृपा के कारण से ही होती है। प्रते्येक पररणाम को िेदान्तन्तक उपेक्षा की दृवष्ट से ग्रहण करें। म क िष्टा र्बन कर भगिान् की लीला का आनन्द लें।

प्रते्येक व्यन्तक्त को िही वमलता है वजसका िह िसुतुतः पात्र होता है, कुछ भी न उसे उससे कम और न ही अविक वमल सकता है। दैिी-वसद्धान्त, मनुर्ष् द्वारा र्बनाये गये काननों ंसे वर्बलकुल वभन्न हैं। भगिान् का वनयम, न्याय और वनणवय अन्तन्तम और असन्तन्दग्ध होता है। िहाँ ररश्वत का िन्धा नहीं ंचलता। उनका कान न मानि जावत के वलए, मानि जावत ही क्ा सारी सृवष्ट के वलए सदैि वनष्पक्ष, एक-समान तथा सनुतुवलत होता है। लौवकक इच्छाएँ केिल अहंकार की अवभव्यन्तक्त ही हैं, जो मनुर्ष् के मन, िाणी और कमों के द्वारा हर पल प्रकट होती रहती हैं। जैसे वक पहले भी कहा है, भगिान् की इच्छा के वर्बना इस पृथ्वी पर वकसी भी मानि के द्वारा सांसाररक अथिा आध्यान्तिक कुछ भी प्रान्तप्त सिि नहीं ंहै। भगिान् िास्ति में उसी की सहायता करते हैं, जो अपनी सहायता स्वयं करता है, और िह भी तर्ब ही होता है, जर्ब इन्तच्छत िसुतु का प्राप्त होना उनके पिान-आदिेों ंके प णवतया अनुरूप वलन्तखत हो। पालने से अथी तक, जन्म से मृतुयु तक, जागृवत से अन्तन्तम सुरुन्तप्त के क्षण तक मनुर्ष् का वनदिेक

तत्त्व होना चावहए-पररणाम के वचन्तन से रवहत, समपवण पर आिाररत स्वप्रयास, स्वप्रयास, स्वप्रयास और केिल स्वप्रयास ही।

१०९

यद्यडप गर् इर्ने विों से मैं सभी सत्सोंगो ोंमें भाग लेर्ा रहा हूँ और भले ही डपछले इन सभी विों से जप और ध्यान करर्ा रहा हूँ र्ो भी अभी र्क भगवान् और भगवन्नाम में मेरी सुदृढ श्रिा नही ोंबनी है। अभी भी मेरे मन में पररवार, पद, धन और साोंसाररक जीवन के प्रडर् मोह बना हआ है। यह बड़ी डवडचत्र बार् है स्वामी जी, इसे मैं स्वीकार करर्ा हूँ! ऐसा क्ो ों?

माया अत्यन्त िन्तक्तिाली है, केिल र्बहुत ही विलक्षण उदाहरण कोई-कोई हैं, जहाँ संस्कार अत्यन्त प्रर्बल होते हैं, नहीं तो व्यन्तक्त में ध्यान एिं वचन्तन से सम्पन्न जीिन के प्रवत रुवच अपने-आपसे प्रकट नहीं ंहोती।
वनस्सन्देह सत्संग, जप और ध्यान सािक को र्बहुत सहायता करते हैं; वकन्तु अविद्या का आिरण इतना सघन है वक ये सर्ब भी उसका छेदन करने के वलए पयावप्त नहीं ंहैं। ये केिल संस्कारों ंकी रचना कर देते हैं जो वक आगामी जन्मों ंमें आकार ग्रहण करते हैं। हाँ, यवद आप इनके साथ-साथ विचार द्वारा वििेक विकवसत करके िैराग्य उत्पन्न कर लेते हैं तो उन्नवत अत्यन्त िीघ्र हो जाती है। िैराग्य और वििेक वनवश्चत रूप से आिश्यक हैं। इनके वर्बना वकतना भी अविक सत्संग, जप और ध्यान क्यों ंन वकया जाये, तत्काल कोई पररणाम उत्पन्न नहीं ंकरेगा। माया अत्यविक िन्तक्तिाली है, उसे केिल दृढ़ िैराग्य के द्वारा, केिल गहन िैराग्य द्वारा ही नष्ट वकया जा सकता है।

११०

स्वामी जी, काफी समय से ही मैं अपनी कक्षा की पुिकें पढ नही ोंपा रहा हूँ। जैसे ही पुिक उठार्ा हूँ, मुझे लगर्ा है डक यह पढने योग्य नही ोंहै, क्ोडोंक मेरी कुषुडधर् आत्मा को सनुतुष्ट कर सकने वाला रर् उनमें नही ोंहै।

मेरे प्यारे र्बच्चे, तुम्हारे वलए संसार को त्यागने का यह समय अभी र्बहुत जल्दी है। इसके अवतररक्त अभी तुम्हारे माता-वपता भी हैं। तुम्हें उनकी अच्छी तरह से सेिा करनी चावहए। ईमानदारी से अपनी रो ी कमाओ । पररश्रम करो। इसके साथ-साथ वनवमत्त भाि अपनाओ, अथावत् स्वयं को भगिान् के हाथों ंका उपकरण समझने की भािना उत्पन्न करो। अपनी पढ़ाई करते रहो। यह वनस्सन्देह सही है वक संसार सम्बन्धी ज्ञान मोक्ष नहीं ंदेगा, वफर भी इसकी अपनी उपयोवगता है। कोई भी िसुतु अपने-आपमें दोर्पणव नहीं ंहै, उस विर्य सम्बन्धी ज्ञान का उपयोग वकस प्रकार वकया जाता है, यह महत्त्वपणव है। अपनी व्यन्तक्तगत सािना को चलता रखने का प्रयत्न करो। मेरे र्बीस आध्यान्तिक वनयमों ंका अपनी क्षमतानुसार पालन करो। आध्यान्तिक दैनन्तन्दनी (िायरी) को र्बनाये रखो। अपने जीिन के परम लक्ष्य को सदैि मन में रखो। उपयुक्त समय आने पर भगिान् स्वयं ही तुम्हें इस त्याग-पथ पर लगायेंगे।

१११

जीवन और ध्यान एक-दूसरे से डमडश्रर् कैसे हैं?

संसार में कोई भी व्यन्तक्त ऐसा नहीं ंहै जो स्वभाि से वदव्य न हो। व्यन्तक्त में वदव्यता की मात्रा में ही अन्तर होता है, उसकी वकस्म में नहीं।ं नान्तस्तक कहलाने िाले मनुर्ष् तक में वदव्यता की वकरण होती है। कोई भी व्यन्तक्त

सत्त्व, रजस् और तमस्, इन तीनों ंगुणों ंमें से वकसी भी एक से विहीन नहीं ंहोता, मात्रा में ही अन्तर रहता है। व्यन्तक्त संियािदी हो, वनरीश्वरािदी अथावत् नान्तस्तक हो, ि न्यािदी हो अथिा और कुछ भी हो, उसमें वजतना अंसित्त्व का होता है, िह उसे कुछ-न-कुछ भले कायव करने में सहायता करता है, जो उसे पुनः इसी प्रकार के भले कायव करने में, इस जन्म में या अन्य आगामी जन्मों ंमें प्रिृत्त कर देता है। रजस् और तमस् प णव कमव करते हुए भी हि अपने में विद्यमान सत्त्व की मात्रा के अनुसार सान्तत्त्वक कमव भी करता रहता है। इस जगत् में कोई भी व्यन्तक्त, भले ही िह िाक हो, चोर हो, सम्पिि िाक हो या कोई अन्य, कभी भी केिल कुकमव मात्र ही नहीं ंकरता। प्रत्येक व्यन्तक्त इस संसार में द वर्त एिं भले, दोनों ंप्रकार के कायव अपने जीिन में करता है। अथावत् जर्ब तक िह प्रकृवत के िश में है, िह दोनों ंप्रकार के वमवश्रत कमव करता है। जर्ब भले कायव करता है तो स्वाभाविक रूप से ही उसका मन वदव्यता की ओर, चाहे िह वंकंवचत् मात्र सी ही हो, मुड जाता है, तो एक आन्तररक प्रसन्नता उसे अनुभि होती है, भले ही िह इसका कारण समझ और र्बता न सके। ध्यान िस्तुतः सान्तत्त्वक गुण है, जर्ब जीिन उदात्त हो, तो उस क्षण मनुर्ष् वनवश्चत रूप से भगिान् का वचन्तन करता है।

इस सम्बन्ध में स्मरणीय र्बात यह है वक सान्तत्त्वक कायव भी प जा या ध्यान के समान हैं। ध्यान का अथव, आिश्यक नहीं ंवक एकान्त कोने अथिा अलग कोने में र्बैठ कर भगिान् श्रीराम, श्रीकृष्ण, यीशु अथिा मोहम्मद के सम्बन्ध में वचन्तन करना या मानवसक अथिा र्बोल कर प्राथवनाएँ करना ही समझा जाये। िह कायव, जो व्यन्तक्त की स्थ लता को िृद्ध करने िाले हों,ं उन सभी को ध्यान माना जा सकता है। इसवलए सामान्य मनुर्ष् के सम्बन्ध में, जीिन-अमापनीय मात्रा में अज्ञान एिं ध्यान का वमश्रण है। यवद वनवश्चत रूप से वकसी उन्नतात्मा गुरु के वनदेशानुसार स्िेच्छाप िवक ध्यान वकया जाये तो व्यन्तक्त अकतृवत्व एिं अभोक्तृत्व भाि सवहत केिल भले और वनष्काम कमों को ही करेगा, वजससे वक िह अपने जीिन को अविक-से-अविक प्रसन्नताप णव, अविक-से-अविक ज्ञानप णव तथा अविक-से-अविक आकर्वक अनुभि कर सके। यह द सरी न्तस्थवत, जो वक व्यन्तक्त का स्िैन्तच्छक पग र्बढ़ाना है, में िह विद्युत् िेग से अवत शीघ्र उन्नत होता है जर्ब वक पहली न्तस्थवत में कछुए की सी िीमी गवत से आगे र्बढ़ता है। इस प्रकार जीिन और ध्यान परस्पर वमले हुए हैं।

११२

आपका क्ा डवचार है डक आत्म-साक्षात्कार प्राप्त करने के डलए हमें गुरु के अडर्ररि डकसी अन्य मध्यस् की भी आवश्यकर्ा है?

हाँ, हाँ! िह है, इष्टदेिता। यह मन एकदम से अपने-आपसे अतीत नहीं ंजा सकता। अहंकार को समाप्त करना अत्यन्त दुष्कर है। आपकी चेतना को परम चैतन्य की अनुभवत कर सकना असंभि सा ही हो जायेगा। इसवलए ध्यान करने के वलए इष्टदेि के नाम और रूप का चयन करना आिश्यक हो जाता है। समय आने पर यह इष्टदेि आपके समक्ष स्वयं को प्रकट कर देंगे और अहंभाि एिं मन को समाप्त करके आपको परम चैतन्य का साक्षात्कार करने की क्षमता प्रदान कर देंगे।

११३

स्वामी जी, मोक्ष प्राप्त करना क्ो ोंआवश्यक है ?

इसे समझने के वलए आपको सत्संग और सद्ग्रन्थों ंका स्वाध्याय करना चावहए। सभी प्रकार की इच्छाओं ंएिं कुसंस्कारों ंसे आच्छावदत र्बुन्तद्ध मोक्ष की आिश्यकता को समझ पाने के योग्य नहीं ंहोती। ऐसी र्बुन्तद्ध तो आसुरी र्बुन्तद्ध होती है। गीता पढ़ें। सत्संग में भाग लें। सन्तों ंऔर संन्यावसयों ंके प्रिचन सुनें। तर्ब आपमें वििेक जाग्रत होगा।

तर्ब आप समझ सकेंगे वक यह संसार दु:ख-ददव से भरा हुआ है। तर्ब वफर यह र्ंबंगला, यह मोटरगाडी, यह पद और यह ितन जो सर्ब आपका है, आपको और अविक देर तक सनुतुष्ट नहीं ंकर पायेगा। आपकी आकांक्षाएूँ उन्नत होंगी। आप स्वयं को मुक्त करना चाहेंगे। सक्ष्मदिी लेंस तैयार करने के वलए वकतना पररश्रम करना पडता है? अत्यविक वघसाई करने के र्बाद ही उसमें से देखा जा सकता है। इसी प्रकार र्बहुत अविक स्वाध्याय और सत्संग के द्वारा ही आपकी र्बुन्तद्ध इससे परे तक सोच पाने के योग्य हो पायेगी।

११४

क्ा ऐसा नही ोंहो सकरा् डक कोई व्यस्ि इस जीवन से अर्ीर् डकसी भी प्रकार की आकोंक्षा डकये डबना एक भला जीवन डजये, सद्गुणो ोंसे सम्पन्न जीवन डजये, दानी, सत्य-परायण और उदात्त हो, समाज की भलाई के डलए कायत कररा् रहे और एक अच्छा-नेक इोंसान बन कर जीवन-लीला समाप्त कर ले ?

यवद आप भला जिीन जीते हुए मरना चाहते हैं तो आप एक भले व्यन्तक्त के रूप में मृतुयु को प्राप्त होंगें, सन्त के रूप में नहीं।ं आपको मोक्ष की प्रान्तप्त नहीं ंहोगी।

आपने सैकडों ंभले व्यन्तक्त देखे हैं। वकनुतु सन्त वकतने देखे हैं? यहाूँ तक वक आजकल तो सचे्चे वजज्ञासु सिाक ही दुलवभ हैं। आप जो भले व्यन्तक्त कहते हैं, उन भले व्यन्तक्तयों ंके भी र्बहुत से स्तर हैं। गाूँिी जी जैसे भले व्यन्तक्त वकतने हैं?

आपके यह भले आदमी क्ा करते हैं? िे सत्य-परायण और नेक हो सकते हैं, िे दानिील और पवित्र भी हो सकते हैं; वकनुतु अपने मन के भीतर कहीं ंगहराई में, इनके स्वाथवभाि छुपा रहता है। िे िन-संग्रह करेंगे और केिल अपनी पत्नी और सन्तान की वचन्ता करेंगे। क्ा िे समस्त र्बच्चों ंको अपनी सन्तान जैसा समझेंगे? जर्ब िे र्बाजार से वमठाई लाते हैं तर्ब क्ा दसरों ंके र्बच्चों ंको पहले वमठाई देंगे? न, न! क्ोंवक िे इस सत्य को नहीं ंजानते वक सभी प्राविणयों ंमें एक ही आिा का िास है। जर्ब तक यह सत्य, यह भाि उनके भीतर जाग्रत नहीं ंहोता, जर्ब तक िे इस परम सत्य पर ध्यान नहीं ंकरते और इसका साक्षात्कार करने का प्रयास नहीं ंकरते, तर्ब तक त्याग और वनु:स्वाथव सेिा का भाि कैसे विकवसत कर सकते हैं?

मात्र पिु समान मनुर्ष् होने से, अिगुणों ंसे प णव आदमी होने से भला व्यन्तक्त होना वनस्सने्देह अविक अच्छा है। वकनुतु यह एक लक्ष्य-र्िविर् का सिान मात्र है; यह लक्ष्य के वनकटतर होने का एक पग मात्र है, यह अपने-आपमें एक लक्ष्य, एक उदे्देश्य नहीं ंहै। लक्ष्य तो आि-साक्षात्कार प्राप्त करना, मोक्ष की प्रान्तप्त करना है। और इस लक्ष्य को प्राप्त करने के वलए आपको वनवश्चत रूप से भला र्बनना और भला करना होगा। और आपको इससे अविक भी करना होगा- आपको वििेक, िैराग्य और जिीन के प्रवत सही दृवष्टकोण विकवसत करना होगा; जप और कीतवन करना होगा, ध्यान करना होगा, सद्ग्रन्थों ंका स्वाध्याय करना होगा। तर्ब भगिान् की कृपा के द्वारा आप अपने जिीन के परम लक्ष्य को प्राप्त कर लेंगे।

११५

याज्ञवल्क्य महडित द्वारा प्रत्याहार प्रास्तप्त के डलए शरीर के १८ अोंगो ोंपर एकाग्ररा् करने की प्रडवडध क्ा है? कृपया डविार सडहर् बरा्इए।

महवर्व याज्ञिल्क्य के द्वारा दी गयी एकाग्रता की प्रविवि में मन और प्राण को िीरे-िीरे से पाँि के अूँग ठों ंसे ले कर रीर के एक-एक अंग पर, र्बहुत से गुह्य केन्द्रों ंमें से होते हुए, ऊपर के अंगों ंकी ओर र्बढ़ते जाना और हिाूँ पर एकाग्रता एिं प्रत्याहार (हटा लेना) करते जा कर अन्ततुः विर की चोटी (विखर) तक पहुूँचने की शृंखला है। इस प्रकार इस प्रवक्रया के द्वारा मन और प्राण सारे िरीर से प णवतया खीचं वलए जाते हैं, और अन्त में मन्तस्तष्क के केन्द्रीय स्थान में केन्तन्द्रत हो जाते हैं जहाूँ अभ्यासकताव गहन ध्यान में उतर जाता है।

याज्ञिल्क्य द्वारा र्बताये गये १८ अंग वनम्नांवकत हैं :

१. पाँि के अूँग ठे, २. टखने, ३. वपण्डली, ४. वपण्डली से ऊपर, घुटने से नीचे तक की टाूँग, ५. घुटने के मध्य, ६. जंघाओं ंका मध्य, ७. मलद्वार, ८. िरीर का मध्य भाग, कमर के नीचे का भाग, ९. जननांग, १०. नावभ, ११. हृदय, १२. कण्ठ का गड्ढा, १३. ताल का म ल, १४. नावसका का म ल, १५. नेत्रगोलक, १६. भृकुटी का मध्यस्थल, १७. मस्तक, और १८. विर का िीर्व स्थल।

जर्ब इन्तन्द्रयाूँ सवक्रय होती हैं, उसी समय मन र्बाह्यगामी होता है। अतुः एकाग्रता अिरुद्ध हो जाती है। इन्तन्द्रयों ंकी सवक्रयता प्राणों ंसे होती है। प्राणों ंके प्रत्याहार से िरीर के विवभन्न अंग वनन्तिय कर वदये जाते हैं और उनकी गवत का वनरोि कर वदया जाता है। यहाूँ इस प्रवक्रया से, प्राणों ंका प्रत्याहार मन के प्रत्याहार से सफलताप िवक हो जाता है। प्राणायाम के द्वारा प्राण और मन के अन्तसवम्बन्ध के द्वारा यह इतने प्रभािाली ढंग से नहीं ंहोता। वकसी अंग-विर्े पर जर्ब गहन एकाग्रता के थोडे से समय में मन को प री तरह से खींचं वलया जाता है, तर्ब अन्तगावमी मन के साथ-साथ प्राणों ंका भी प्रत्याहार हो जाता है। प्राण भी मन का अनुसरण करते हैं।

इस प्रकार एक-एक अिस्था को पार करते हुए प्राणों ंका पाँिों ंके अूँग ठों ंसे ले कर तर्ब तक प्रत्याहार होता जाता है जर्ब तक िह अन्ततुः विर के विखरतम केन्द्र पर नहीं ंपहुूँच जाते और इस समय तक ध्याता को देह का भान विस्मृत हो जाता है, इस अिस्था में पहुूँच जाने पर ध्यान वनविवघ्न आगे र्बढ़ता है तथा अत्यन्त प्रभािाली हो जाता है।

यह वनविवघ्न गहन ध्यान में प्रिेि पाने की एक प्रवक्रया है। अपने ध्यान के आसन पर र्बैठ जायें। मनुःन्तस्थवत और भाि सही अिस्था में लाने के वलए थोडा प्रणि मन्त्र ॐ का उच्चारण करें। वफर इस समस्त व्यािहाररक जगत् को, इस पृथ्वी को भी नकार दें। जर्ब आप उस अिस्था में पहुूँच जायें जर्ब आपको केिल अपनी देह का ही भान रह गया हो, तर्ब प्रत्याहार की इस प्रवक्रया को आरम्भ करें। अपनी आूँखें र्बन्द कर लें। पहले अपने प रे मन को पैरों ंके अूँग ठों ंपर ले जायें, िहाूँ मन को एकाग्र करें। वफर िीरे-िीरे क्रमिुः अूँग ठों ंके क्षेत्र से आगामी वर्बनदु पर ले चलें यथा टखनों ंपर, अर्ब मन को यहाूँ केन्तन्द्रत करें। वफर िहाूँ से आगे के वर्बनदु पर ले जायें अथावत् वपण्डली पर, यहाूँ मन एकाग्र करें। वफर आगे के चार अंगों ंपर, और इसी प्रकार ऊपर की ओर र्बढ़ते जायें। कुछ वदनों ंके अभ्यास के र्बाद, आपकी रुवच और अभ्यास करने की गम्भीरता के अनुसार, आप इन समस्त १८ अंगों ंपर प्रत्याहार करते हुए ध्यान के म ल स्थान िीर्व के विखर वर्बनदु पर िीघ्र ही पहुूँच कर ध्यान की िास्तविक अिस्था में पहुूँच जायेंगे।

११६

स्वामी जी, मुझे लगरा् है डक मुझे महावाक्ो ोंके अर्त और उनका महि भलीभाँुडर् समझ में नही ोंआया है।

मैं आपको र्बतलाता हूूँ। ध्यान से सुनें।

प्रथम िाक् है, **"प्रज्ञानों ब्रह्म-चैर्न्य ब्रह्म है।"** यह लक्षणा िाक् है। गुरु अपने विर्ष् को पररभार्ा र्बताता है वक िुद्ध चैतन्य ब्रह्म है। वफर गुरु कहता है **"र्ई् त्वम् अडस** । आप ही 'िह' हैं। आप सिवत्र व्यापक िुद्ध चैतन्य हैं।" यह उपदेिाक् है।

वफर विर्ष् अपने गुरु के र्बतलाये हुए विचार पर वचन्तन करता है, "**अहों ब्रह्मास्ति**। मैं ब्रह्म हूँ।" यह अनुसन्धान िाक् है।

अन्ततः, विर्ष् को अनुभि हो जाता है वक िह आिा, जो उसके भीतर है िह ही ब्रह्म है : **"अयमात्मा ब्रह्म।** यह आिा ही ब्रह्म है।" यह अनुभि िाक् है। िाक्ों का अर्ब आपको स्पष्ट हो गया है?

११७

मैं आपको यह बर्ाना चाहर्ा हूँ डक 'नौडल', 'उडियानबन्ध' र्र्ा प्राणायाम का बहर् अडधक अभ्यास करने के कारण मेरे पेट की आँर्ोों में अत्यडधक ददत होने लगा है। यहाँ र्क डक मुझे करवट से लेटना और साँस लेना भी कडठन हो रहा है। इर्ना सब होने पर भी मैं अपना योगाभ्यास और डक्रयाएँ डनयडमर् रप से कर रहा हूँ। यडद यह डकसी सोंकट का पूवातभास है र्ो कृपया र्त्काल उत्तर दें। सार् ही फुफ्फुसोों के दोनोों ओर होने वाले असहनीय ददत को दूर करने का भी कोई उपाय बर्ायें!

आपको इस समय जो असहनीय िेदना हो रही है, उसके कारण वकसी भी प्रकार के भय की कोई आिंका नहीं है। तीन-चार वदन के वलए नौवल और उवड्डयान करना र्बन्द कर दें। प्राणायाम आप वनरन्तर करते रह सकते हैं, वकन्तु भस्त्रिका जैसे प्राणायाम इन वदनों के वलए र्बन्द कर दें। थोडा-सा विश्राम ले लें। अवत की ओर मत जायें। इस कथन को ध्यान में रखें, 'अवत सिवत्र िजवयेत्।' वकसी भी कायव में 'अवत' नहीं करनी चावहए। मध्यम स्वणव पथ का अनुसरण करें।

जहाँ तक प्राणायाम का सम्बन्ध है, अभी आजकल सुखपूिवक प्राणायाम तर्ब तक ठीक रहेगा, जर्ब तक आप पूरी तरह से अपने-आपको ठीक अनुभि नहीं करने लग जाते। अपने पेट के भीतरी अंगों को आराम देने से आप ठीक हो जायेंगे।

जर्ब आपको लगे वक आप पूणवतया ठीक हो गये हैं, तर्ब सभी र्बन्ध, मुिाएँ, वक्रयाएँ और भस्त्रिका प्राणायाम आरि कर दें। इस र्बात का ध्यान रखते हुए सदैि मध्यम पथ को अपनायें वक तीव्रता, आिंछनीयता और कठोर एिं उग्र अभ्यास द्वारा नहीं र्बस्त्रल्क सामान्य, सहज, धीर एिं सतत प्रयास से ही आप िास्तविक उन्नवत कर सकते हैं। हडर्बडी और उग्र अभ्यास से पलक झपकते ही आनन्दमयी अिस्था को प्राप्त कर लेंगे, ऐसा न समझें।

खुली हिा में सैर करें। सिाि, ििासन में लेट जायें। भगिान् से आिीिावद प्राप्त करने के वलए अपने इष्टमन्त्र के जप से उनका आह्वान करें। पीवडत अंगों (पसवलयों) की, गमव पानी में थोडी-सी तारपीन िाल कर वसकाई करें। थोडा पाउिर वछडक दें। वसकाई करने के र्बाद थोडा तेल मलें। वनवश्चत रूप से आप ठीक हो जायेंगे।

११८

साधु और सोंन्यासी डभक्षा माँग कर क्ो ोंर्ार्े हैं ? क्ा दान देने वाले के पाप कमत और कुप्रवृडत्तयाँ, उसके डदये गये भोजन में डमल कर साधु-सोंन्याडसयो ोंकी मानडसक शास्तन्त को नष्ट नही ोंकर देर्े ?

सच्चा और िास्तविक संन्यासी िह है, वजसे संसार के प्रवत वंकवचत् भी मोहासन्तक्त नहीं ंहै। ऐसे सािु एिं ब्रह्मवनष्ठ पुरुर् तो अपनी आिश्यकताओं ं के प्रवत भी उदासीन हीरहते हैं। उनको अपने वलए स्वयं भोजन र्बनाना भी नहीं ंचावहए; क्ोंवंक स्वयं पकाने िाले व्यन्तक्त के मन में यह पकाना, िह पकाना अथावत् सुस्वादु भोजन तैयार करने की इच्छा जाग्रत हो जाती है। इससे 'वजह्वा-चापल्य' उत्पन्न हो जाता है। सािना का उदे्देश्य मन को वनयन्तन्त्रत करना है, वजसका सिोत्तम सािन है वजह्वा पर वनयन्त्रण करना। इसीवलए सािु-संन्यावसयों ंके वलए भोजन र्बनाने का वनर्ेि वकया गया है; अतः केिल पेट भरने तक के वलए वभक्षाि्ृवत्त करने की अनुमवत है। इसवलए वभक्षा माँगना सािु-संन्यासी के वलए पाप नहीं ंहै।

भागितों ंके जप, प्राणायाम, स्वाध्याय से उत्पन्न तप की अवग्न उन सर्ब अपवित्रताओं ंको भस्म कर देती है जो अविकवसत एिं कुभािनाग्रस्त लोगों ंद्वारा वदये गये भोजन से उत्पन्न हो सकती हैं।

११९

दाशतडनको ोंको पागल क्ो ोंकहा जार्ा है? दाशतडनको ोंमें कुछ ऐसा है अर्वा उन्ें यह कहने वालो ोंमें कुछ है?

सांसाररक व्यन्तक्त से तुलना करें तो दािवनक को इस दृवष्ट से पागल कहते हैं वक िह र्बाह्य प्रकटीकृत रूपों ंमें उस तरह से रुवच नहीं ं लेता, जैसे वक सामान्य लोग लेते हैं। दािवनक के वलए र्बाह्य जगत् केिल भ्रान्तन्त है, वकन्तु सांसाररक व्यन्तक्त के वलए यह जगत् िास्तविक और िाश्वत है। इन दोनों ंमें ही कोई भी प रा गलत नहीं ंहै, क्ोंवंक 'पागल' िब्द केिल परस्पर सापेवक्षक लक्षण के रूप में प्रयोग वकया जाता है।

दािवनक जो कहता है, उसका सािारण मनुर्ष् विश्वास नहीं ंकर सकता और जो सामान्य व्यन्तक्त अनुभि करता है िैसा दािवनक नहीं ंकर सकता।

१२०

स्वामी जी, ब्रह्म में माया कैसे आयी ?

यह एक अवतप्रश् है। आपके मन में यहप्रश् विविि रूपों ंमें आता है : कमव कर्ब से आरम्भ हुआ? जगत् की सृवष्ट कर्ब और कैसे हुई? संसार में र्बुराई क्ों ंहै? िह अप्रकट स्वयं प्रकट क्ों ंहुआ? आवद आवद। ऐसा ही प्रश् श्री राम जी ने योगिावसष्ठ में वकया था और िवसष्ठ महवर्व ने कहा था, "तुम घोडे के आगे गाडी को लगा रहे हो। इस प्रश् को करने से तुम्हें कोई लाभ अथिा हल वमलने िाला नहीं ंहै। ध्यान करो और ब्रह्म का साक्षात्कार प्राप्त करो, तर्ब तुम्हें इस प्रश् का उत्तर वमल जायेगा। तर्ब यह प्रश् स्वयमेि ही समाप्त हो जायेगा।" कोई भी इस प्रश् का उत्तर नहीं ंदे सकता। जर्ब 'ज्ञान-प्रान्तप्त' हो जाती है तो प्रश् स्वयं ही समाप्त हो जाते हैं। अतः इस प्रश् का कुछ भी उत्तर नहीं ंहै।

ब्रह्मस त्र में कहा गया है, **"लोकवर् रु लीलाकैवल्यम्।"** यह किल आपकी िंका को िान्त करने के वलए है। िास्ति में यह उत्तर नहीं ंहै, क्योंवक उत्तर कोई हो ही नहीं ंसकता। वफर भी, प्रत्येक वजज्ञासु के मन में िंका का उत्पन्न होना स्वाभाविक है। आप भी इसमें कुछ नहीं ंकर सकते। आपको अपने विवेक का उपयोग करना होगा, संिय को िान्त करना होगा और वफर गहन सािना करके ध्यान के द्वारा ब्रह्म-साक्षात्कार करना पडेगा। तर्ब यह संिय और प्रश्, सर्ब समाप्त हो जायेंगे। एक र्बहुत र्बडे ज्ञानी एिं योगी १२ िर्व तक इस संिय में ग्रस्त रहे। वफर उन्होंने मुझे र्बताया, "अर्ब वचन्ता समाप्त हो गयी है। इससे मैं १२ िर्ों तक परेिान रहा। मुझे कुछ भी उत्तर वमल ही नहीं ंरहा था। मैंने उसकी खोज में भागना र्बन्द कर वदया और ध्यान, जप एिं कीतवन में लग गया। अर्ब मुझे िान्तन्त और उन्नवत-दोनों ंही प्राप्त हो गयी हैं।" गुरु में श्रद्धा, ग्रन्थ सावहर्ब में श्रद्धा, कीतवन, जप, ध्यान और उवचत पथ पर चलने का अभ्यास- ये सर्ब आपको आध्यान्तिक पथ पर उन्नवत करने में सक्षम करके िहाँ पहुँचा देंगे, जहाँ संियों ंऔर प्रश्ों ंकी सिसािना ही िेर् नहीं ंरहती।

१२१

मैं यह बार् भलीभाँडर् जानरा हूँ डक सन्तोि से शास्तन्त डमलरी है। डकन्तु मुझे एक सोंशय है। यडद मैं सन्तुष्ट रहरा हूँ, रो मेरी सभी अडभलािाएँ मर जायेंगी। मैं अकमतण्य और आलसी बन जाऊँगा। अपनी इच्छाओ ोंकी पूडर्त के डलए ही मैं इधर-उधर आरा-जारा हूँ, पररश्रम कररा हूँ और सडक्रय एवों उद्यमी रहरा हूँ। कृपया मेरे इस सोंशय का डनवारण करें। मैं बहर् डकोंकर्तव्यडवमूढ हूँ।

सन्तोर् आपको आलसी कभी नहीं ंर्बना सकता। यह सान्तत्त्वक गुण है, जो व्यन्तक्त को ईश्वरोनुमुखी र्बनाता है। यह मन को िान्तन्त एिं िन्तक्त प्रदान करता है। यह अनािश्यक एिं स्वाथवप णव पररश्रम को वनयन्तन्त्रत करता है। यह मनुर्ष् के आन्तररक चकुषु को खोल कर उसके मन को वदव्य वचन्तन की ओर प्रेररत करते हुए सान्तत्त्वक पथ की ओर अग्रसर करता है। यह उसकी स्थल िन्तक्त, अथावत् लोभ जो मनुर्ष् को स्वाथवप णव पररश्रम में लगाने िाला है, को आध्यान्तिक िन्तक्त-ओज में रूपान्तररत कर देता है। जो मनुर्ष् सनुतुष्ट है, िह सत्त्व से प णव भर जाता है और अर्ब िह और भी अविक कमवठ हो जाता है। िह अन्तमुवखी हो जाता है। िह अर्ब आन्तस्थत हो आन्तररक जीिन जीता है। िह अर्ब सदैि िान्त है। िह प्रिान्त एिं एकाग्रवचत्त हो कर अविक उद्यमी हो जाता है। मन की समस्त वर्बखरी हुई वकरणें अर्ब संकेन्तन्द्रत हो जाती हैं। क्या अर्ब आप इस र्बात को समझ गये हैं?

यह सन्तोर् की ही िन्तक्त है वजसके र्बलर्बते पर साधु और संन्यासी, फकीर और वभकुषु, वभक्षा पर वनिावह करते हुए, वनवश्चन्ततापिवक संसारभर में भ्रमण करते रहते हैं। सन्तोर् से िन्तक्त पा कर ही वजज्ञासु सािक आि-साक्षात्कार के पथ पर अग्रसर होता है और आध्यान्तिकता के दुष्कर एिं कंटकप णव पथ पर वनभीक हो कर चलने की िीरता रखता है।

१२२

डजन विओ ोंसे डवज्ञान का सम्बन्ध है, उनके डविय में डवज्ञान हमें सब-कुछ बराता है डक अमुक वि कैसे बनरी है और कैसे डवकडसर् होरी है। हमें डवकास होने के डचह्न भी बरा डदये जारे हैं। योग के अभ्यास में भी क्या साधक की उन्नडर् को माप सकने के इसी प्रकार के सुडनडिर् सोंकेर् हैं? उदाहरण के डलए, कुछ ऐसे अनुभव हो ोंजो उसे अमुक समय के बाद प्राप्त होगें, जैसे रीन मास के अभ्यास के बाद होगें या कुछ ऐसे अनुभव जो उसे एक वित बाद अर्वा और देर बाद होगें ?

विवभन्न योगासनों ंसे विवभन्न अनुभि प्राप्त होते हैं। उदाहरणाथव प्राणायाम और हठयोग की वक्रयाएूँ क्रवमक शृूंखलार्बद्ध मानवसक अनुभि प्रदान करेंगी। सभी प्रकार के लोकोत्तर प्रकाि वदखायी देना और अनाहत नाद सुनायी देना इसी श्रेणी में आता है। वजन सन्तों ंने इन योगों ंको वदया है, उन्होंने आध्यान्तिक अनुभिों ंके अत्यन्त सुवनवश्चत स्तर वदये हैं। जैसे-जैसे कुण्डवलनी चक्र से चक्र की ओर र्बढ़ती जाती है, योगी को विविर् प्रकार के प्रमाणकारी अनुभि प्राप्त होते हैं। ऐसा इसवलए होता है वक प्रत्येक चक्र का वकसी एक विविर् तत्त्व पर िासन होता है और उस पर प णव वनयन्त्रण होता है, अतः िह उसी तत्त्व से सम्बन्तन्धत अनुभि देता है।

इसी प्रकार तान्तन्त्रक सािना में भी है। उसमें भी आध्यान्तिक अनुभिों ंकी सुवनवश्चत स ची दे दी गयी है। प्रत्येक सािना की अपनी विविर् वसन्तद्ध है; इस प्रकार वजस सािना का अभ्यास जो सािक करते हैं, उसे मापने िाले प्रमाणनीय अनुभि उन सभी को होते हैं।

वकन्तु यह सभी अनुभि वनम्न श्रेणी के एिं हल्के प्रकार के हैं। यह मानवसक अनुभि हैं, जो आिश्यक नहीं ंहै वक सािक की आध्यान्तिक उन्नवत को स्पष्टतया प्रकट करते हों।ं यहाूँ तक वक भक्त के रोमांच एिं अशुरुप्रिाह के अनुभि भी, भले ही िह हठयोगाभ्यासी के अनुभि की श्रेणी में नहीं ंआते तो भी, यह भी आध्यान्तिक उन्नवत के प णव मानदण्ड नहीं ंहैं।

जर्ब आप आिा के साम्राज्य में प्रिेि करते हैं तो आप 'उस अनन्त' के क्षेत्र में पहुूँच जाते हैं। योग अनन्त हैं और अनुभि भी अनन्त हैं। प्रत्येक व्यन्तक्त का अपना योग है; क्ोंवक प्रत्येक व्यन्तक्त अपने वनजी संस्कार और िासनाएूँ ले कर आया है और िह अपने वनजी ढंग से लक्ष्य पर पहुूँचने का प्रयास करता है। यह दोनों ंवमल कर उसे विवभन्न अनुभि प्रदान करते हैं। उदाहरण के वलए, जैसे ही लोकातीत, अनन्त, िाश्वत आिा में प्रिेि करता है, सािक महान् आन्तररक िान्तन्त एिं अिणवनीय आनन्द अनुभि करता है। िह अपने आस-पास क्ा हो रहा है, इससे जल्दी-जल्दी प्रभावित नहीं ंहोता। इतना ही नहीं,ं अन्य जो भी उसके सम्पकव में आते हैं, उनमें भी िह िान्तन्त एिं प्रसन्नता विवकरवणत करने में सक्षम हो जाता है। िह भला र्बन कर भलाई प्रसाररत करने लग जाता है। आध्यान्तिक उन्नवत का यह सिोत्तम संकेत अथिा मानदण्ड है। भगिान् पररप णव भलाई हैं। इसवलए जो सािक भगिद्-साक्षात्कार की ओर उन्नत होता है, िह भलाई करने में उन्नत हो जाता है। उसके अिगुण अथिा दोर् िीरे-िीरे समाप्त हो जाते हैं और उनका स्थान उदात्त सद्गुण ले लेते हैं। यवद यह सािविक महत्त्वप णव तर्थ् उसमें उपलब्ध नहीं ंहै तो अन्य सभी दृश्यािलोकन एिं ध्वन-श्रिण इत्यावद प णवतया व्यथव हैं। अपनी उपन्तस्थवत मात्र से ही योगी लोगों ंको भला जीिन जीने, घृणा से और दुभाविना से मुक्त रहने के वलए प्रेररत कर देता है। उसका अपना हृदय समस्त विश्व के प्रवत प्रेम से आप ररत है, अतः िह अत्यन्त स्वाभाविक रूप से तथा वनःस्वाथव भाि से सर्बकी सेिा तत्परताप िवक करता है। यह सभी िास्तविक आध्यान्तिक उन्नवत के संकेत हैं।

वकन्तु इस सर्बसे परे, परम अनुभ वत है। िह िणवनातीत है। िान्तन्त एिं प्रसन्नता, मन की अर्बाि प्रिान्तािस्था-यह सर्ब उन्नवत के महान् संकेत हैं, वकन्तु यह लक्ष्य-प्रान्तप्त नहीं ंहै। लक्ष्य तो भगिान् के साथ एक हो जाना है। आपको वनवश्चत रूप से भगिान् के साथ एक होना चावहए। स्वयं को सद्गुणों ंएिं भलाई में स्थावपत कर लेने के उपरान्त 'ध्यान के सतत अभ्यास' द्वारा यह लक्ष्य प्राप्त वकया जा सकता है। िह परमानुभ वत, जर्ब योगी को यह अनुभि हो जाता है वक िह भगिान् के साथ एक हो गया है, इसका िणवन िब्दों ंद्वारा नहीं ंवकया जा सकता।

१२३

श्री शोंकराचायत अद्वैर्ी रे् और उनके दाशतडनक लेर् डसि करर्े हैं डक वे नाम-रप डवहीन परब्रह्म में डवश्वास करर्े रे्, र्ो साकार ब्रह्म के प्रडर् उनका भस्तिभाव कैसे सम्भव रा ?

क्योंवक ज्ञान और भन्तक्त, सार रूप में एक ही हैं! उनके द्वारा रवचत विवभन्न स्तोत्रों ंको देखें। उनसे स्पष्ट संकेत वमलता है वक उनमें अत्यन्त उच्च कोवट की भन्तक्त विकवसत हो गयी थी। आि-वनिेदन अथिा आि-समपवण ज्ञान की ओर ले जाता है और ज्ञान एिं पराभन्तक्त परस्पर पयावयिाची हैं।

आजकल लोग भन्तक्त की वनन्दा करते हैं और िे सोचते हैं वक यह ज्ञान से वनकृष्ट है। उन्हें भन्तक्त के सम्बन्ध में कुछ ज्ञात नहीं ंहै। िे समझते हैं वक िे एकदम सीधे ही ज्ञान सोपान में उतर सकते हैं। िास्ति में उन्हें भगिान् में श्रद्धा ही नहीं ंहै। बस िे भगिान् के प्रवत कहीं ंसे कोई बौन्तद्धक धारणा प्राप्त कर लेते हैं, वकन्तु यह धारणा उनकी कुछ भी सहायता नहीं ंकरती। आिश्यक तैयारी के वबना ज्ञानयोग का कोई लाभ नहीं ंहै।

१२४

स्वामी जी! कई स्थान, जैसे नागोर, डशरडी, डरुवनमलै और ऋडिकेश, सदैव शास्तन्त से र्री एक डवडशष्ट प्रकार के आध्यास्तत्मक आनन्द से आपूररर् हैं। क्या स्वामी जी, यह इसडलए है डक इन स्थानो ंमें उन डवडशष्ट सन्त के व्यस्तित्व, उनकी र्पस्या और डसस्ति का वहाँ के वार्ावरण की पावनर्ा पर दीघत काल र्क प्रभाव रहर्ा है ?

हाँ, हाँ! और इतना ही नहीं;ं िह सन्त स्वयं भी अभी िहाँ उन स्थानों ंमें वनिास करते हों,ं यह भी सिंभि है। जीिन्मुक्त सन्त की यह स्वतन्त्र इच्छा है वक िह चाहे तो ब्रह्म में लीन हो जाये या सूक्ष्म रूप में रहते हुए लोक-संग्रह के कायव, वजज्ञासुओं ंको वनदेवशत करने, लोगों ंमें धावमवक उत्साह जाग्रत करने और इसी प्रकार के अन्य कायव करने में लगे रहें। कई जीिन्मुक्त सन्तों ंमें, परमािा की परम इच्छा के अनुसार ऐसा प्रकटीकरण हुआ है। अतः वजस स्थान पर सन्त ने तप वकया और वसद्धािस्था प्राप्त की थी, उसी स्थान को उनकी अदृश्य आिा स्थायी रूप से वनिास के वलए चुन ले तो िह स्थान सन्त के वदव्य गुणों–शान्तन्त, आनन्द एिं ज्ञान-वििेक का वनिास स्थान बन जाता है।

१२५

इस्तियाँ सामान्यर्या बडहमुतखी हैं। कहर्े हैं डक यडद इन्हें अन्तमुतखी कर डलया जाये, र्ो व्यस्ति मुस्ति प्राप्त कर लेगा। 'अन्तमुतखी करने' का क्या अर्त है?

श्री राम के विषय में सोचें और राम, राम, राम का जप करें। जब आप मन में राम, राम कह रहे हों ंतो सामने श्री राम का वचत्र रख लें। इन्तन्द्रयाँ अन्तमुवखी हो जायेंगी।

अभी तो आँखें पदाथों की ओर दौडती हैं और कान विवभन्न आिाजों ंकी ओर भागते हैं। जब आप ऊँचे स्वर में राम, राम बोलेंगे तो आपके कान केिल राम, राम सुनेंगे और इधर-उधर नहीं ंभागेंगे। आपके अन्तचवक्षु केिल राम का वचत्र देखेंगे। मन भगिान् पर एकाग्र हो जायेगा, यह विषय–िस्तुओं ंकी ओर नहीं ंजायेगा। अतः अपने भीतर टकटकी लगा कर देखें, अन्तदववशवन करें। आप उस समय प्राणायाम भी कर सकते हैं। श्वास को रोक लें। प्राण ही इन्तन्द्रयों ंको बल देते हैं। प्राणों ंको वनरुद्ध कर दें और उन्हें संकेन्तन्द्रत करने का प्रयत्न करें, वजससे वक इन्तन्द्रयों ंको बाहर भागने की शन्तक्त न वमले। धीरे–धीरे, अभ्यास के द्वारा इन्तन्द्रयाँ मन में लीन हो जायेंगी। मन एकाग्र हो जायेगा और आि-लीन हो जायेगा। यही समावध-अिस्था है। वनत्य इसका अभ्यास करें।

१२६

क्ा पूणतर्या इच्छा रडहर् हो जाना सम्भव है ? पिाात्य दाशतडनको ोंका डवचार है डक इच्छाओ ोंका पूणतरप से त्याग असम्भव है।

पाश्चात्य दिावनक ििु हैं। पतंजवल योग सत्र में और योगीावसष्ठ में यह ि णवन वकया गया है वक प णव वनष्कामता ही मोक्ष है। जीिनुमुक्त प णवरूपेण वनष्काम होता है। इच्छा अपणवता का नाम है। जीिनुमुक्त पररप णव अिा है। उसमें इच्छा कैसे हो सकती है? पणवता एिं अपणवता दोनों ंएक साथ कैसे हो सकते हैं? अतुः परी तरह इच्छा विहीन होना िसि है।

१२७

मनोवैज्ञाडनक यह नही ोंमानरे् डक परम चैर्न्य-अवस्ा भी कुछ है। वह रो् केवल चेर्न और अवचेर्न को ही मानरे् हैं।

उल्ल कहता है, 'प्रकाि का अन्तस्तत्व नहीं ंहै।' तो क्ा प्रकाि नहीं ंहै? इसी तरह 'उल्ल' प्राध्यापक कहता है वक परम चैतन्यािस्था नाम की कोई िसुतु नहीं ंहोती तो क्ा परम चैतन्यािस्था समाप्त हो जायेगी? योगीावसष्ठ पढ़ें जो परम चैतन्य की सत्ता की पुवष्ट करता है। जो परम चेतना को नकारता है, िह उस 'उल्ल' के समान है जो प्रकाि को केिल इसवलए नहीं ंमानता क्ोंवक िह प्रकाि को देख नहीं ंसकता।

१२८

मैं दश डमनट से अडधक समय र्क ध्यान नही ोंकर सकर्ा, क्ोडोंक कुछ समय के बाद मेरा मन डविय-विुओ ोंमें भटकने लग जार्ा है।

जर्ब आपकी रुवच जप और ध्यान में विकवसत हो जायेगी, तर्ब आप जप-ध्यान के वलए दीघव काल तक र्ैबैठ सकेंगे। जप और ध्यान को र्बढ़ाते जायें। रावत्र में सोने से पहले, प्रातुः ४ र्बजे और दोपहर के भोजन से पहले भी आपको जप और ध्यान करना चावहए। जैसे आप वदन में तीन-चार र्बार चाय पीते हैं, उसी तरह वदन में तीन-चार र्बार जप-ध्यान करना चावहए। मन इिर-उिर भटकता है, तो भी वचन्ता नहीं ंकरनी चावहए। अभ्यास करते रहने से यह िीरे-िीरे आपके वनयन्त्रण में आ जायेगा। जर्ब मन र्बहुत अविक भागने लगे तो कीतवन प्रारि कर दें। कायव करते समय और टहलते समय भी नाम-स्मरण- श्री राम, श्री राम करते रहें।

यवद लम्र्बे समय तक पद्मासन में नहीं ंर्ैबैठ सकते तो आप सोफे पर र्ैबैठ कर जप और ध्यान कर सकते हैं। पद्मासन में ही र्ैबैठना है, यह आिश्यक नहीं ंहै।

प्याज और लहसुन को पणवतया त्याग दें। इनका उपयोग परी तरह से छोड दें। घर में ही इन्हें र्बनाना र्बन्द कर दें। यवद आप इनका उपयोग घटाना आरि करेंगे तो वकसी एक वदन थोडा-सा खा लेंगे और वफर वकसी वदन और अविक खाने की इच्छा होने लगेगी। वसगरेट का आदी यवद इसे कम करने का प्रयत्न करता है तो कुछ वदन तक तो र्बहुत कम संख्या में पीता है, वकनुतु वफर कुछ ही वदन र्बाद मानो वपछली कमी परी करनी हो, इस तरह से और भी अविक िम्रपान आरि कर देता है। अतुः इनको परी तरह से त्याग दें।

यवद आप अपनी गाय को र्बवढ़या वर्बनौले और खली खाने को देंगे तो िह पडोसी के खेत में घास खाने जाने के स्वभाि को छोड देगी। अभी आपका मन उन्ीं ंरसगुल्लों ंऔर पेडों ंके पीछे भागता है, वजनका स्वाद आपने उसे अर्ब तक चखाया है। वकनुतु यवद आप उसे जप और ध्यान के आनन्द को प्रदान करेंगे तो वफर यह सांसाररक विर्य- िसुतुओं ंके पीछे नहीं ंजायेगा। जर्ब आपमें जप और ध्यान के प्रवत रुवच विकवसत हो जायेगी तो यह अपने भटकने के स्वभाि को छोड देगा।

१२९

मैं कुछ असमोंजस की सी स्तरूडर् में इसडलए हूँ डक मुझे यह ज्ञार् नही ोंहै डक मेरे जीवन का लक्ष्य क्ा है। मुझे यह बर्ाया गया है डक यडद मुझे यह ज्ञार् हो जाये र्ो मेरे डलए ध्यान करना सरल हो जायेगा। क्ा आप बर्ा सकरे् हैं डक इसका समाधान कैसे र्ोजा जा सकर्ा है?

जीिन का लक्ष्य ईश्वर साक्षात्कार है। यिुि के साथ एक हो जाना जीिन का लक्ष्य है। पािविक िृवत्तयों ंका रूपान्तरण करके वदव्यता को प्राप्त करना जीिन का उदे्देश्य है। यवद आप क्रोि को वनयन्तन्त्रत कर लेते हैं, स्वाथव भाि को दर कर देते हैं और सहनिीलता, दया, वनुःस्वाथवता, उदारता, साहस, क्षमा की भािना को विकवसत कर लेते हैं तो और वदव्य र्बन जायेंगे। क्ा स्वाथवपरता अच्छी है? नहीं।ं अतुः वनुःस्वाथी र्बनें। क्ा लोभी होना अच्छा है? क्रोि अच्छा है? कामिासना अच्छी है ? कामुकता अच्छी है? दिाचरण अच्छा है? यह मानि को वनम्न प्रिवत्तयों ं िाला र्बनाते हैं। अतुः इन सर्बको दर करके वनुःस्वाथी, उदार, ियविील, सहनिील, िुद्ध-पवित्र एिं विनम्र र्बनें। यह जीिन का लक्ष्य है।

१३०

क्ा सोंन्यास लेना और अपने मार्ा-डपर्ा एवों अपने आडश्रर्ो ोंके प्रडर् कर्तव्य से डवमुर् हो जाना धमत के डवपरीर् नही ोंहै? क्ा व्यस्ति के पररवार के सदस्य विाव में उसके आडश्रर् होरे् हैं?

दसरे लोग आप पर आवश्रत हैं, यह िारणा केिल भ्रम के कारण है। केिल भगिान् ही प्रते्येक व्यन्तक्त का ध्यान रखने िाले हैं। भ्रमिि आप यह समझते हैं वक अपने सगे-सम्बन्तन्धयों ंकी देख-रेख करने िाले आप हैं और उनके वलए आप अनन्त कष्ट-क्लेि तथा तकलीफें सहन करते हैं। यवद आप घर-गृहस्थी छोड कर एकान्तिासी भी हो जायें, तो भी भगिान् आपके पररिार के वलए सर्ब व्यिस्था करके उनकी देख-रेख का अन्य प्रर्बन्ध कर देंगे और आपको कोई पाप नहीं ंलगेगा, वकनुतु यह केिल तभी होगा यवद आपमें तीव्र एिं उत्कट िैराग्य है। स्वामी रामतीथव में ज्वलन्त िैराग्य था, अतुः उन्ोंने अपनी नौकरी से त्यागपत्र दे वदया और पत्नी एिं दो पुत्रों ंको छोड कर चले गये तथा संन्यास िारण कर वलया। इसी प्रकार भगिान् र्बुद्ध ने भी अपने राजसी िैभि और पररिार को त्याग वदया था और संन्यास िारण कर वलया था।

१३१

क्ा कोई व्यस्ति इस सोंसार में विाव में दूसरो ोंकी सहायर्ा कर सकर्ा है, अर्वा यह डवचार उसके मन का भ्रम मात्र ही है? क्ा सत्य यह नही ोंहै डक मनुष् का डवकास अर्वा पर्न उसके डनजी कमों का फल होर्ा है र्ा दूसरे के कमों का उस पर कोई प्रभाव नही ोंपड़र्ा ? क्ा

व्यस्ति की भली-बुरी पररस्तरूडयाँु उसके अपने ही कमों के पररणाम-स्वरप ही नही ोंहोरी?ों क्ा कोई व्यस्ति आगे बढ कर उसकी और दूसरो ोंकी पररस्तरूडयों ोंको पररवडर्तर् कर सकर्ा है?

वनवश्चत रूप से व्यन्तक्त ऐसा करने में पहल कर सकता है। िह स्वयं अपना तथा दसरों ंका भी भला कर सकता है। िह पररन्तस्थवतयाँ एिं िातािरण परिवतवत कर सकता है। जरा देन्तखए, िह दसरों ंके वलए वकतना कर सकता है, सचमुच उनकी वकतनी और कैसे सहायता कर सकता है। व्यन्तक्त अविवक्षतों ंएिं अज्ञावनयों ंको विक्षा और ज्ञान दे सकता। है, वनिवनों ंऔर जरूरतमन्दों ंको वित्तीय सहायता प्रदान कर सकता है।

हि अनाथों ंको विवक्षत कर सकता है तथा जहाँ असहाय र्बच्चों ंकी देख-रेख की जाती हो, ऐसी संस्थाओं ं में सहयोग दे सकता है। व्यन्तक्त न केिल अपनी प री कमाई तक इसमें लगा सकता है, अवपतु इससे भी अविक र्बहुत कुछ वकया जा सकता है। यथाथव में द सरों ंकी सहायता कर सकने जैसे विचार के सम्बन्ध में आपको सन्देह क्ों ंहै ? गाँिी जी का उदाहरण आपके सामने है। उन्होंनें राष्टर और विश्वभर के वलए क्ा कुछ सेिा नहीं ंकी!

१३२

भस्ति को डवकडसर् करने का सबसे सरल ढोंग क्ा है?

भन्तक्तभिा को र्बढ़ाने के वलए सर्बसे अविक सरल मागव है-भगिान् की लीलाओं ंका र्बार-र्बार श्रिण करना। वजतनी र्बार आप उनकी लीलाओं ंऔर मवहमा को सुनेंगे, उतनी ही िीघ्र आपके मानस पटल पर उनका रूप अंवकत हो जायेगा। और जर्ब आप उनकी मवहमा को सुनते ही रहेंगे तो भगिान् का वचत्र आपके हृदय में सुदृढ़ एिं सुस्पष्ट हो जायेगा। जैसे स्वणवकार वजस मोम को िरती पर वर्बखरे हुए स्वणव-कण एकवत्रत करने के वलए
उपयोग में लाता है, उस पर प्रवतवदन स्वणव-कण वचपकते रहते हैं और जर्ब िह प रा भर जाता है तो िह भी स्वणव
की भाँवत चमकने लग जाता है। वर्बलकुल उसी तरह जर्ब मन में भगिान् का रूप-आकार प णवतया सुदृढ़ एिं उज्ज्वल तथा सुस्पष्ट हो जायेगा तो भक्त में उनका अटट स्मरण र्बना रहेगा और उत्कट भन्तक्त विकवसत हो जायेगी।

१३३

क्ा हम गुरु के डनदेशन के डबना कुण्डडलनीयोग का अभ्यास कर सकर्े हैं?

नहीं, ं उससे तो सर्ब प्रकार की उलझनें उत्पन्न हो जायेंगी। कुण्डवलनीयोग का अभ्यास करने के वलए आपके पास उस समय एक पारंगत विक्षक का होना आिश्यक है।

वकन्तु आप हठयोग के द्वारा कुण्डवलनी जाग्रत करने के वलए इतने वचन्तन्तत क्ों ंहैं? सही ढंग से की जाने िाली वकसी भी सेिा से कुण्डवलनी जाग्रत हो जायेगी। यह भन्तक्त के द्वारा, गुरु-कृपा से, वनष्काम कमवयोग के सतत अभ्यास से, िेदान्त-विचार से और ध्यान से भी जाग्रत की जा सकती है। भगिान् के प्रवत पणव समपवण कर देने और परी तरह से इच्छाविहीन हो जाने से आप हर प्रकार की अतीन्तन्द्रय िन्तक्तयाँ प्राप्त कर सकते हैं। वनु:स्वाथव सेिा सवहत नाम-स्मरण इस युग के वलए सिोत्तम योग है। इससे आपको ईि-कृपा की प्रान्तप्त होगी और उनकी कृपा से, उनकी वदव्य िन्तक्त आपमें प्रिावहत होने लगेगी। उसके द्वारा आप क्ा कुछ प्राप्त नहीं ंकर सकते ? ये सभी अतीन्तन्द्रय िन्तक्तयाँ आध्यान्तिक पथ की र्बािाएँ हैं। हमें इनके पीछे नहीं ंभागना चावहए। यवद हम मानिता की सेिा में लगे रहें, इतना ही नहीं, ं यवद हम अनजाने में भी भन्तक्तयोग या कमवयोग के माध्यम से अतीन्तन्द्रय

न्तिक्तयाँ प्राप्त कर लेंगे तो उनके दुष्प्रभिा से ग्रवसत हुए वर्बना हम अनजाने ही उन्हें मानिता की भलाई में उपयोग करते रहेंगे। यही ढंग सिोत्तम है।

१३४

स्वामी जी महाराज ! डनगुतण ब्रह्म के डविय में आपका क्ा डवचार है? क्ा इसका अर्त मात्र शून्य से है? डफर रो यह हमें कुछ प्रभाडवर् नही ोंकररा। शून्यरा अर्वा 'कुछ भी नही'ों पर कौन ध्यान करना चाहेगा ?

वनगुवण 'कुछ भी न होना' नहीं ंहै; अवपतु यह तो प्रत्येक, जो अच्छा है, श्रेष्ठ है, उसका प णव रूप में होना है। इसमें आपको पणव िुभता, पररपणव भलाई, समस्त सौन्दयव, प णव प्रसन्नता, स्वास्थ्य, मिुरता, िुद्धता, िान्तन्त, सर्ब-कुछ अपनी पररपणवता में विकवसत वमलेगी। द र से यह पररप णवता अवचन्त्य अथिा अभिानीय हो जाती है और सन्तों ंने इसे वनगुवण कहा। एक र्बार जर्ब िे िहाँ पहुँच जाते हैं, तर्ब िे इसकी अकथनीय अनुभ वत में लीन हो जाते हैं। यह 'कुछ भी न होना' नहीं,ं अवपतु सर्ब-कुछ होना है, और यह इससे भी कहीं ं अविक है, क्ोंवंक यह अवनिवचनीय है, किल इतना जान लें वक जो कुछ भी माया में वदखायी देता है, अथिा जो प्रतीत होता है, जैसे र्बुराई, कुरूपता, कष्ट, पररितवन, जन्म, क्षय, मृतुयु इत्यावद, यह सर्ब इसमें नहीं ंहैं, क्ोंवंक यह माया से परे-मायातीत है। वनगुवण ब्रह्म में कोई भी माया के गुण, यथा नीला रंग इत्यावद नहीं ंहैं। वनगुवण का अथव यही है।

१३५

स्वामी जी, भाररीय ग्रन्ो ोंमें 'काल' शब् बहर् बार आरा है। इसका सही अर्त क्ा है?

यह महाकाल का साकार रूप है। यह नाम-रूप को समाप्त करने िाला है। हमारे वहनद िमव के सिेश्वरिादानुसार वदव्य-पदानुक्रम में र्बहुत से दिेी-दिेता हैं। जैसे हमार यहाँ सरकार में र्बहुत से मन्त्री और पदाविकारी िासन को चलाने के वलए होते हैं, वर्बलकुल इसी तरह इस संसार को चलाने के वलए दिेता हैं। जगत् की सृवष्ट, पालन और संहार के विवभन्न कायों को वनभाने के वलए अलग-अलग दिेता हैं। कुछ को िायु, अवग्न और जल जैसे विवभन्न तत्त्वों ंका कायवभार सौंपा गया है, कुछ जन्म, मृतुयु, जीिन-रक्षा और रोगों ंके प्रभारी हैं। काल अथिा यम या िमवराज मृतुयु के दिेता हैं। एक प्रकार से यह सारा संसार उनके अिीन अथिा उनके वनयन्त्रण में है; क्ोंवंक जर्ब समय आता है तो िह सभी प्रावणयों ंके इस पृथ्वी के प्रिास-काल का अन्त कर देते हैं। किल आत्मसाक्षात्कार-प्राप्त व्यन्तक्त ही इस काल का अवतक्रमण करता और वनज-स्वरूप का साक्षात्कार प्राप्त करता है। सभी सािनाओं ंका उद्देश्य इस काल से अतीत जाना, मृतुयु पर विजय प्राप्त करना और कालातीत होना है।

१३६

कृपया मुझे बरायें डक वैश्व चेर्ना अर्वा परम चेर्ना का क्ा अर्त है ?

यह चेतना की िह अिस्था है वजसमें आप जागरूक रहते हैं वक यहाँ जो कुछ भी है, सर्ब परमाि है, और इसके अवतररक्त िह ऐसा स त्र है जो समस्त ििीिाओं ंको परस्पर संयुक्त रखता है। भगिान् िह चैतन्य तत्त्व हैं वजससे सम्प णव सृवष्ट प्रकावित होती है। इस परम चैतन्य अथिा भगिान् का साक्षात्कार प्राप्त करके व्यन्तक्त इस पररितवनिील जगत् के र्बन्धन से, नाम-रूपों ंकी भ्रान्तन्त से मुक्त हो जाता है। यही परमाि-साक्षात्कार अथिा आि-साक्षात्कार की अिस्था है।

आिानुभ वत प्राप्त कर लेने पर व्यन्तक्त प णवतया भगिान् में विलीन हो जाता है। यह ठीक इसी प्रकार से है जैसे नवदयों ंका सागर में प्रिेि करना; िह अपनी अलग पहचान को खो देती है और अर्ब आप इस अन्तर को नहीं ं जान पाते वक कौन-सा जल गंगा का है और कौन-सा गोदािरी का। भगिान् के अन्तस्तत्व के समक्ष जगत् की भ्रान्तन्त उसी प्रकार वमट जाती है जैसे प्रकाि के आ जाने पर सपव की भ्रान्तन्त रज्जु के अन्तस्तत्व में वसमट कर समाप्त हो जाती है।

१३७

स्वामी जी, स्वयों को कमत से मुि कैसे रर्ा जा सकर्ा है ?

अपने दैवनक कतवव्य-कमव करते समय यह समझें वक जो कुछ भी आपके चारों ंओर हो रहा है, यहाँ तक वक आपके अपने कमों के भी आप केिल द्रष्टा मात्र हैं। इसे साक्षी भाि कहते हैं। अपने अन्तमवन में आपको अनुभि करना चावहए वक आप अपने भीतर कायव करने िाले से वभन्न हैं। यह िेदान्त का वसद्धान्त है।

इसके अवतररक्त एक अन्य ढंग है जो इससे सरल वकन्तु इतना ही िन्तक्तिाली है, िह है वनवमत्त भाि। अनुभि करें वक सभी कायों के िास्तविक कताव तो भगिान् हैं, आप उनके हाथों ंके एक उपकरण हैं। इस प्रकार समझ लेने से आपके द्वारा वकया गया प्रत्येक कमव भगिान् की प जा र्बन जायेगा और आप उससे र्बंधेंगे नहीं।ं वर्बना वकसी आि और इच्छा के तथा अहंकार के वर्बना कायव करें। कतावपन की भािना का वनम वलन कर दें, समझें वक कुछ भी करने िाला मैं नहीं ंहूँ। इस प्रकार आप कमव-र्बन्धन की शृंखला से मुक्त रहेंगे। आप नये कमव नहीं ंजोडेंगे। अपने प्रारब्ध कमों का भुगतान होते रहने दें, और इस प्रकार आप मोक्ष प्राप्त कर लेंगे।

१३८

स्वामी जी, अपनी सत्य की र्ोज में, मैं समझर्ा हूँ डक भगवान् यीशु जैसे महान् रक्षक हमारी सहायर्ा कर सकर्े हैं। डकन्तु ऐसा र्ो नही ोंहोर्ा डक ऐसे महात्मा सदा ही हमारे बीच डवद्यमान रहर्े हो।ों डफर हम क्ा करें, स्वामी जी ?

सन्त यवद इस संसार में विद्यमान रहते हैं, दुजवन भी सदा ही होते हैं। रक्षक और भक्षक–िाक भी संसार में सदा ही रहते हैं, क्ोंवक यह संसार द्वन्द्वात्मक है। यहाँ भले और र्बुरे-दोनों ंही सदा विद्यमान हैं। परन्तु पणव भलाई तो केिल भगिान् में ही है। आपको सन्तों ंसे वनदेि लेने चावहए, केिल िही आपको ब्रह्मविद्या की विक्षा दे सकते हैं। पुस्तकें वनवश्चत रूप से आपकी सहायता करेंगी, िह आपको महािाओं ंसे सम्पकव स्थावपत करिा देंगी। जर्ब आप र्बाइवर्बल पढ़ते हैं, आपका भगिान् यीिु से सम्पकव स्थावपत हो जाता है। जर्ब आप गीता पढ़ते हैं तो आपकी

भगिान् श्रीकृष्ण के साथ समरसता स्थावपत हो जाती है। इससे भी सहायता वमलती है। वकनुतु जैसे पाकि्का की पुस्तक पढ़ने मात्र से आप पाककला नहीं ंसीख सकते इसी तरह किेल पुस्तकें पढ़ कर आप योगासन भी नहीं ं सीख सकते। वकनुतु इसका अथव यह भी नहीं ंहै वक आप अनन्त काल तक विक्षक वमलने की प्रतीक्षा ही करते रहें, जर्ब आपके मन में तीव्र इच्छा जाग्रत हो जाती है तभी आप अपनी रुवच अनुसार ग्रन्थ ले कर अभ्यास आरि कर दें, उदाहरण के वलए र्बाइवर्बल जैसा कोई भी िमवग्रन्थ ले सकते हैं।

१३९

क्ा इस्तियाुँ वोंडचर् र्नें के डलए अर्वा नष्ट कर देने के डलए दी गयी हैं। सोंन्यासी, योडगयो ोंके आदशत यही र्ो कहरे् हैं।

यूनानी आदशत डफर भी जीवन के सुर्-भोगो ोंके सम्बन्ध में मध्यमागी डवचारधारा रर्े हैं। अडधकाोंश र्कतबुस्तिपरक पडिमी डवचारक इसी को सही मानरे् हैं।

आधुडनक मनोवैज्ञाडनक इस पर बल देरे् हैं डक शरीर की माुँगो ोंअर्वा आवश्यकर्ाओ, ों जैसे भोजन और कामवासना, को मारने या दबाने से र्ी अन्य मनोवेगो, ों जैसे मोह एवों आसस्ति को कुचलने से सामान्यर्या लोग अपने डलए मानडसक समस्याएुँ उत्पन्न कर लेरे् हैं। क्ा इस धारणा में कुछ र्थ्य है?

नहीं; ं इन्तन्द्रयाूँ हमें किेल िंवचत रखने अथिा समाप्त कर देने के वलए नहीं ंदी गयी हैं। न ही सुख-भोगों ंमें रत रहने के वलए दी गयी हैं। िास्ति में, वकसी भी सांसाररक उद्देश्य के वलए इन्तन्द्रयाूँ नहीं ंदी गयीं। ं आध्यान्तिक सािकों ंके वलए सन्तों ंका सिोच्च दृवष्टकोण यही है। इन्तन्द्रयाूँ इसवलए दी गयी हैं वक इनका समझ-र्ब झ के साथ सतकवतापिवक उपयोग करके उस िसुतु को प्राप्त वकया जाये जो इन्तन्द्रयों ंकी पहूँच से कहीं ंअविक ऊपर और परे है। आि-संयम के सही अवभप्राय और महत्त्व को समझने के वलए, इस प्रश् को और अविक व्यापक दृवष्टकोण से समझना होगा।

मनुर्ष्-जावत को इन इन्तन्द्रयों ंके साथ-साथ श्रेष्ठ एिं विदिासचक रुबुन्तद्ध की योग्यता भी दी गयी है वजसके द्वारा भले-रुबुरे, उवचत-अनुवचत का वििेक एिं उनमें से चयन करने आवद की क्षमता भी उसे प्राप्त है। इन्तन्द्रयाूँ, इनके रुबुन्तद्धमत्तापणव वनदेिन के अिीन रहते हुए कायव करने के वलए वमली हैं; इसका उद्देश्य इन्तन्द्रयों ंको प णव रूप से नकारना नहीं, ं अवपतु संयम के द्वारा एक ऐसा सुख प्राप्त करना है जो भोग-तृन्तप्त से प्राप्त सुख से लाखों ंगुणा श्रेष्ठ एिं उत्तम है। जर्ब व्यन्तक्त इस तर्थ् को अनुभि करता है, तो उसे समझ आ जाता है वक योग सािक के वलए वकस प्रकार यह आि-संयम, कविाइट अथिा अरुवचप णव अनैन्तच्छक दमन की र्बात वर्बलकुल भी नहीं ंहै। सही समझ-र्बझ के दृवष्टकोण से अपनाये जाने से यह प्रसन्नताप णव एिं ऐन्तच्छक अनुिासन है जो अनन्त गुणा महान् एिं कहीं ंअविक आनन्दपणव अनुभि है। क्ा मछली पकडने िाला, र्बडी मछली फूँसाने के वलए लगाये जाने िाले कीडे की हावन से कभी दु:खी होता है?

और वफर तपश्चयाव का मलािार अविकांि लोग सही रूप में समझते भी नहीं। ं तपश्चयाव और त्याग दमन पर आिाररत नहीं ंहै। सही ढंग से की गयी तपश्चयाव के मल आिार एिं वसद्धान्त ऊजाव का संरक्षण एिं उदात्तीकरण हैं। सच्चा तपस्वी अपनी स्वाभाविक प्रिृवत्तयों ंको रोक कर, दसरी ओर मोड कर, उवचत वदिा दे कर अन्ततोगत्वा उन्ें तत्त्वान्तररत कर देता है। र्बलपिवक वकये जाने िाले दमन से होने िाले अनुवचत अप्रत्यक्ष प्रभाि, यथा-मनोग्रन्तन्थ, स्नायु-रोग इत्यावद का यहाूँ स्थान ही नहीं ंहै। वनस्सन्ेदेह, आिुवनक मनोिैज्ञावनकों ंके दमन

सम्बन्धी विचार सही हैं, वकनुतु व्यन्तक्त को यह वनवश्चत रूप से ज्ञात होना चावहए वक ििमवक तपश्चयाव-जहाँ प्रवक्रया उवचत वदिा में प्रिावहत करते हुए ऊजाव का रूपान्तरण करने की है- िहाँ यह लाग नहीं ंहोता; और इसका सदैि
स्मरण रखना चावहए वक तपस्ा उस योग का अंग है जो ऐसी अद्भुत पद्धवत (मानवसक प्रविक्षण एिं संसूकृवत की) प्रदान करता है वजससे वकसी भी प्रकार के स्नायविक रोग सम्बन्धी मनोग्रन्तन्थयों ंअथिा सनकों ंकी सिंभािना समाप्त हो जाती है।
सत्य तो यह है वक अविकांि लोग यवत–मव को सही ढंग से समझते नहीं,ं और दुभावग्यिि स्वयं संन्यासी ही इसे सही रूप में नहीं ंसमझते वजसके पररणामस्वरूप, वजज्ञासु सािक-जगत् में हमें सच्चे अथिा िास्तविक तपस्वी र्बहुत ही कम वमलते हैं।

योग, आन्तररक सुसंसूकृवत, सामावजक भलाई, आविष्कार, िैज्ञावनक उन्नवत और अन्ततोगत्वा, अन्तदविवन अथिा सहजानुभ वत की प्रान्तप्त जैसे उच्चतर लक्ष्यों ंके वलए, संकेन्तन्द्रत इन्तन्द्रयों ंकी अद्भुत क्षमताओं ंका समथवन करता है। इन्तन्द्रय िन्तक्तयों ंका रूपान्तरण र्बुन्तद्ध एिं वििेकप ि वक वनणवय के द्वारा वकये गये संयम से वकया जाना होता है। उच्चतर भले के वलए उनकी असीम क्षमताओं ंका उपयोग करना चावहए, न वक नासमझीप णव, िििुवत्तयुक्त क्षवणक सुख के वलए वनलवज्जताप िवक अपव्यय करते रहना चावहए। इस दृवष्टकोण से विचार करके, सािक को इन्तन्द्रयों ंको कुषुवित रखने एिं नष्ट करने के वलए नहीं,ं अवपतु िस्तुतुः उन्हें सिक्त करने और अपने भले के वलए उपयोग करने को कहा गया है। इसके विपरीत, दुव्यवसवनता अथिा अपव्यय िास्ति में इन्तन्द्रयों ंके विनाि का कारण है।

य नानी आदिव, सामान्य मानि-जावत के वलए जीिन के सामान्य दिवन के रूप में प्रवतपावदत वकया गया है। यवत–मव, जैसा वक सन्तों ंद्वारा माना गया है, एक वभन्न अनुिासन है जो वििेर् रूप से उस िगव के वलए है जो आध्यान्तिक पथ पर चलने िाले, आि-साक्षात्कार के लक्ष्य के प्रवत समवपवत सािक श्रेणी के लोग हैं। इस श्रेणी के लोग अत्यन्त भली-भाँवत जानते हैं वक 'जीिन के थोडी मात्रा में सुख भोगने' का विचार केिल िारणा मात्र ही है और इसको िस्तुतुः उपयोग में लाना असंभि है। क्ोंवक सुख भोगने की प्रिृवत्त स्वभाितुः ही ऐसी होती है वक इन्तन्द्रयों ंको वजतनी र्बार भोग-रस लेने वदया जाता है उतनी ही और अविक िेगिती होती जाती हैं। वफर यह उस व्यन्तक्त का स्वभाि र्बन कर उसे अपने िि में जकड लेती है और उसको अिोगवत के गतव में वगरा देती है। सभी सन्तों ंका इस विर्य में यही अनुभि है। अतुः आध्यान्तिक पथ पर अग्रसर सािकों ंके वलए वकसी-न-वकसी स्तर पर कठोर आि-संयम एिं अस्वीकरण अवनिायव हो जाता है।

सांसाररक श्रेणी भले ही इसकी पररिाह न करें, वकनुतु सािक–गव करता है। सािक–गव एक वििेर् उपलन्तब्ध के वलए सुवनवश्चत वकया गया है। आप जानते हैं वक एक आिुवनकतम कलार्बाज, एक र्बैले नतवक अथिा एक कुिल मुक्केर्बाज अपने कायवक्षेत्र में प णव सफलता पाने हेतु स्वयं को प री तरह से स्वस्थ रखने के वलए वकस प्रकार स्वेच्छा से स्वयं को कठोर वनयमों ंसे अनुिावसत रखता है। खेलों ंमें विजेता होने के वलए प्रयत्निील वकसी भी प्रवतयोगी को अपने प्रविक्षण की अिवि के समय अपने पर स्वेच्छा से लगाये जाने िाले अस्वीकरण और अनुिासन की ओर देखें! उसकी तीव्र आकांक्षा एिं उत्साह उसके मन को प्रेरणा और प्रवतयोवगता के उच्च मनोभाि में रखते हैं। तर्ब वफर क्ा एक सच्चे यवत में आध्यान्तिक पथ में अनन्त एिं महानतम उपलन्तब्ध हेतु इस आध्यान्तिक प्रविक्षण अिवि में ऐसी आकांक्षा एिं अवभरुवच नहीं ंहोनी चावहए?

१४०

अपच को कैसे दूर डकया जा सकर्ा है?

जर्ब आपको भ ख लगे तर्ब ही भोजन करें। भोजन के र्बाद आगामी भोजन लेने के र्बीच के समय में कुछ न खायें। िान्त मन से िीरे-िीरे खायें। भलीभाँवत चर्बा कर खायें। र्बहुत प्रकार के व्यंजन एक समय के भोजन में न लें। भोजन से एक घण्टा पहले अथिा एक घण्टे र्बाद पानी का वगलास वपयें, भोजन के साथ कभी भी पानी न लें। एकादिी को उपिास करें। प्रातुः ९ र्बजे से पहले और सायं ७ र्बजे के र्बाद कुछ भी न खायें। अपने दाँतों ंका ध्यान रखें। भोजन के तुरन्त पहले या र्बाद में वकसी भी प्रकार की मानवसक अथिा िारीररक थकान से दर रहें। कम-से-कम आिा घण्टा आराम करें। तीव्र गवत से की जाने िाली लम्बी सैर लाभदायक है। पवश्चमोत्तान आसन, हलासन, भुजंगासन, िलभासन, िनुरासन, मयरासन-ये सभी योगासन अपच को दर करते हैं। मानवसक अिसाद और तनाि इत्यावद भी पाचन वक्रया पर प्रभाि डालते हैं, अतुः सदा प्रसन्नवचत्त रहें। वनयवमत रूप से जप करते रहें।

१४१

र्बढी हई काम-वासना को रोकने का सवोत्तम उपाय क्ा है?

कामिासना मन की एक स्वाभाविक प्रिवत्त है। इस िृवत्त को रोकने का सिवश्रेष्ठ सािन कठोर एिं गहन िैराग्य का विकास है। िावमवक पुस्तकों ंके स्वाध्याय से, महात्माओं ंके साथ वनरन्तर सत्संग से, 'मैं कौन हूँ?' इस विचार द्वारा आत्म-वनरीक्षण से, संसार को सक्ष्म दृवष्ट से देखते हुए विवेकपणव विवक विचार करने से तथा अवतभोग से उत्पन्न होने िाले रोगों ंएिं आध्यात्मिक अिनवत को जान लेने से ऐसे िैराग्य को विकवसत वकया जा सकता है। गीता में भगिान् द्वारा कहे गये इन िचनों ंका स्मरण र्बनाये रखें।

डत्रडवधों नरकस्येदों द्वारों नाशनमात्मनः ।
कामः क्रोधिा लोर्भिादेत्त्रयों त्यजेर्।।

(१६/२१)

मेरी पुस्तक 'योग आसना ' तथा 'साइंस ऑफ़ प्राणायाम' में िवणवत आसन और प्राणायाम का अभ्यास करें। आत्म-विस्मृवत की अिस्था तक पहुँच जाने पयवन्त कठोर जप करें। समस्त नारी-जावत को भगिती देिी माँ, पज्य मातृ िवक्त का प्रकटीकृत रूप समझते हुए व्यिहार करें। अपने से विपरीत वलंग के प्रवत मातृ भाि र्बनाये रखें। मवहलाओं ंके चेहरे की ओर देखना छोड दें, केिल उनके पैरों ंकी ओर ही दृवष्ट रखें वजससे मन में कुभािना का अथिा अनुवचत संकेत करने का भाि ही उदय न होने पाये। सदा िीतल जल से स्नान करें। वजह्वा पर संयम रखें। वजह्वा को ढील देने का अथव है व्यवक्त को संकट में डालने िाली कामुकता को रुबुलािा देना। स्वयं को सदैि पवित्र एिं उदात्त विचारों ंमें व्यस्त रखें। हनुमान्, रामदास इत्यावद के जीिनचररतों ंके स्वाध्याय से ब्रह्मचयव की मवहमा को जानें। मेरी पुस्तक 'हाओ ट गेट िैराग्य' में िवणवत वनयमों ंके अनुसार अपना वनरीक्षण करें। आिश्यकताओं ंऔर इच्छाओं ंको कम करें। वजतनी अपनी 'मैं' को घटाते जायेंगे उतने ही नकारात्मक भाि समाप्त होते जायेंगे।

१४२

गोहत्या के सम्बन्ध में आपकी डवचारधारा क्ा है ? क्ा आप इस बार् में डवश्वास रर्े हैं डक इसी के कारण हमारे राष्टर की अवनडर् हो रही है?

िमवग्रन्थ, मान्य व्यवक्त और िमवग्रन्थों ंकी कथाएँ उतनी ही सत्य हैं वजतने स्वयं भगिान्। ये सभी वनवश्चत रूप से एिं वनस्सन्देह कहते तथा उद्घोवषत करते हैं वक वहन्द िमव के विश्वासानुसार जो तैंतीस करोड देिता हैं उन

सर्बका उसी प्रकार गोमाता की देह में भी वनिास है जैसे वक पवित्र तुलसी के पौि में है। हमारे िमवग्रन्थों ामें अत्यन्त वनभीकता सवहत घोवर्त वकया गया है वक गाय एक ऐसा जीि है वजसे मनुर्ष् के देहान्त के समय उसकी आत्मा की सद्गवत हेतु दान वकया जाना चावहए। वनवश्चत्त रूप से गाय पजनीय है। पंचगव्य (गाय का दि, दही, घी, मत्र और गोर्बर) को ऋवर् पंचमी इत्यावद जैसे कई व्रतों ामें प्रायवश्चत्त के रूप में लेने के वलए कहा गया है। गाय की पवित्रता के सम्बन्ध में वकतने ही उदाहरण वदये जा सकते हैं। गोपजा उतनी ही लाभकारी है वजतनी संन्यासी (सािु) पजा। यवद अविक नहीं ातो यह सकल देिता पजा के तुल्य तो है ही। जर्ब ऐसा है तो वनवश्चत रूप से गोिि अत्यन्त वनन्दाजनक है।

१४३

हमारे पुराणो ामें यह बर्ाया गया है डक प्राचीन युग में हमारे पूवतजो ाको प्रायः आकाशवाणी सुनायी डदया करर्ी र्ी डजसके द्वारा उन्हें भडवष् में होने वाली घटनाओ ासे अवगर् करा डदया जार्ा र्ा। क्ा यह डवश्वास करने योग्य है? अर्वा, क्ा यह उनकी आन्तररक सहजबुस्ति ही होर्ी र्ी ?

चारों ायुगों ामें एक वनयम रहा है। जैसे-जैसे समय व्यतीत होता जाता है, मानि की चेतना स्थ ल से स्थ लतर होती जाती है। गत युगों ामें मनुर्ष् की चेतनाशस्तक्त इस युग की अपेक्षा स क्ष्म थी।

सत्य युग में भगिान् मानि जावत के मध्य में विचरण वकया करते थे। मानिीय चेतना तर्ब वदव्य चेतना से दर नहीं ाहुई थी। त्रेता युग में मनुर्ष् की चेतना स्थलतर हो गयी। तर्ब यद्यवप भगिान् की वनरन्तर मानि जावत के मध्य उपन्तस्थवत नहीं ारही, वकन्तु भगिान् के अितार प्रायुः होते रहते थे। द्वापर युग में मनुर्ष् की चेतना शस्तक्त और अविक स्थल हो गयी; और केिल नारद, विश्वावमत्र इत्यावद के समान ब्रह्म ऋवर् और आकाशिावणयों ाद्वारा भी लोगों ाको भिी घटनाओं ाके प्रवत सवचत वकया जाने लगा।

अर्ब हमें लगता है वक आकाशिाणी अत्यन्त दुलवभ और विलक्षण िस्तु है, प्राचीन युगों ामें ऐसा नहीं ाथा। देिता भी मनुर्ष्ों ाके मध्य विचरण वकया करते थे और आकाशिाणी लोगों ाको प्रायुः प िवभास वदया करती थी। जैसे हमारी सरकार है, वर्बलकुल उसी प्रकार देिताओं ाकी भी अपनी सरकार है। जर्ब भी िे मानि जावत को कोई सचना देना चाहते थे, आकाशिाणी के माध्यम से दे देते थे।

आजकल देिता अविकांश रूप में स्वप्नों ाऔर दिवनाभास द्वारा सन्देश देते हैं। व्यािहाररक दृवष्ट से इस युग में सन्देश देने का केिल यही सािन शेर् रहा है।

१४४

यह एक सामान्य डशकायर् है डक स्वामी जी महाराज, डजनसे डक जाडर्, धमत और डलोंग इत्याडद सभी से ऊपर होने की आशा की जार्ी है, को प्रायः मडहला अडर्डर्यो ासे डघरे हए पाया जार्ा है। इस प्रश्न का उत्तर देने की कृपा करें, यही प्रार्तना है।

मैं पुरुर्ों ाको अपने वनकट र्बैठने से रोकता नहीं ाहूँ। िास्ति में कायावलय में सदा ही र्बहुत से पुरुर् मुझे वनकट से घेरे रहते हैं। िे दिवनावथवयों ाके वलए रखे गये र्बेंचों ापर र्बैठते हैं, और मवहलाएँ स्वाभाविक रूप से भारतीय परम्परा को ध्यान में रखते हुए आगे िरती पर, मेरी मे के आस-पास र्बैठ जाती हैं। चलते समय पवश्चमी सभ्यता

की भाँवत और पुरुर् िगव अपनी ही इच्छा से न्तियों ंको आगे चलने देते हैं। इसीवलए ऐसा प्रतीत होता है जैसे मवहलाएँ ही मुझे चारों ंओर से घेरे रहती हों।ं

यह सर्ब तो र्बता वदया, वकन्तु इस र्बात से कौन इनकार कर सकता है वक मवहलाओं ंमें पुरुर्ों ंसे अविक भन्तक्त होती है जर्ब वक पुरुर्ों ंमें र्बुन्तद्ध-तत्त्व की प्रिानता रहती है। मवहलाओं ंका भन्तक्तभाि ही उन्ें कायावलय में मेरी मेज के वनकट र्बैठा देता है, और पुरुर्ों ंकी र्बुन्तद्ध उनसे इसके औवचत्य का प्रश् कराती है! जर्ब र्बुन्तद्ध-प्रिान पुरुर् में भन्तक्त का भी विकास हो जाता है, तर्ब उसके पररणामस्वरूप समझदार मन और उदार दृवष्टकोण की प्रान्तप्त हो जाती है, जो िीघ्र ही आत्म-साक्षात्कार की ओर ले जाते हैं।

मैं मवहलाओं ंकी भी उतनी ही आध्यान्तिक भलाई चाहता हूँ वजतनी पुरुर्ों ंकी; वकन्तु आध्यान्तिक सािना के पथ पर अग्रसर होने के वलए मैं मवहलाओं ंको वनदेि देने में थोडी अविक रुवच लेता हूँ। इसके तीन कारण हैं। प्रथम तो यह वक इस कथन से आप भी पररवचत हैं वक, “जो हाथ पालना झुलाते हैं, िे संसार पर िासन करते हैं।" नारी, पुरुर् को आकार देती है, यवद िह आध्यान्तिक है, तो वनस्सन्देह समस्त मानि जावत पवित्र और िान्तन्तपणू व होगी। दूसरा पुरुर् जर्ब छायाओं ंके पीछे भागने में, िन-अवजवत करने और संसार के वनःसार िस्तु-पदाथों को एकवत्रत करने में व्यस्त रहते हैं, तर्ब यह नाररयाँ ही हैं जो अपनी सामर्थ्व अनुसार िमव का संरक्षण करती हैं। हम वजतनी भी दे सकें, उतनी उन्ें आध्यान्तिक िन्तक्त और प्रेरणा देनी चावहए। तीसरा पुरुर् की अिांवगनी होने के नाते यवद नारी आध्यान्तिक रुवच सम्पन्न होगी, तो मैं जानता हूँ वक िह अपने पवत को पीछे नहीं ंरहने देगी। िह पुरुर् की सहिवमवणी है और यवद सांसाररक कामों ंमें व्यस्त पुरुर् थोडी देर के वलए अपनी भवमका को विस्मृत भी कर देगा तो भी िह ऐसा नहीं ंकरेगी और िैयवपूिवक प्रयत्न करती रहेगी तथा अन्ततः उसे भी वदव्य जीिन जीने में लगा लेगी।

१४५

स्वामी जी, आप र्ो सन्तत्व को सदैव डवनम्रर्ा के सार् सोंयुि डकया करर्े हैं, डफर आपको अपनी फोटो उर्रवाने में इर्नी रुडच क्ो ोंहै ?

चाक्षुर् विक्षा पद्धवत के पीछे वनवहत िन्तक्त, वजसे आजकल मनोिैज्ञावनक पुस्तकीय विक्षा से अत्यविक उत्तम मानते हैं, उसका स्पष्टीकरण आपको तर्ब हो जायेगा, जर्ब आप एक सामान्य तर्थ् पर विचार करके देखेंगे। आप अपनी पढ़ाई की मेज पर थोडी सी अच्छी वकतार्बें, कुछ वचत्रकथाएँ और कुछेक वचत्र रख दें। अपने र्बच्चों ंऔर वमत्रों ंको पढ़ने के वलए कमरे में र्बुलायें। सर्बसे पहले िे क्ा उठाते हैं, इसे देखें, पुस्तकें ? नहीं!ं सर्बसे पहले वचत्र और उसके र्बाद वचत्रकथाएँ।

दवक्षण भारत में िृद्ध माताएँ अपने नाती-पौत्रों ंको वचत्र उतरिाने से अकारण ही यह कहते हुए नहीं ं रोकती वक, "वचत्र उतरिाने से तुम्हारा ओज चला जायेगा।" यह सच है वक आपकी कान्तन्त आपके वचत्र में चली जाती है। आपके वमत्रों ंऔर सम्बन्तन्धयों ंके वलए, आपके न दीवकयों ंऔर वप्रयजनों ंके वलए आपका वचत्र सजीि है, आपकी आभा सवहत जीिन्त है। इसवलए भक्त के वलए भगिान् का वचत्र, विर्् के वलए गुरु का वचत्र उनकी जीिन्त उपन्तस्थवत होती है। ध्यान के वलए इसकी आिश्यकता होती है।

आप पूछेंगे वक वफर इतने अविक वचत्र क्ों ं? िह इसवलए वक अलग-अलग लोग, अलग-अलग तरह के वचत्र चाहते हैं। विवभन्न प्रकार की मुद्राओं ंमें, अलग तरह की पृष्ठभूवम में चाहते हैं। मुझे सभी को सन्तुष्ट करना पडता है। र्बीस िर्व पहले वलया गया मेरा वचत्र, आज के वलये गये वचत्र से वचत्रकला की दृवष्ट से, युिािस्था के कारण अविक अच्छा हो सकता है, वकन्तु जो सािक मुझे आज प्रथम र्बार देख रहा है िह यही चाहता है वक जैसा मैं आज हूँ उसे िैसा ही वचत्र चावहए र्बीस िर्व पहले िाला नहीं,ं भले ही िह वकतना भी अच्छा हो! और वफर लोग अपने साथ

मेरा वचत्र लेना चाहते हैं, यह वचत्र उनके वलए आश्रम आने के स्मारक वचत्रों ंका कायव करते हैं और उनें् पे्रेरणा देते हैं।

वचत्र उतरिाने के वलए इनकार करना, सक्ष्म अहंकार का पररचायक है। यह विनम्रता की ओट में भीरुता अथिा आलोचना का भय है। यवद आपमें सही ििेकिीलता है तो इस र्बात को आप तुरन्त समझ जायेंगे।

१४६

आप जैसे महान् सन्त, डजन्ोनेंों सब-कुछ त्याग डदया है, क्ा उनें् शीर्काल में ओवरकोट पहनना चाडहए?

सन्त या संन्यासी कााँटों ंपर तो नहीं ंसोयेगा, वमट्टी-पत्थर तो नहीं ंखायेगा, वसर के र्बल नहीं ंचलेगा और न ही दीिारों ंमें वसर फोडेगा। उसके िरीर को भी भ ख-प्यास, गमी-सदी इत्यावद लगती है और र्बडा कोट केिल एक टुकडों ंमें काट कर, सुवििाजनक र्बनाने के वलए वजससे वक िरीर ठीक से ढका जा सके, ऐसा सीिा खडा वसल वदया गया कम्बल ही तो है, वजससे वक सेिा करने के वलए र्बााँहों ंकी गवतवविियों ंमें र्बािा न आये ! कम्बल एक लम्बाई में टुकडा है। मैं कोट को अविक महत्त्व नहीं ंदेता।

अन्ततुः आपको र्बाह्य पोिाक-पहरािे की ओर क्ों ंइतना ध्यान देना आिश्यक है? मनुर्ष् के भीतरी व्यन्तक्तत्व को, उनके विचारों,ं भािों ंऔर गुणों ंको देखने का प्रयास करें, र्बाहरी वििरण को नहीं।ं केिल एक सच्चा सन्त ही दसरे सन्त को समझ सकता है।

देह पर भस्म रमा कर, लम्बी दाढ़ी या जटाएाँ रख कर कोई सन्त नहीं ंर्बन जाता। मेरे इस लमे्बे कोट को आप क्ों ंइतना महत्त्व दे रहे हैं? विलावसता अथिा ठाट-र्बाट की दृवष्ट से पहनािे में रुवच रखना वनस्सने्देह अनुवचत है, वकनु्तु केिल आिश्यकतापवतव के उदे्देश्य से िरीर को वनवश्चत रूप से उवचत पोिाक और भोजन देना आिश्यक है।

१४७

आप प्रडसस्ति पाने के इर्ने इचु्छुक क्ो ंोंहैं? आप डनःस्वार्त सेवा के सम्बन्ध में इर्नी बार् करर्े हैं और डफर भी हम देर्े हैं डक आप नाम-यश के डलए इर्ना कायत कर रहे हैं!

पहली र्बात तो यह है वक मैं नाम-यि के वलए काम नहीं ंकर रहा हाँ। जर्ब कोई व्यन्तक्त वनुःस्वाथव सेिा करता है तो उसके न चाहने पर भी उसकी प्रवसन्तद्ध हो जाती है। महात्मा गााँिी के जीिन में भी ऐसा होते आपने देखा है। केिल वनुःस्वाथी व्यन्तक्त ही जानते हैं वक िह अपनी इस प्रवसन्तद्ध का उपयोग और अविक लोगों ंके वलए, और अविक सेिा में कैसे कर सकते हैं।

दसरी र्बात, इस प्रवसन्तद्ध के माध्यम से ही मैं अविक-से-अविक वजज्ञासु सािकों ंके सम्पकव में आ सकता हाँ। यह प्रवसन्तद्ध मुझे अविक-से-अविक लोगों ंकी सेिा कर सकने का सुअिसर प्रदान करती है। और लोग जर्ब मुझे मवहमान्तित करते हैं तो िह केिल संन्यास को, केिल सािनामय वदव्य जीिन को ही मवहमान्तित करते हैं, और अन्य लोगों ंकी दृवष्ट में यह र्बात आ जाने से, िह सर्ब भी वदव्य जीिन जीने की पे्रेरणा प्राप्त करते हैं, सािना

करने की, आ़ि-साक्षात्कार पाने की और सािना की उपेक्षा न करने की पे्ररणा प्राप्त करते हैं। आप जानते हैं वक महापुरुर्ों ंका जीिन हमें स्मरण कराता है वक हम भी अपने जीिन को उदात्त र्बना सकते हैं।

तीसरी र्बात, जो व्यन्तक्त नाम-यि के पीछे भागने िाला होता है, िह छोटे-मोटे सेिा-कायों में नहीं ंलगता, िह प्रत्येक के साथ घुल-वमल कर र्बात नहीं ंकरता, िह चुटकुले सुना कर लोगों ंको अपनी उपन्तस्थवत में ही हूँसने नहीं ंदेता; सिव-सािारण लोगों ंके र्बीच िह स्वयं को अलग और ऊपर रखता हुआ अपने प्रवत सर्बमें अपनी विलक्षणता और सिान का भाि र्बना कर रखता है और अपनी र्बातचीत में र्बनािटी उच्च दािवनक विर्यों ंपर ही न्तस्थर रहते हुए सर्बमें अपना प्रभाि र्बनाये रखने का प्रयत्न करेगा और स्वयं को सर्बसे ऊँचा वदखाने में प्रयत्निील रहेगा। मैं तो सर्बके साथ घुल-वमल कर रहना चाहता हूँ और सर्बको ऐसा अनुभि होने देना चाहता हूँ वक मैं भी उनमें से ही एक हूँ। प्रत्येक व्यन्तक्त की हर प्रकार की सेिा करने में मुझे असीम सुख अनुभि होता है। मैं विक्षाप्रद विनोद से भरप र हूँ, एक छोटा लडका भी मेरे साथ वनुःसंकोच विनोद कर सकता है।

कृपया आप यहाँ आयें और आश्रम में कुछ समय रहें। आपके विचार र्बदल जायेंगे।

१४८

क्ा यवद् धमत से प्रबोधन प्राप्त हो सकरा् है?

यवत ि मव ि ा स्ति में भन्तक्तमय सािना अथिा आध्यान्तिक ध्यान के उद्देश्य से इन्तन्द्रय-संयम और मानवसक एकाग्रतापणव जीने का तपस्वी जीिन है। सच्चे तपस्वी जीिन में वनवश्चत रूप से आचरण के और नैवतकता के कठोर वनयमों ंका अनुपालन करना होता है वजसके आिार पर उच्च सािनाएँ की जाती हैं। तपप णव जीिन प्रर्बोिन प्रान्तप्त का सािन है। इससे ध्यान का आिार तैयार हो जाता है और ध्यान ही वफर वििेक और साक्षात्कार प्रान्तप्त की ओर ले जाता है। कभी-कभी तपस्ा का संकुवचत अथव केिल िारीररक कष्ट देने से ही ले वलया जाता है। वकन्तु यह भारी भल है तथा िासनाओं ंको िान्त वकये वर्बना और मन को अनुिावसत वकये वर्बना केिल िारीररक तप से प्रर्बोिन प्रान्तप्त की ओर अग्रसर नहीं ंहो सकते।

१४९

जीवन और मृत्यु-इन दोनो ोंमें से अवधक भयानक क्ा है?

जीिन और मृत्यु का क्रम, विकास की एक शृंखला है जो वक जीिािा के नये-से-नये अनुभिों ंके द्वारा, जीिािा की पणवता प्रान्तप्त की िास्तविक इच्छा की ओर उसे अग्रसर करती है। जीिन नाटक का एक दृश्य है जहाँ जीिािा कुछेक उन इच्छाओं ंको ले कर एक पोिाक अथिा रूप ले कर आती है जो वक उस प्राप्त परररे्वि् समय और स्थान में परी की जा सकती है; और मृत्यु िह समय है जर्ब जीिािा पदे के पीछे चली जाती है तथा नयी पोिाक पहन कर जीिन के दसरे दृश्य में उन अन्य इच्छाओं ंकी पवतव के वलए तैयार हो कर आ जाती है जो ितवमान दे-काल में पणव वकये जा सकने योग्य नहीं ं थीं ं तथा वजनें् अन्य उपयुक्त समय और स्थान-परररे्वि् की आिश्यकता होती है। अतुः इसे यवद भलीभाँवत समझ वलया जाता है तो दोनों ंमें से कोई भी भयानक नहीं ंरहता। पणवता प्रान्तप्त की प्रवक्रया में र्बािाओं ंको तोडने और आिरणों ंको भंग करने के वलए दोनों ंही आिश्यक हैं। अज्ञानी मनुर्् के वलए तो दोनों ंही अनुभि भयप्रद हैं। िह मृत्यु के अविक भयानक होने की कल्पना करता है।

१५०

यह पृथ्वी क्ा है?

विवभन्न दृवष्टकोणों ंसे वभन्न-वभन्न पररभाराएुँ दी जा सकती हैं। िुभ, अिुभ और वमवश्रत कमों के फल को भोगने के वलए तथा नये कमव करने के वलए वनिावरत क्षेत्रों ंमें से यह एक क्षेत्र है। यह भोग-भवम और साथ ही कमव- भवम भी है। यह परमाणुओं ंका सम ह है, ऊजाव का रूप है, विचारों ंका भौवतकीकरण है, उन जीिात्माओं के कमों के प्रभािों ंकी अवभव्यन्तक्त है, वजनसे यह बनी है और वजनसे यह सम्बन्तन्धत है। िैज्ञावनक दृवष्टकोण से, यह पृथ्वी केिल उन ग्रहों ंमें से एक ग्रह है वजनसे वमल कर यह समस्त विश्व बना है।

१५१

एक आश्रम में, जहाुँ आपने युवा डजज्ञासु साधको ंको इस डवश्वास को डदलारे् हए एकडत्रर् डकया है डक आप उनें् जीवन के परम लक्ष्य की प्रास्तप्त की ओर र्ीव्रर्ा से बढने में डनदेडशर् करेंगे, आप नृत्य, नाटक और सोंगीर् को प्रोत्साहन क्ो ंदेरे् हैं?

यह प्रश् संगीत और नृत्य के मलभत वसद्धान्तों ंके प्रवत अज्ञान को प्रकट करता है। संगीत और नृत्य वदव्य हैं, मेरी प्राथवना है वक आप स्मरण करें वक भगिान् श्री कृष्ण का अपनी अविन्तच्छन्न िंिी के साथ का स्वरूप तथा सरस्वती माता का िीणा सवहत रूप सदैि हमें संगीत की वदव्यता की याद वदलाता है। भगिान् नटराज आपको स्मरण कराते हैं वक नृत्य का उद्गम उनसे होता है। मनुष्य की दुष्ट बुन्तद्ध तो वकसी का भी दुरुपयोग कर सकती है। यवद उत्सि-पिव के समय मन्तन्दर में जेबकतरों ंकी भरमार पायी जाती है, तो क्ा हमें भगिान् के दिवन से प्राप्त होने िाले आिीिावदों ंको नकार देना चावहए?

यह दुभावग्यपणव है वक संगीत और नृत्य कला को इन्तन्द्रयजन्य मनोरंजन के स्तर तक वगरा वदया गया है। प्रत्येक प्रभु-प्रेमी एिं लवलतकला-प्रेमी का यह पािन कतवव्य है वक इन कलाओं ंको पवित्रता और वदव्यता के अपने िास्तविक उच्च स्तर तक ऊपर उठायें।

संगीत नादयोग है। यह तत्काल ही आपका नादब्रह्म, पािन प्रणि के साथ तादात्म्य स्थावपत कर देता है। नृत्य आपको भाि-समावि में प्रिेि पाने में सक्षम करता है।

नाटक आध्यान्तिक ज्ञान के प्रचार-प्रसार का अत्यन्त सिक्त सािन है। जो-कुछ आप सैकडों ंपुस्तकों ंसे और घण्टों ंतक प्रिचन देने से नहीं ंवसखा पाते, िह अत्यन्त सरलता और प्रभाििाली ढंग से एक ही नाटक के द्वारा श्रोताओं ंको समझा सकते हैं। नाटक, कला का िह रूप है जो हृदय को सीिा स्पिव करता है।

यही तथ्य वक सांसाररक मानि इन तीनों ंमें इतनी अविक रुवच लेता है और अपने दुष्टताप णव उद्देश्यों ंको पणव करने के वलए इनका दुरुपयोग करता रहा है, यह वदखाता है वक वकतनी गहन िन्तक्त इनमें मानि-हृदय एिं आिा को स्पिव करने की है। यवद इनका आध्यान्तिक लक्ष्यों ंकी प वतव के वलए सदुपयोग वकया जाये तो िे िन्य हो जायेंगे।

१५२

स्वामी जी, आपने मानवर्ा की सेवा के सडक्रय क्ेषेत्र में स्वयों को क्ो ोंनही ोंलगाया, जैसे डक गाँधी जी ने डकया र्ा, वैसे ? आपने उनकी र्रह न करके, राजनैडर्क क्ेषेत्र में डकोंडचर् भी प्रवेश न करर्े हए स्वयों को गोंगा र्ट पर एकान्त जीवन व्यर्ीर् करने के डलए क्ो ोंचुन डलया ?

भगिान् ने प्रत्ेयेक व्यन्तक्त को कवतपय गुणों ंसे सम्पन्न करते हुए उनके वलए सेिा के अलग-अलग क्ेषेत्र वनािवररत वकये होते हैं। र्बुन्तद्धमत्ता इसी में है वक स्वयं में उन गुणों ंको खोज कर भगिान् की इच्छानुसार मानिता की वनुःस्वाथव सेिा में उपयोग वकया जाये। गाँिी जी की सेिा का राजनैवतक क्ेषेत्र है। मेरा सेिा-क्ेषेत्र त्याग, संन्यास और वनिृवत्त-मागव का है। हमारा दोनों ंका सेिा-क्ेषेत्र का पररितवन तो ऐसे ही हो जायेगा जैसे मोची और दजी एक-दसरे से कायव पररिवतवत कर लें।

वकन्तुु आप अपने मन में इस विचार को घर न करने दें वक जो व्यन्तक्त राजनैवतक क्ेषेत्र में कायवरत है केिल िही प्रभु की सन्तान की सेिा कर सकता है।

१५३

आत्महत्या करना पाप क्ो ोंमाना जार्ा है?

जीिन में सुख और दुःख क्रमिुः मनुर्ष् के पुण्य और पापपणव कमों का फल होते हैं। यवद कोई व्यन्तक्त कष्ट झेल रहा है तो यह उसको यह याद वदलाने के वलए अनुस्मारक के रूप में आता है वक िह अपने जीिन को भला र्बनाये और भले कायों, आत्म-अनुिासन और सही प्रयासों ंके द्वारा भविर्ष् को सुखप णव र्बना ले।

जर्ब वकसी व्यन्तक्त को अपराि करने के कारण न्यायालय द्वारा दन्तण्डत करके कारागार में भेज वदया जाता है और िह व्यन्तक्त कारागार से वनकल भागता है तो न्याय कहता है वक उसे पुनुः कारागार में ही नहीं ंडाला जाये अवपतु साथ ही और भी अविक कठोर दण्ड वदया जाये, क्ोंवक एक अपराि करने के अवतररक्त उसने दण्ड से र्बच कर भागने का दसरा अपराि भी वकया है। यही वनयम अपने कष्ट को झेलने से र्बचने के प्रयास में आत्महत्या करने पर लाग होता है, क्ोंवक व्यन्तक्त को परमात्मा के वििान को स्वीकार करते हुए आत्म-सुिार करके भविर्ष् को सँिारने का प्रयत्न करना चावहए अथिा दिवनक विचारों ंको स्वीकार करते हुए कष्ट भोगने से र्बचने का अनुवचत प्रयास नहीं ंकरना चावहए। ऐसा न करने से भगिान् से भी और अविक दण्ड वमलता है।

इसके अवतररक्त, मनुर्ष् को जीिन समाप्त करने का अविकार नहीं ंहै। भले ही िह उसका अपना जीिन ही क्ों ंन हो। क्ोंवक यह भगिान् की दृवष्ट में ही पाप नहीं ंहै, न्याय की दृवष्ट से भी अपराि है। जो मनुर्ष् आत्महत्या कर लेता है िह सक्ष्म-िरीर में, उतने ही समय तक और अविक कष्ट पायेगा और वफर अपने कमों को भोगने के वलए वनम्न योवन में जन्म लेगा। इस प्रकार आत्महत्या करना वकसी भी प्रकार से लाभ नहीं ंपहुँचाता।

१५४

'आत्मा िरीर से वभन्न है और िरीर द्वारा वकये गये वकसी भी कायव का इस पर कोई प्रभाि नहीं ं पडता। िरीर का अपने कमों के अनुसार अनेकों ंर्बार पुनजवन्म होता है और परमात्मा की इच्छानुसार यह जन्म-मरण के चक्र में भटकता रहता है।' यवद ऐसा है, तो वफर स्वगव अथिा नरक में कौन जाता है ?

वकसी भी प्रकार का ास्तविक भोक्ता, व्यन्तक्तगत रूप में, न तो आिा है न ही ारीर। यह मन है जो व्यन्तक्तत्व का केन्द्र है, यह आिा के प्रकिा को ले कर उससे प्रकावित हो कर अपना व्यन्तक्तत्व र्बना लेता है वजसे जीिाा कहते हैं। और यह मन ही है जो स क्ष्म ारीर के साथ स्वगव के सुख अथिा नरक के दुःख भोगता है, अथिा स्थ ल या स क्ष्म ारीर द्वारा वकसी भी प्रकार के अनुभि करता है।

आिा का प्रकिा इस मन के ऊपर प्रवतवर्बन्तम्बत होने के कारण ही यह मन चेतन प्रतीत होता है, जो वक िास्तुतुः अपने आप में, अपनी रचना में ही सीवमत है। अतुः वकसी भी मनुर्ष् का व्यन्तक्तत्व उतना ही ास्तविक, अथिा सत्य है वजतना वक वकसी ास्तविक ास्तु-पदाथव का प्रवतवर्बम्ब।

यद्यवप सर्ब-कुछ परमिाा की इच्छा के अनुसार होता है, तथावप मनुर्ष् के कमव उसके होने ाले अच्छे या र्बुरे अनुभिों को, परमिाा की इच्छानुसार वनावररत करते हैं। यह सभी अनुभि न तो आिा को होते हैं न ही ारीर को । यद्यवप इनका सािन स्थ ल ारीर र्बनता है, वकन्तु अनुभि मन ही करता है।

१५५

हम प्रायः अत्यन्त भले व्यस्ति को अत्यडधक कष्ट झेलरे् हए पारे् हैं। ऐसा क्ो ों है? उत्तर में कह सकरे् हैं, "उसके डपछले जन्म के कमों के कारण।" यह क्ा हम सृडष्ट-रचना के आरम्भ क के डपछले कमों को इसका कारण कह सकरे् हैं।

कमव का वसद्धान्त अटल है। प्रत्येक मनुर्ष् अपने विगत जन्मों के फल भोगता है। भला व्यन्तक्त अविक कष्ट भोगेगा, क्ोंवक ह आध्यान्तिक पथ पर र्बहुत ीघ्र आगे र्बढ़ना चाहता है। उसने र्बहुत से र्बुरे कमों का भुगतान, इसी जन्म में मोक्ष प्राप्त कर लेने के उद्देश्य से, कर लेना होता है। वकन्तु भगिान् अपनी कृपा से उसे अद्भुत सहनिन्तक्त प्रदान कर देते हैं। भले व्यन्तक्त अथिा वजज्ञासु सािक को अनेक कवठनाइयाँ और कष्ट सहन करने पडते हैं। वकन्तु भगिान् की कृपा से ह इन सर्बमें भी अत्यन्त प्रसन्न रहता है। ह स्वेच्छा से इन कष्टों का स्वागत करता है। इस संसार में केिल दुःख-ददव और कष्ट ही सिोत्तम हैं, क्ोंवक यह भगिान् की ओर का पथ वदवत हैं।

१५६

भस्ति में वृस्ति कैसे की जा सकरी् है?

सत्संग के द्वारा, भगिन्नाम-स्मरण, कीतवन, कथा-श्रिण करके, रामायण, भागित का अध्ययन करके, भक्तों के जीिनचररत-भक्त विजयम् और भक्त लीलामृत का स्वाध्याय-विषुणुसहस्नाम, नारद भन्तक्त सत्र और ान्तण्डल्य सत्रों का पाठ करके भन्तक्त-भाि को र्बढ़ाया जा सकता है। आपको वनवश्चत रूप से स्वयं में िैराग्य विकवसत करना होगा। यह अत्यन्त आिश्यक है। भक्तों के सावन्नध्य में रहें। अयोध्या में वनिास करें। आपमें भगिान् श्री राम के प्रवत भन्तक्त र्बढ़ेगी। र्ृन्दािन में िास करें। भागित पढ़ें। द्वादिाक्षर मन्त्र 'ॐ नमो भगिते ासुदेिाय' का जप करें। आपमें कृष्ण-भन्तक्त का विकास होगा।

१५७

यह सोंसार ईश्वर की एिणा मात्र का पररणाम है। उस एिणा से कम अर्वा उसके अडर्ररर अन्य कुछ नही ोंहो सकर्ा। ईश्वर र्ो हर समय हर एक बार् के डलए आदेश नही ोंदेर्ा रहर्ा ! ऐसा होने से र्ो वह अत्यडधक व्यि हो जायेगा। इसका अर्त र्ो यह है डक सब-कुछ पूवत- डनयोडजर् है, अर्: व्यस्ति के पुरुर्ार्त का कोई स्र्ान नही ोंहै।

यह िारणा वक ईश्वर कुछ र्बातों ंमें ही आदिे देता है-हर समय, हर र्बात में नहीं,ं क्योंवंक ऐसा करने से तो हि र्बहुत ही अविक व्यस्त हो जायेगा, वनम वल है। ईश्वर अपनी वदव्य िन्तक्त से एक ही क्षण में सर्ब-कुछ देख सकता है। उसके 'अत्यविक व्यस्त' हो जाने जैसी कोई र्बात नहीं ंहै, क्योंवंक उसे काम करने के वलए मनुर्ष् की भाँवत इन्तन्द्रयों ंका उपयोग नहीं ंकरना पडता। ईश्वर मनुर्ष् की तरह अलग-अलग सोचते हुए कायव नहीं ंकरता; क्योंवंक ईश्वर के कायव उस अविन्तच्छन्न, सदैि-जागरूक, सिविन्तक्तमान, सिवव्यापक परमाेा-जो न कभी वनिाग्रस्त होता है, न ही आराम करता है-से वभन्न नहीं ंहै। ईश्वर िस्तुतुः सिवसमथव परब्रह्म परमाेा स्वयं ही है। समस्त विश्व-ब्रह्माण्ड की रचना उस परमाेा की सृवष्ट-रचना की इच्छा मात्र से ही वनिावररत है। वकन्तु इस वनिावरण का अथव मनुर्ष् के पुरुर्ाथव को नकारने से नहीं ंहै। मनुर्ष् में स्वयं अपने विर्य में और अपने से सम्बन्तन्धत र्बाह्य जगत् के विर्य में अपेक्षाकृत अविक समझ है तथा िह वििेक–न्तक्त और कायव करने की िन्तक्त से भी सम्पन्न है। यद्यवप विश्व के और मनुर्ष् के व्यन्तक्तगत सभी कायों का आिार ईश्वर है तथावप ईश्वर व्यन्तक्त के वनजी कायों में वलप्त नहीं ं है। ईश्वर के कायों में सर्ब-कुछ प िव-वनयोवजत है। अतीत, ितवमान और भविर्ष् सर्ब-कुछ केिल ईश्वर में, और ईश्वर पर ही घटता है। वकन्तु व्यन्तक्त के वनजी सीवमत दृवष्टकोण के अनुसार, अपररितवनीय िैश्व-वनयम के तर्थ् के होते हुए भी, उसके अपने व्यन्तक्तगत कायों में एक स्वतन्त्रता, उसके अपने व्यन्तक्तत्व के कारण ही उसने आरोवपत कर ली है। यद्यवप व्यन्तक्त के सोचने और कमव करने की स्वतन्त्रता, इस सम्बन्ध में अन्तन्तम सत्य नहीं ंहै, वफर भी यह अपेक्षाकृत अविक महत्त्वप णव हो जाती है और व्यन्तक्त को उसके कायों की प्रवतवक्रयाओं ंसे प्रभावित करना आरि कर देती है, क्योंवंक व्यन्तक्त ने स्वयं को कताव मान वलया होता है। इस स्व-वनवमवत र्बन्धन के पररणामस्वरूप जीि कष्ट भोगता है तथा जैसे ही जीि अपनी आेा का ईश्वर के साथ ऐक् को अनुभि कर लेता है, उसी क्षण से उसके कष्टों ंका अन्त हो जाता है।

१५८

क्या एक पूणत डवकडसर् योगी को अपनी योग-शस्तियो ोंकी परीक्षा करने की इच्छा नही ों होर्ी? क्या यह परीक्षण करना उडचर् है?

पणव रूप से विकवसत योगी को कभी भी स्वयं का अथिा अपनी िन्तक्तयों ंका परीक्षण करके देखने का विचार नहीं ंआ सकता। यवद ऐसा हो तो उस व्यन्तक्त को पणव विकवसत योगी नहीं ंसमझना चावहए। केिल कच्चे, अिपके या अिरे साेक अथिा योगी ही अपनी या वफर अपनी अवजवत िन्तक्तयों ंकी परीक्षा करने के इच्छुक हो सकते हैं, और इन िन्तक्तयों ंसे उपलब्ध हुई अपनी उन्नवत को जाँचना चाह सकते हैं।

योग िािों ंमें वनिावररत वनयमों ंके अनुसार योगी में योगि–न्तक्तयों ंका प्रकटन उसकी योग में प्राप्त की गयी उन्नवत के अनुपात में ही होता है और यवद िह स्वयं की परीक्षा के वलए अथिा योग्यता-प्रदिवन के वलए जरा-सा भी प्रयत्न करता है तो उसकी और आगे उन्नवत करने में वनवश्चत रूप से हावन होती है। योग साेक के वंकंवचत् भी इच्छा न करने पर भी प्रवत वदन, प्रवत वमनट, नहीं;ं अवपतु प्रत्येक क्षण ही कोई-न-कोई आनन्दपणव अनुभवत उसे होती ही रहती है, क्योंवंक ऐसे अनुभि स्वयं अपने-आप ही आते हैं। अतुः साेक को भगिान् की अद्भुत मवहमा को समझते हुए इन अनुभिों ंके प्रवत तटस्थ ही रहना चावहए और इन अनुभिों ंके विर्य में जानने-सोचने की वचन्ता भी नहीं ंकरनी चावहए अथावत् इनसे सम्बन्ध जोडने अथिा आनन्द-रस लेने का प्रयत्न भी नहीं ंकरना चावहए।

तभी और किेल तर्ब ही िह इस पथ पर और अविक उन्नवत कर सकता है। पणव विकवसत योगी िह होता है वजसने योग के मागव को अपना कर आि-साक्षात्कार प्राप्त कर वलया है, अतुः उसमें कभी भी यह जानने के वलए वक िह कौन है और उसने इन प्राप्त िन्तक्तयों ंके द्वारा वकतनी उन्नवत की है, वंकंवचत् भी वजज्ञासा नहीं ंहोती।

१५९

कोई व्यस्ति जब सोंन्यास लेने के डलए अचानक समि सोंसाररक सम्बन्धो ोंको र्ोड़ देर्ा है, र्ब उसे कैसा लगर्ा है?

वकसी भी व्यन्तक्त में जर्ब त्याग की तीव्र भािना होती है तो संसार का अथिा पुराने सम्बन्धों ंका कुछ भी विचार उसके मन में नहीं ंरहता। यवद अवनिायव िैराग्य के न होने पर भी िह संन्यास ले लेता है तर्ब भी आिश्यक नहीं ंहै वक उसे पुराने सम्बन्ध छटने का कोई भाि मन में हो, यद्यवप सुप्त िासनाएँ, िृवत्तयाँ या संस्कार उसके मन में पडे रह सकते हैं। सच्चा संन्यासी जर्ब समस्त सांसाररक सम्बन्धों ंका त्याग करता है तो उसे अत्यन्त आनन्द वमलता है।

१६०

मैंने 'माई मैगज़ीन' में आपके लेर् पढेहैं-"नारी केवल मल-मूत्र, मवाद, मोंस-रि से भरा हआ दुगतन्धपूणत मोंस का र्ैला मात्र है।" नारी-जाडर् का हम इस प्रकार कैसे दुत्कारर्े हए डवरोध कर सकर्े हैं? मेरा र्ो डवचार है डक इस सोंसार में कुछ भी अपडवत्र नही ोंहै।

आिश्यकता से अविक पढ़ना और जीिन में कुछ भी न उतारना, भ्रवमत कर देता है। कामी पुरुर्ों ंमें िैराग्य उत्पन्न करने के वलए मैं न्तियों ंके विर्य में ऐसा नकारािक वच प्रस्तुत करता हूँ। िास्ति में नाररयाँ िन्तक्त का प्रकवटत रूप हैं। हाँ, सर्ब-कुछ पािन है। सर्ब-कुछ पवित्र है। सर्ब सुन्दर है। किेल आध्यान्तिक पथ पर उन्नत व्यन्तक्त इसे अनुभि कर सकते हैं। नये-नये प्रारन्तिक लोग इस मन्त्र को किेल तोते की तरह रट सकते हैं। उनके अनुभि, दृवष्ट और साधना के ढंग अनुभवत-प्राप्त साधकों ंकी अवभव्यन्तक्त से वभन्न होते हैं। प्रारन्तिक साधकों ंको अत्यविक सािधान रहना चावहए, अन्यथा िह माया द्वारा सरलता से िोखा खा जायेंगे।

१६१

आजकल राजनीडर् भगवान् बन गयी है, और डवशेि रप से भारर् में र्ो ऐसा ही है। धमत को एक अनावश्यक विु माना जाने लगा है। र्ब डफर ऐसी स्तस्थडर् में क्ा हर व्यस्ति को भगवान् में और धमत में डवश्वास करा पाना सम्भव है?

राजनीवत को िमव से ऊपर माना जाता है, ऐसा समझना गलत है। अपने व्यन्तक्तगत जीिन में अविकांि लोग भगिान् में विश्वास रखते हैं। और भारत में तो सारी ि रा के अन्तवनवहत ि मव की लहर विचरती है। राजनीवत किेल सतही गवतविवि मात्र है ज अविकांि लोगों ंपर सामावजक एिं आवथवक िन्तक्तयों ंद्वारा लाद दी गयी है।

जर्ब व्यन्तक्त को चारों ंओर से विपवत्तयाँ घेर लेती हैं, जर्ब इन्तन्द्रय-विर्य–िस्तुओं ंकी नश्वरता के कारण िह वनराि हो जाता है, जर्ब तरह-तरह के सुख-दुःख के अनुभि वमलने से उसका वििेक और िैराग्य उदय होता है तर्ब उसका मन भगिान् की ओर उन्मुख होता है। तर्ब िमव के प्रभाि के प्रवत िह ग्रहणिील हो जाता है और भले

लोगों ंका सग तथा आध्यान्तिक पुस्तकों ंका साथ उसे िावमवक र्बना देता है। ऐसी अिस्था तक पहुंचने से पहले मनुर्ष् पर र्बलपिवक िमव थोपने का कोई लाभ नहीं ंहै।

१६२

क्ा आत्मा एक वित में पुनः नया शरीर धारण कर लेर्ी है ? अर्वा ऐसा होने में दश वित लग जार्े हैं? पुनः इस धरर्ी पर आने से पहले जीवात्मा डकर्ने समय र्क सूक्ष्म लोको ोंमें रहर्ी है ?

इसके सम्बन्ध में कोई वनवश्चत समय वनिावररत नहीं ंहै। मुख्य रूप से दो तत्त्व इसको वनिावररत करने िाले हैं। व्यन्तक्त के वनजी कमव तथा मृत्युु के समय की अन्तन्तम न्तस्थवत। यह समय का अन्तराल सैकडों ंिर्षों से ले कर कुछ मास मात्र तक के र्बीच का भी हो सकता है। वजनें अपने कुछ कमों का फल अन्य स क्ष्मतम लोकों ंमें भोगना होता है, उनें नया िरीर वमलने से पहले पयावप्त समय लग जाता है। यह अन्तराल र्बहुत दीघव अिवि का होता है, क्ोंवक पृथ्वी का एक िर्व दिेलोक के एक वदन के र्बरार्बर होता है। इस सम्बन्ध में एक उदाहरण वमलता है वक अवत प्राचीन स्मारकों ंके र्ध्ंािसेिर्षों ंको देख कर आश्चयव और प्रिंसा करते हुए विदेिी यावत्रयों ंको देख कर एक सन्त, जो िहाँ एकान्त में र्बैठे हुए थे, ने कहा वक िातान्तब्दयों ंप ि व इनीं ंमें से कुछ लोगों ंने इन स्मारकों ंका वनमावण वकया था।

अवत विर्षयी व्यन्तक्त, वजसकी कोई अवत तीव्र लालसा अथिा गहन आसन्तक्त िेर्ष रह जाती है, िह कई र्बार तुरन्त पुनजवन्म प्राप्त कर लेता है। कई र्बार अचानक अपमृत्युु से अथिा अचानक दुघवटना से मृत्युु हो जाने से जीि र्बहुत िीघ्र पुनुः जन्म ले लेता है। प्रायुः ऐसी घटनाओं ंमें अवत िीघ्र नये िरीर में आने पर जीि को गत जन्म की कई घटनाओं ंकी सूमृवत र्बनी रहती है। िह अपने वपछले जन्म के सम्बन्तन्धयों,ं वमत्रों ंऔर अपने पुराने आिास-स्थल तक को, िहाँ की िस्तुओं ंतक को पहचान लेता है। कभी-कभी तो ऐसी घटनाओं ंसे विवचत्र पररन्तस्थवत उत्पन्न हो जाती है। ऐसे कुछ उदाहरण वमलते हैं जहाँ एक ऐसा व्यन्तक्त वजसकी हत्या कर दी गयी थी, पुनुः जन्म लेने पर अपनी हत्या के वकये जाने का ढंग और हत्यारे की रूपरेखा तक िणवन कर देता है, यह घटना र्बहुत अविक पुरानी नहीं ंहै।

वकनुु तत्काल पुनजवन्म की ऐसी घटनाएँ अविक नहीं ंहैं। सामान्य व्यन्तक्त के वलए प्रायुः मृत्युु और पुनुः रीर िारण करने में इस पृथ्वी के समय के अनुसार काफी लम्बा समय व्यतीत हो जाता है। अविक भले काम करने िाले भले लोग वदव्य लोकों ंमें दीघव काल व्यतीत करने के उपरान्त पुनुः िरती पर आते हैं। महान् आत्माएँ, उच्च आध्यान्तिक स्तर पर पहुँचे हुए लोग पुनुः िरा पर आने से पहले दीघव काल तक प्रतीक्षा करते हैं।

१६३

सोंगीर् क्ा है? दु:र्ी मन को शान्त करने की कोई शस्ति क्ा सोंगीर् में है?

संगीत एक सुरीली, मिुर और लय-ताल-र्बद्ध ऐसी प्रणाली है जो आन्तररक िान्तन्त और अिणवनीय आनन्द प्रदान करने की क्षमता रखती है। संगीत विज्ञानों ंमें से एक ऐसा विज्ञान है जो उस नाद (िब्द) से सम्बन्तन्धत है जो परब्रह्म द्वारा प्रकवटत प्रणि- का आवद स्वर है। सभी सातों ंस्वर-सा, रे, गा, मा, पा, िा, नी-वजनसे र्बाद में विवि ब्दि युक्त उच्चारण र्बने, सिवप्रथम इस मल ॐ जो ब्रह्म का प्रतीक है, से ही वनकले हैं। संगीत लवलतकलाओं ंमें से एक कला है। हाँ, इसमें केिल विर्षादग्रस्त मन का िान्तन्त प्रदान करने की ही िन्तक्त नहीं ंहै, अवपतु स्नायविक

दुर्बवलता, अवनिा, वमगी, अिमार और चक्कर आना इत्यावद अनेक रोगों ंकी वचवकत्सा करने की क्षमता भी इसमें है। सगीत िि में प णव पररपक्वता प्राप्त करने के वलए व्यन्तक्त को ब्रह्म के साथ समस्वरता स्थावपत करना अिश्यक है। ब्रह्म पररपणव प्रकाि, परम ज्ञान, परम आनन्द स्वरूप है इसी प्रकार िह परम नाद स्वर हैं। परमाि नाद ब्रह्म हैं। व्यन्तक्त संगीत के माध्यम से भगिान् को पा सकता है, जैसे त्यागराज, पुरन्दरदास, तुकाराम तथा अन्य कई भक्तों ंने प्राप्त वकया था।

१६४

यडद सब-कुछ भगवान् के ही डनदेशानुसार होरा् है रो् जब र्क वे मेरे द्वारा दोिी को दण्ड न डदलवाना चाहरे् हो ोंर्ब र्क यह सम्भव नही ोंहै डक मैं डकसी की हत्या करूँ या चोरी करूँ। भोिा के कमत फडलर् होने हैं, अर्: उसकी मृतुयु अर्वा अन्य कुछ भी हाडन होना डनडिर् है। यडद उसे मृतुयुदण्ड नही ोंडदया गया रो् इस सृडष्ट का सारा ढाँुचा चरमरा जायेगा। इसीडलए भगवान् की इच्छापूडर्त के उदे्देश्य से ही उस भोिा के सम्पकत में मुझे लाया गया। फाँुसी देने वाले को शासन अपना कायत करने के डलए वेर्न देरा् है। इसी प्रकार पाप कमत के फलस्वरप दण्ड डमलने की जगह मुझे भी भगवद्-इच्छा पूणत कर देने के फलस्वरप पुण्य फल अर्वा पाररर्ोडिक क्ो ोंनही ों डमलना चाडहए? डहटलर भगवान् की इच्छा के डबना यिु करके इर्ना नर-सोंहार नही ोंकर सकरा् रा्। उसे दोिी देना रो् व्यर्त है न ?

भगिान् ही सिवनयन्ता है और िही सर्ब-कुछ करने िाले हैं; वकन्तुु तो भी जर्ब मनुर्ष् यह समझता है वक हि कताव है, तर्ब िह उस कायव का अच्छा अथिा र्बुरा जो पररणाम हो, उसका भोक्ता भी वनवश्चत रूप से र्बनता है। यह सदा स्मरण रखना चावहए वक अनुवचत कमव किेल तभी र्संि होता है जर्ब व्यन्तक्त जीिभाि में अथिा अहंभाि में हो, न वक तर्ब र्संि हो सकता है जर्ब व्यन्तक्त परमाि-साक्षात्कार प्राप्त हो, ईश्-प्रेररत हो अथिा भगिान् का उपकरण मात्र हो।

जीि यह नहीं ंसोच सकता वक दोर्ी की हत्या करने की उससे अपेक्षा की जाती है और यह उसे ईश्वरेच्छा से उपलब्ध करायी गयी है, क्ोंवंक जीि सिवज्ञ नहीं ंहै, जर्ब तक र्बह परमाि के साथ तादात्म्य स्थावपत होने की उच्च अिस्था को प्राप्त नहीं ंकर लेता तर्ब तक िह यह नहीं ंजान सकता वक िस्तुतुः भगिान् की इच्छा क्ा है। वकसी भी जीि को इस गलत िारणा में नहीं ंफूँसना चावहए वक दोर्ी व्यन्तक्त की हत्या करके उसके कमों का फल देने का अविकार उस व्यन्तक्त को भगिान् ने वदया है। इस मखवतापणव कायव करने िाले को अपने वकये का फल अत्यन्त भीर्ण एिंअसहनीय कष्टों ंके रूप में भोगना ही पडेगा।

भगिान् वकसी भी जीि से सीिा नहीं ंकहते वक उसे वकसी की हत्या करनी अथिा कहीं ंचोरी करनी है और यवद जीि ऐसा अनुवचत कायव करने की गलती करता है तो किेल िही उत्तरदायी है, भगिान् नहीं।ं ऐसा नहीं ं है वक भगिान् वकसी व्यन्तक्त को वनदेि दें वक अमुक दुष्कमव करो अथिा वकसी की हत्या करो, वकसी को हावन पहूँचाओ अथिा कोई भी ऐसा कायव वजसमें वकसी अन्य को कष्ट पहूँचता हो, िह करो। ऐसे सभी अनुवचत कुकमव व्यन्तक्त के अज्ञान और भ्रान्तन्त के पररणाम होते हैं तथा उन्ें करने िाले को दण्ड भोगना पडता ही है। वदव्य गवतविवि तो सदैि स्वतन्त्रता की ओर, पररपणवता, िान्तन्त और आनन्द की ओर अग्रसर करती है तथा िह वकसी भी प्रकार से वंकंवचत् भी दु:ख-ददव का कारण नहीं ंहै।

१६५

यडद मैं ऋडिकेश आ जाऊँ र्ो क्ा मुझे मानडसक शास्तन्त प्राप्त हो सकर्ी है, क्ा मुझे आध्यास्ततमक स्पन्दनो ोंकी अनुभूडर् हो सकर्ी है?

हाँ, ऐसा हो सकता है। वकनुतु जर्ब आपने यहाँ आना हो, तो अकेले आयें। यवद वमत्र-मण्डली को साथ लायेंगे तो उनके साथ सर्ब तरह के िातावलाप से िही सांसाररक िातािरण रच लेंगे। आयें और महािाओं ंके दिवन करें। उनके आध्यान्तिक वनदेिनों ंका श्रिण करें। उनके साथ रहें। मौन रहें और एकाग्रता एिं ध्यान का अभ्यास करें। केिल तभी आप िान्तिन्त का आनन्द प्राप्त कर सकेंगे।

१६६

मैं सेवा-डनवृत्त हो चुका हूँ। मैंने अपने बेटो ोंको अच्छी नौकररयो ोंमें लगा डदया है। अब मुझे योगी का जीवन व्यर्ीर् करने के डलए क्ा करना चाडहए?

मोह को नष्ट करना अत्यन्त कवठन है। यह माया का अत्यन्त सिक्त अि है। यह मोह ही 'मैं, मेरा' की
और 'अहंकार' की भािना उत्पन्न करता है। यह सन्तान के प्रवत अन्ध-प्रेम उत्पन्न करता है। आप अपने हृदय से अभी मोह को नष्ट नहीं ंकर सके हैं। अपनी पत्नी से, र्बच्चों ंसे, वमत्रों ंऔर सभी सम्बन्तन्धयों ंसे समस्त सम्बन्ध काट िलें। पत्र भी न वलखें। तीथवयात्रा पर जायें और िहाँ महािाओं ंके दिवन करें। िैराग्य विकवसत करें। अपने वनजी अनुभि से आपने देख वलया है वक सांसाररक जीिन से आपको परम िान्तन्त और आनन्द की प्रान्तप्त नहीं ंहो सकती। यवद आपमें सचमुच ही मोह नहीं ंहै और यवद आपके मन में संन्यासी र्बनने की तीव्र इच्छा है तो संन्यासी हो जायें। मवहमािाली तपस्वी जीिन वजयें और योग-सािना द्वारा आि-साक्षात्कार प्राप्त करें। अपनी यात्रा के अनुभि के आिार पर ऐसे गुरु का चयन कर लें जो आपको वनदेि दे और वफर उन वनदेिों ंका प णवतया पालन
करें।

१६७

क्ा पत्नी और बच्चो ोंके होर्े हुए मैं सोंन्यास ग्रहण कर सकर्ा हूँ? क्ा असहाय अवस्ा में अपने आडश्रर्ो ोंको छोड़ कर चले जाना पाप नही ोंहै?

यवद आपमें वििेक से उत्पन्न सच्चा िैराग्य है और यवद आपमें गहन वतवतक्षा एिं तीव्र मुमुक्षुत्व है, तो आप
संन्यास ले सकते हैं। श्रुवतयों ंका कथन है वक वजस क्षण आपमें िैराग्य आ जाये, उसी क्षण संसार को त्याग दें। यवद
आपके मन में अपनी पत्नी और र्बच्चों ंके प्रवत मोह है तो आप आध्यान्तिक उन्नवत नहीं ंकर सकते, क्ोंवक आपका मन सदैि उनके सम्बन्ध में ही सोचता रहेगा। अतः पहले मोह को नष्ट करें। सच्चा िैराग्य विकवसत करें।
संसार में जर्ब तक हैं, यथािक्ति जप और ध्यान करें। जर्ब इसमें कुछ उन्नत हो जायें तो सुदर क्षेत्र में चले
जायें, एकान्त में रहें, अपने मन की सामर्थ्व को जाँचें और देखें वक क्ा अभी आपके मन में मोह कहीं ंअटका हुआ
तो नहीं ंहै! तर्ब आप संन्यास ले सकते हैं। आप सफल होंगें।

संन्यास से पहले देख लें वक आपकी पत्नी और र्बच्चे भलीभाँवत आिवनभवर हैं? अन्यथा िे सतत आपके
सम्बन्ध में सोचते रहेंगे और उनका वचन्तन आपका ध्यान अपनी ओर खीचं लेगा। पत्नी के साथ रहते समय उसे
संन्यास का महत्त्व समझाएँ और उसे जप और ध्यान करने के वलए कहें। उसे भी अिश्यमेि आध्यान्तिक जीिन
जीना चावहए। केिल तभी िह आपके संन्यास ले लेने के र्बाद आपके जीिन में हस्तक्षेप नहीं ंकरेगी।

भतृवहरर, गौरांग, सदाविि ब्रहे्मेन्द्र और अन्यों ंने अपनी पवत्नयों ंको त्याग वदया था। संन्यास के उपरान्त उन्ोंने कभी अपनी पवत्नयों ंका वचन्तन नहीं ंवकया। क्ा उन्ें आि-साक्षात्कार प्राप्त नहीं ंहुआ? क्ा उन्ें कोई पाप अथिा िाप ने स्पिव वकया? आपने यवद अपने पररिार का भलीभाँवत प्रर्बन्ध नहीं ंभी वकया तो भी यवद आपमें िास्तविक िैराग्य है तो आप संन्यास ले सकते हैं। र्बस अपने पररिार से स्वयं को अलग कर लें और वफर देखें वक उनकी ठीक प्रकार से देख-रेख हो रही है या नहीं।ं रामतीथव ने छोटे-छोटे दो र्बच्चों ंसवहत अपनी पत्नी को छोड वदया था, वर्बना उनका कुछ प्रर्बन्ध वकये। वकन्तु उनका र्बडा पुत्र इंजीवनयर र्बना और छोटा प्रोफेसर । भगिान् में प णव विश्वास रखें।

१६८

मेरा मन चोंचल है और शरीर डनबतल है। एकाग्रर्ा के प्रयासो ोंमें कभी सफलर्ा भी डमल जार्ी है, डकनुतु अडधकर्र अन्त में डनराशा का ही सामना करना पड़र्ा है। कृपया मेरी सहायर्ा कीडजए।

सर्बसे पहले अपने स्वास्थ्य की ओर ध्यान दें। सही आहार एिं आसन-प्राणायाम के हल्के-फुल्के व्यायाम द्वारा सुस्वस्थ र्बनें। ब्रह्मचयव व्रत का पालन करें। वफर िीरे-िीरे इच्छाओं,ं वचन्ताओं,ं तनािों,ं कल्पना-लोक के वनमावण के स्वभाि तथा दुगुवणों ंको नष्ट कर दें। सनुतुष्ट जीिन वजयें। लोक-व्यिहार को कम कर दें। हररद्वार, ऋवषकेि, उत्तरकािी इत्यावद जैसे आध्यान्तिक िातािरण िाले स्थान में वनिास करें। प रे तीन मास तक मौन-व्रत का पालन करें। आप अत्यन्त सरलता से मन को वनयन्तन्त्रत कर लेंगे।

१६९

मैं अपनी आँर्ो ोंमें जलन और मन में चोंचलर्ा का अनुभव करर्ा है, अर्: ध्यान करने में अक्षम हूँ। क्ा इसके डलए कोई प्रभावशाली उपाय है?"

इससे यह प्रकट होता है वक आपकी प्रकृवत में उष्णता है। प्रातः अपने विर में आँिला तेल अथिा मक्खन लगायें और उसके उपरान्त स्नान करें। सान्तत्त्वक आहार लें। जर्ब भी प्यास लगे, वमश्री-र्बवत का पान करें।
प्रातःकाल और रात को सोने से पहले एक प्याला िुद्ध गाय का दि पीयें। भोजन संयमप िवक और सही समय पर करें। वदन में दो र्बार स्नान करें। यह सर्ब करने से आपकी प्रकृवत में िीतलता आ जायेगी।

१७०

जब भी मैं डत्रकुटी पर ध्यान करने का प्रयत्न करर्ा हूँ, र्भी डशर में ददत सा होने लगर्ा है। क्ा इसका कोई उपचार है ?

यवद वत्रकुटी पर ध्यान करने से विर-ददव होता है तो नावसकाग्र दृवष्ट, नावसका के अग्र भाग पर दृवष्ट केन्तन्द्रत करें। इससे आपको लाभ होगा। मन के साथ संघषव न करें। आिा घण्टा आराम कर लें। यवद अभी भी ददव हो रहा हो तो अपनी आँखें र्बन्द कर लें, वफर ध्यान करें।

१७१

क्ा मेरे जैसा ४५ वित की आयु का व्यस्ति हठयोग का अभ्यास आरम्भ कर सकर्ा है? इस आयु में मुझे पूणत स्वास्थ्य और शस्ति कैसे प्राप्त हो सकर्ी है?

हाँ, आपमें एकवनष्ठता, गीीरता, विश्वास, उत्साह और िन्तक्त वनवश्चत रूप से होनी चावहए। ध्यानपिवक िीरे-िीरे और एक-एक पग आगे र्बढ़ना आिश्यक है। र्बहुत अविक थक जाने से र्बचना चावहए। यवद आप साथ- साथ मौन, वमताहार का पालन तथा जप और ध्यान का अभ्यास करेंगे तो योगाभ्यास से आपको सफलता प्राप्त होगी। आसन, प्राणायाम इत्यावद व्यन्तक्त के म ल स्वभाि और िारीररक गठन पर वनभवर करते हैं। अलग-अलग लोगों के वलए अलग-अलग अभ्यास होते हैं।

यवद आप र्बल और ओजन्तस्वता प्राप्त करना चाहते हैं तो अभी, इस क्षण से सच्चे ब्रह्मचारी र्बन जायें। मानवसक और िारीररक ब्रह्मचयव का पालन करें। सान्तत्वक आहार लें। िैराग्य को विकवसत करें। मेरी पुस्तक, 'प्रैन्तक्ट्स ऑफ ब्रह्मचयव' पढ़ें। उसमें ब्रह्मचयव व्रत पालन करने के वलए आपको व्यािहाररक अभ्यास वमल जायेंगे।

१७२

कैसे पर्ा चल सकर्ा है डक मेरी डचत्त-शुस्ति हो गयी है या नही ीं?

यवद आपका वचत्त िुद्ध हो चुका है तो आपके मन में कामुक विचार, सांसाररक इच्छाएँ, अपवित्र विचार, कामुक िासनाएँ, क्रोि, दि, घमण्ड, अहंकार, लोभ अथिा ईष्याव इत्यावद के भाि उत्पन्न नहीं होंगें। भोगविलासपणव िस्तु-पदाथों के प्रवत आप आकवर्वत नहीं होंगें। आपमें सुदृढ़ एिं स्थायी िैराग्य होगा। स्वप् में भी कुविचार आपके मन में नहीं आयेंगे। आपमें दया, विश्व-प्रेम, क्षमा, मन का समत्व और सन्तुलन जैसे दैिी गुण विकवसत होंगें। ये वचह्न हैं जो संकेत देते हैं वक आपने वचत्तिुन्तद्ध प्राप्त कर ली है।

१७३

डहन्दू लोग डलोंग अर्वा पुरुि की जनर्नेन्द्री की पूजा करर्े हैं। वे अज्ञानी लोग हैं। उनके धमत के कोई भी दाशतडनक डसिान्त नही ीं हैं।

यह एक र्बुन्तद्धहीन, र्बेसमझ, उत्सुकतापणव, कामुक और अिुद्ध-हृदयी विदेिी व्यन्तक्त का व्यंगपणव कथन है। जर्ब कोई विदेिी तवमल अथिा अन्य कोई वहनदुस्तानी भार्ा सीखने लगता है तो आरि में ही उस भार्ा के कुछेक भद्दे एिं असभ्य िब्द सीख लेता है। यह उसके स्वभाि की उत्सुकता के कारण होता है। इसी तरह अनोखे स्वभाि िाला विदेिी पजा के प्रतीकों में दोर् खोजने का प्रयत्न करता रहता है। वलंग िास्ति में भगिान् िि के वनराकार स्वरूप का केिल र्बाह्य प्रतीक है।

संसृकृत भार्ा में वलंग का अथव वचह्न अथिा िाचक है। यह एक प्रतीक है जो अनुमान द्वारा वनश्चय तक पहुँचने का संकेत करता है। जर्ब आप नदी में आयी हुई र्बाढ़ को देखते हैं तो अनुमान द्वारा समझ लेते हैं वक वनवश्चत रूप से कल कहीं-न-कहीं भारी िर्ाव हुई होगी। जर्ब कहीं से िुआँ उठता देखते हैं तो अनुमान से जान जाते हैं वक िहाँ अिश्य ही आग जल रही होगी। असंख्य नाम-रूपों िाला यह वििाल जगत् उस सिविन्तक्तमान् परमात्मा का वलंग अथिा प्रतीक है। िििवलग भगिान् िि का वचहर अथिा प्रतीक है। जर्ब आप िििवलंग के

दिवन करते हैं तो उसी क्षण आपका मर ऊर्ध्वगमन करता है (उन्नत हो जाता है) और आप भगिान् विि के सम्बन्ध में वचन्तर करने लगते हैं।
मन में एकाग्रता लाने की विविलंग में अद्भुत रहस्मयी िन्तक्त है। जैसे हमारा पर स्फवटक को एकटक देखने से अत्यन्त सरलताप िवक केन्तन्द्रत हो जाता है, वर्बलकुल तरह वलंग को वनहारते ही यह एकाग्र हो जाता है। इसीवलए भारत के प्राचीन ऋवर्यों ंभगिान् विि के मन्तन्दरों ंमें वलंग स्थापना का विान र्बताया है।

सचे्चे भक्त के वलए विविलंग पत्थर का टुकडा नहीं ंहै। यह उज्ज्वल तेजस अथिा चैतन्य है। यह वलंग उस भक्त से र्बात करता है और उसमें अश्रु प्रिावहत करने, रोमांवचत करने और हृदय िवित कर देने की क्षमता है। यह भक्त को देह-र्बोि से उन्नत करके भगिान् से िातावलाप करने तथा वनविवकल्प समावि में ले जाने में सहायक र्बनता है। भगिान् राम ने रामेश्वर में विविलंग की प जा की। राण, जो वक ज्ञान-सम्पन्न पन्तण्डत था, ने स्वणवलंग की प जा की। वलंग में वकतनी विलक्षण रहस्मयी िन्तक्त होगी।

सुितुतः सदाविि से प्रकवटत चैतन्य का प्रकाि ही विविलंग है। उनमें से हो जड-चेतन मयी सम्प णव सृवष्ट की रचना होती है। ि प्रत्येक िसुतु के वलंग अथिा कारण हैं और अन्ततुः समस्त जगत् उनमें ही लय हो जाता है। विमहापुराण का कथन है, "पीठ अम्बमयं सिां विविलंगश्च वचन्मयम्।" सर्बका आिार अथिा पीठ प्रकृवत अथिा पािवती है, और वलंग वचन्मय पुरुर्, देदीप्यमान प्रकाि, स्वयं प्रकावित प्रकाि है। प्रकृवत और पुरुर् का, पािवती और विि का वमलन संसार की उत्पवत्त का कारण है।

वलंग और योवन का संयोग, परब्रह्म परमाि के प्रकृवत और चैतन्य पहलुओं ंके परस्पर वमलन का प्रकटीकरण है। यह उस वपतृत्व और मातृत्व के आध्यान्तिक संयोग के वसद्धान्त का पररचायक है वजससे यह लौवकक नानात्व उत्पन्न हुआ है। यह पररितवनहीन परमाि और परिन्तक्त का िह िाश्वत वमलन है वजससे समस्त पररितविनील जगत् प्रकट होता है।

इस उदात्त विचार के वचन्तन-मनन से सािक की वनम्न िासनाप णव प्रिृवत्तयाँ नष्ट हो जाती हैं। वलंग और योवन के अध्यािीकरण और वदव्यीकरण से सािक को कामुक विचारों ंसे मुक्त होने में सहायता वमलती है। इस उदात्त विचारिारा से िीरे-िीरे समस्त तुच्छ विचार समाप्त हो जाते हैं। भगिान् विि के अपनी माया िन्तक्त द्वारा, माया िन्तक्त में ही आि-सुख एिं आि-नानात्व के म लभ त सृवष्ट-रचना के वसद्धान्त में संसार के सभी कामुक सम्बन्धों ंका इस प्रकार अध्यािीकरण हो जाता है।

१७४

एकाग्रता अर्वा धारणा के डलए सबसे सबल साधन क्या है?

भगिन्नाम का जप। और इस सम्बन्ध में सर्बसे महत्त्वप णव और आिश्यक र्बात यह समझने की है वक प णव एकाग्रता केिल एक-दो वदन में प्राप्त नहीं ंहो जाती; आपको कभी भी वनरािा हो कर प्रयत्न करना छोड नहीं ंदेना चावहए। िान्त रहें। िैयव रखें। यवद मन इिर-उिर भटकता है तो वचन्ता न करें। जप वनयमप िवक करते रहें; ध्यान में र्बैठने के समय का पालन दृढ़ता से करें। िीरे-िीरे मन अपने-आप ईश्वरोन्मुखी हो जायेगा और एक र्बार इसे भगिान् के आनन्द का स्वाद वमल गया, 1, वफर कुछ भी इसे वहला नहीं ंपायेगा।

१७५

हमें अपने डपछले जन्मो ंका स्मरण क्यो ंनही ंरहता ?

हमारी सीवमतताओं ंके होते हुए ऐसी सूमृवतयों ंसे हमारा ितवमान जीिन दुरूह हो जाता। इसीवलए सिवज्ञ एिं सुखदाता भगिान् ने हमारा मानवसक विकास इस तरह से वनवश्चत वकया है वक हमारा पिव-जन्म तभी तक हमें स्मरण रहे जर्ब तक िह सूमृवत हमारे वलए अच्छी और सहायप्रद है। जन्म-मरण के चक्र के अन्तन्तम छोर पर पणव विकवसत अिस्था में पहुँच जाने पर, जीिनुमुक्त व्यन्तक्त को समस्त पिव-जन्मों ंकी शृंखला का र्बोि हो जाता है।

१७६

पुनजतन्म के डविय में उसके डवरोध में यह कहा जार्ा है डक डपछले युगो ोंकी र्ुलना में अब जनसोंख्या बहर्् अडधक है।

यह आिश्यक नहीं ंहै वक िही लोग पुनः इसी पृथ्वी पर जन्म लेते हैं, अन्य कोई नहीं।ं मानि-जीिन के क्रम-विकास में, अन्य र्बहुत से प्राणी भी वनम्न योवन से विकवसत हो कर मानि स्तर पर आते हैं। यह सर्ब तो मानितेर िन्तक्तयों ंअथिा वदव्य िन्तक्तयों ंद्वारा, भगिान् अथिा ईश्वर द्वारा स्वयं संचावलत है। और वफर, यह भी आिश्यक नहीं ंहै वक पुनजवन्म इस पृथ्वी पर ही हो। यह प रे विश्व ब्रह्माण्ड में अन्यत्र कहीं ंभी हो सकता है।

१७७

मैं एकादशी को उपवास करर्ा हूँ। मैंने सुना है डक उपवास करने मनुष्् का जीवन-काल छोटा हो जार्ा है। क्ा यह सत्य है?

वर्बलकुल नहीं।ं उपिास से िरीर, मन, प्राण और नावडयाँ सभी का नीकरण जायेगा और अविक सिक्त होंगें। समस्त अिुद्धताएँ और मल नष्ट हो जायेंगे। न्तव्य सान्तत्त्वक गुणों ंका विकास र्बहुत सरलता से कर सकेगा। मन िान्त और मौन हो जायेगा उपिास से सभी रोग नष्ट वकये जा सकते हैं। यवद कोई र्बहुत खाऊ व्यन्तक्त उपिास करने का विचार करे तो उसके वलए कवठनाई आयेगी। अल्पाहारी व्यन्तक्त को व्रत में सुख प्रतीन होगा। हि अविक समय तक उपिास कर सकता है। दीघव काल तक वनरन्तर उपिाम नहीं ंकरना चावहए। िीरे-िीरे वकन्तु सतत अभ्यास करते रहना आिश्यक है। आरि में मास में एक वदन का व्रत करें, वफर पन्द्रह वदन र्बाद और वफर िीरे-िीरे सप्ताह में एक र्बार उपिास करें।

१७८

गर्् आठ विों से मैंने अपना समय डवचारसागर, पोंचदशी, गीर्ा, उपडनिद्् इत्याडद के स्वाध्याय में व्यर्ीर्् डकया है और एक प्रकार से मैंने इन पर पूणातडधकार प्राप्त कर डलया है। डकनु्तु मुझे सबमें एकत्व होने की अनुभूडर्् नही ोंहोर्ी। क्ा ग्रन््् केवल ज्ञान प्राप्त कर लेने मात्र के डलए हैं?

विचारसागर अथिा पंचदिी का अध्ययन मात्र करने से िुद्ध िेदान्तन्तक चैतन्य की अनुभवत नहीं ंहो सकती। िेदान्तन्तक तकव-वितकव अथिा िुष्क पररचचावएँ िोिों ंकी कर लेने से व्यन्तक्त को जीिन के एकत्व की अनुभवत में सहायता नहीं ंवमल सकती। आपको सभी प्रकार की अिुन्तद्धयों,ं घृणा, ईर्ष्ाव, द्वेर्, स्वयं के श्रेष्ठ होने की भािना इत्यावद जो मानि को मानि से अलग करने िाले र्बन्धक तत्त्व हैं, को कठोरतापिवक कुचलना पडेगा। यह सर्ब िुद्ध भािना सवहत वनरन्तर मानिता की वनष्काम सेिा करने से हो सकता है। आजकल व्यािहाररक िेदान्त

दुलवभ हो गया है। हर ओर िुष्क िाद-िििाद और िमों के अनािश्यक पहल पर वनरथवक कलह वदखायी देते हैं। लोग वगनती की कुछ पुस्तकें पढ़ कर जीिनुमुक्त हो जाने का ढोंग करते हैं। यवद कहीं ंएक भी िास्तविक जीिनुमुक्त हो तो िह समस्त संसार को वनदेवित करने के वलए एक महान् सवक्रय िन्तक्त होगा। िह संसार का भविष्य् परररिवतवत कर सकता है। आजकल के जीिनुमुक्त तो ग्रन्थ-कीट मात्र ही हैं। र्बहुत से लोग समझते हैं वक थोडा सा लघुवसद्धान्तकौमुदी और तकव का अध्ययन कर लेने से िे जीिनुमुक्त र्बन सकते हैं। जीिन का एकत्व तो केिल आो-साक्षात्कार से ही हो सकता है, और यह सतत आध्यान्तिक सािना करने से होगा। सद्ग्रन्थों ंका स्वाध्याय थोडा सहायक होगा, वकनुतु यह आपको जीिनुमुक्त नहीं ंर्बना सकता।

१७९

बहर्् भलीभाँडर्् ढूँढने पर भी मैं सच्चा गुरु नही ंर्ोज पाया हूँ। क्ा आप कोई बर्ा सकर्े हैं?

ऐसा सच्चा गुरु खोज पाना जो विष्य् का गीिरताप िवक ध्यान रख सके, इस संसार में र्बहुत कवठन कायव है, यह वर्बलकुल ठीक है। वकनुतु एक ऐसा सच्चा विष्य् जो गीिरता से गुरु के वनदेिों ंका पालन करे, खोज सकना उससे भी कहीं ंअविक कवठन है। क्ा आपने इस पहल पर कभी सोचा है? गुरु के चयन में अपनी तकव-िन्तक्त का र्बहुत अविक उपयोग न करें। यवद आप प्रथम श्रेणी का गुरु खोजने में असफल हो जाते हैं तो ऐसा व्यन्तक्त देखने का प्रयास करें जो गत कुछ िर्ों से आध्यान्तिक पथ पर चल रहा हो, जो सचररत्र हो तथा अन्य सद्गुणों ंसे सम्पन्न हो, और वजसे सद्ग्रन्थों ंका कुछ ज्ञान हो। वजस प्रकार जर्ब वसविल सजवन नहीं ंहोता तो उसका छोटा अवसस्टेंट रोगी की देख-रेख का कायव सँभाल लेता है, उसी प्रकार वद्वतीय श्रेणी के स्तर का गुरु भी प्रथम श्रेणी के स्तर र्बाले गुरु के अभाि में र्बहुत सहायता कर देगा।

१८०

क्ा सोंन्यासी के डलए भगवा रोंग के वस्त्र पहनना अडनवायत है?

संन्यासी की मवहमा और उनुमुक्त न्तस्थवत की कल्पना कर सकना गृहन्तस्थयों ंके वलए र्बहुत ही कवठन है। यवद अन्तमवन में परररितवन हो, तो र्बाह्य रूप में भी परररितवन होना अवत आिश्यक है। वजसके मन में परररितवन आ गया हो, उसके वलए भगिा िि अथिा गेरुआ िि िारण करना आिश्यक है। माया अथिा स्वािभाि जर्ब इन्तन्द्रयाँ भोग-पदाथों की ओर जाने लगती हैं तो जैसे ही आपकी अपने पहने हुए ििों ंके रंग पर दृवष्ट जाती है तो स्मरण वदला देती है वक आप संन्यासी हैं। यह आपको तुरन्त झटका दे कर गलत कायव करने से र्बचा देती है। इस रंग की अपनी मवहमा और अपने लाभ हैं। एक सच्चा सन्यासी ही समस्त सम्बन्धों ंऔर र्बन्धनों ंको काट कर मोह से छट सकता है। उसके पुराने वमत्र और सम्बन्धी उसे परेिान नहीं ंकरेंगे। जर्ब व्यन्तक्त प्रिचन देने जाता है, तर्ब भी यह पोिाक र्बहुत सहायता करती है। वहनदू लोगों ंके मन में इस रंग के सम्बन्ध में एक अलग प्रकार की पवित्रता का भाि है। सामान्य लोग संन्यासी के िचनों ंको अविक सहजता मान लेते हैं।

१८१

आपने अपनी पुिक 'ईज़ी सै्टैप्स टू योगा' में ब्रह्मचयत के महि के डवषय में कहा है। डदनभर के कठोर परररश्रम के बाद में अत्यन्त र्क जार्ा हूँ। क्ा अपनी उस धमतपत्नी की ओर देर्ना पाप है जो मुझे सुर्् देर्ी है? क्ा ब्रह्मचयत का पालन वृिावस्था से बचा देर्ा है? रडर्क्रीड़ा

जीवन में पुनः नवीनरा् देने के डलए आवश्यक है। मनुष् की समि मानडसक शस्तियाँ उसे समय से सम्बस्तन्धर् जन्म, आयु, वृिावस्ा् और मृत्यु की प्रडक्रया से बचा नही ोंसकर्ी।ों वोंशवृस्ति हेरु् स्त्री-पुरुि को यह रचनात्मक शस्ति प्रदान की गयी है। अर्: क्ा सम्भोग डक्रया इसके डलए आवश्यक नही ोंहै?

आपने विर्य को प णवतया गलत दृवष्टकोण से देखा है। आपके वसद्धान्त की भ वमका ही प री तरह से गलत है। मोक्ष का भौवतक िरीर से सम्बन्ध नहीं ंहै। एक र्बार वजसका जन्म हो गया, उसकी मृत्यु वनवश्चत है, अथावत् भौवतक िरीर की मृत्यु वनवश्चत है। िह अिस्था अमरत्व अथिा मोक्ष की अिस्था कहलाती है वजसमें आप जन्म-मरण के चक्र में िंिे वकये र्बना स्वतन्त्रता सवहत वनरन्तर आनन्द में विचरण करते हैं। जर्ब तक आप स्वयं की उस परम तत्त्व के साथ एकत्व एिं पहचान को स्थावपत नहीं ंकर लेते, जो दिे-काल की समस्त सीमाओं ंसे परे है, तर्ब तक मोक्ष का आनन्द प्राप्त नहीं ंकर सकते। िाश्वत तत्त्व, परमािा से तादात्म्य स्थावपत करने और उनका साक्षात्कार करने के वलए आपको अपनी िन्तक्तयों ंका एक-एक कण अपने भीतर सूँजो कर रखना चावहए। िस्तुुत हमारे भीतर केिल एक िन्तक्त है जो विविि रूपों ंमें विवभन्न कायव करती है। वजस प्रकार एक मिीन से लम्र्बे समय तक काम लेते रहने के वलए आप उसे र्बना जंग लगने वदथे अथिा व्यथव के कायों में उपयोग न करते हुए यथोवचत काम ही लेते हैं, उसी प्रकार अपने िरीर को भी सही रूप में देख-रेख करते हुए दीघव आयु के वलए इसकी क्षमताओं ंएिं िन्तक्त को संवचत रखना चावहए। िरीर न रहने पर आप उच्चतर लोकों ंका कैसे अिेर्ण कर सकते हैं?

कृपया मेरे द्वारा अन वदत भगिद्गीता का अध्ययन करें। उसमें िणवन वकये गये त्याग का अभ्यास करें। यह आपको पररिार का त्याग कर देने के वलए नहीं ंकहता। अत्यका संसार में रहते हुए, संसार के द्वारा ही, संसार में आसन्तक्त न रखना सीखना पडेगा। आपको कतवव्य, गृहस्थी में आसक्त न हो कर गृहस्थी चलाना है। केिल तर्ब ही आपको मन की ऐसी पवित्रता प्राप्त होगी जो आपको असीम िान्तन्त, सुख और आनन्द के पथ पर उन्नवत करने की योग्यता प्रदान करेगी। अपनी गलत िारणाओं ंकी पालना

र्बहुत हो चुकी। अर्ब जाग जायें और अपने िास्तविक अनश्वर रूप को जानें। अपने सच्े्चे, अमर, सिवव्यापक आि-स्वरूप को देखें और अमरत्व के पान अमृत का रसपान करते हुए उसमें न्तस्थत हो जायें। मेरी विक्षाओं ंके अनुसार चलें। आप प णवतया पररिवतवत व्यन्तक्तत्व से सम्पन्न, आन्तररक आध्यान्तिक िन्तक्त से सक्षम व्यन्तक्त र्बन जायेंगे। विश्वास रखें और िीरता विकवसत करें। सफलता आपकी होगी। आप ही 'िह' हैं। **र्् त्वम् अडस !**

१८२

क्ा आत्म-साक्षात्कार प्राप्त करने के डलए डनष्काम कमतयोग अडनवायत है? यडद ऐसा है र्ो उसे कैसे करना चाडहए?

हाँ, वनवश्चत रूप से! यवद आप अपने मन की मवलनताओं ंको दर करने के वलए वनष्काम कमवयोग के अभ्यास की उपेक्षा करते हैं तो आप िेदान्त के उदे्देश्य और भाि को समझ और आिसात् नहीं ंकर सकते।
वनष्काम कमवयोग से वचत्तिु्न्तद्ध प्राप्त होती है और अन्ततोगत्वा परमािा में एकत्व से साक्षात्कार तक पहुँचा देता है।

प्रत्येक व्यन्तक्त की गहन प्रेम से, 'मैं कर रहा हूँ' का भाि न रखते हुए, वर्बना फल की आिा से, पररणाम में कुछ प्रान्तप्त की इच्छा अथिा प्रिंसा प्राप्त करने तक की भी इच्छा न रखते हुए सेिा करें। यह अनुभि करें वक आप केिल एक वनवमत्त मात्र अथिा भगिान् के हाथों के उपकरण हैं। वनिवनों और रोवगयों में भगिान् को देखते हुए, उनकी प जा की भािना से सेिा करें। वकसी भी स्थान, व्यन्तक्त अथिा िस्तु में आसन्तक्त न रखें। सफलता अथिा असफलता, लाभ अथिा हावन, सुख और दुःख की ओर ध्यान न देते हुए, संसार की इन समस्त पररितवनिील पररन्तस्थवतयों के मध्य में मानवसक सन्तुलन र्बनाये रखें। समस्त वक्रयािीलता में संलग्न रहते हुए मन को सदैि परमािा में सुन्तस्थर रखें। तर्ब आप िास्तविक कमवयोगी र्बन जायेंगे। सही भािना से वकया गया कमव, व्यवक को उन्नत करता है। यवद लोग आपका उपहास अथिा वनन्दा करें, चोट पहुँचायें और मार भी िालें, तो भी तटस्थता र्बनाये रखें। अपनी सािना में लगे रहें।

१८३

मेरे जीवन में मेरी गलडर्याँ और पाप असोंख्य हैं और मेरा अज्ञान असीम है। सोंसृ्कर् भी मैंने सीखी नही ों। कृपया मुझे बर्ायें डक क्या आध्यास्तत्मक पथ पर मेरे चल सकने की कुछ सम्भावना है ?

अज्ञान तो एक मानवसक कल्पना है। 'आप' ज्ञान का साकार स्वरूप हैं। जर्ब आिरण हट जाता है तो आप अपने वनज स्वरूप में प्रकावित हो जाते हैं। िासनाओं और अहंकार को वनकल जाने दें। र्बादलों का छेदन कर दें। इन र्बादलों के पीछे उज्ज्वल सयव है। मन के पीछे स्व-प्रकावित आिा है। स्वयं को िुद्ध करें। िृवत्तयों को नष्ट कर िालें। आध्यान्तिक पथ पर आरूढ़ हो जायें। आपका जन्म केिल इसी के वलए हुआ है। आि-साक्षात्कार और आध्यान्तिक मागव के वलए संसृ्कत जानना आिश्यक नहीं है। आपने केिल वसद्धान्त और सार को समझना है। सभी संसृ्कत की पुस्तकें अँगरेजी तथा अन्य भाषाओं में उपलब्ध हैं। इस सम्बन्ध में वचन्ता न करें। संसृ्कत आपको थोडी सी सहायता कर सकती है, र्बस केिल इतना ही है। यवद आपके पास समय हो तो उसकी िणवमाला सीख लें वजससे वक गीता के और उपवनषदों के कुछ स्तोत्र एिं श्लोक पढ़ सकें।

१८४

हम फल और सस्तियो ों को भी काटर्े हैं, क्या उसे डहोंसा नही ों माना जाना चाडहए?

सब्जी और फलों को काटना वहंसा नहीं है। पौिों और िृक्षों में िास्तविक चेतना नहीं होती, यद्यवप जीिन उनमें भी है। पौिों में जीिन है, जानिरों में संिेदन-िन्तक्त है. मनुष्यों में मानवसकता है और सन्तों में आध्यान्तिकता है। पेड-पौिों में िैयविक अहकार और चैतन्य प्रवतवर्बन्तम्बत नहीं है; अतः उन्हें कष्ट का अनुभि नहीं होता। िृक्ष यह नहीं कहेंगे वक मुझे कष्ट हो रहा है। पेड-पौिों में मन का विकास नहीं होता। यह वर्बलकुल प्रारन्तिक न्तस्थवत में तथा
अल्पविकवसत अिस्था में हैं। यह जड अथिा संज्ञाहीन हैं। यवद हम फल-सन्तब्जयों को काटने में भी वहंसा देखेंगे तो पृथ्वी पर जीिन असंभि हो जायेगा। यह तो केिल र्बाल की खाल वनकालने िाली र्बात है। यह तो उन लोगों का वनरथवक दािवनक विचार है जो व्यथव के तकव-वितकव में लगे रहते हैं। ऐसे नगण्य विचारों की उपेक्षा कर देनी चावहए। व्यािहाररक व्यन्तक्त र्बनें।

१८५

भगवान् मुझसे बार् क्यो ों नही ों करर्े क्या बाधा है?

अि-समपवण परी तरह से नहीं ़हुआ है। अभी भी सक्ष्म मोह, सक्ष्म इच्छाएँ और अवत सक्ष्म अहंभि विद्यमान हैं। इन्तन्द्रयाँ अभी अवत र्बलिती एिं र्बाह्यगामी हैं। यह सर्ब बिार्ाएँ हैं। जर्ब यह दर हो जायेंगी, तर्ब आप
अपने अन्तरतम में भगिान् की मिुर अिा स्पष्ट सुन लेंगे। अिुद्ध प्राणी प्रायुः अपने अिुद्ध मन की अिाज को भगिान् की अिाज समझने की गलती कर र्ैबैठते हैं।

१८६

मुझे इस झूठे सोंसार से घृणा हो चुकी है। मैं भलीभाँडर् जान गया हूँ डक ऐसे जगर् में रहने का कोई लाभ नही ़ों है। हर ओर केवल दुःर्-कष्ट ही देर्ने में आरे् हैं। मैं सोंन्यासी जीवन जीना चाहर्ा हूँ; डकनुतु गुरु को कहाँ र्ोजूँ, यह नही ़ोंजानर्ा। कृपया मुझे बर्ायें डक सोंन्यासी बनने के डलए मुझे क्ा करना होगा ?

आपको संसार से नहीं, ़ सांसाररक जिीन से घृणा करनी चावहए। संसार तो भगिान् का प्रकवटत स्वरूप
है। संसार आपका सिवश्रेष्ठ विक्षक है। आपके किल्य प्रान्तप्त के मागव में यह संसार बिार्ा नहीं ़र्बन सकता। आपको ही अपना जिीन जीने का ढंग और िसुतु-पदाथों को देखने का ढंग पररिवतवत करना होगा। आपको वनवश्चत रूप से नयी मानवसकता और नया दृवष्टकोण र्बनाना पडेगा। तर्ब यही संसार स्वगव प्रतीत होगा। आपमें सच्चा िैराग्य अभी विकवसत नहीं ़हुआ है। यह तो वकसी दुःखद घटना या पररन्तस्थवति उत्पन्न होने िाली क्षवणक अरुवच है। आप संन्यास लेने के अभी उपयुक्त नहीं ़हैं। सन्यासी के कतवव्य वनभाने में आप असफल हो सकते हैं। आध्यान्तिक सोपान की आपको एक-एक सीढ़ी पर क्रमानुसार चढ़ना पडेगा।

मैं आपको संसार में ही रहते हुए अपने वचत्त की िुन्तद्ध के वलए कुछ िर्षों तक वनष्काम कमवयोग करने का परामिव देता हूँ। आपको विनम्रता, अि-त्याग, क्षमा, दया और विश्व-प्रेम की भािना स्वयं में विकवसत करनी होगी। यह सद्गुण किल वनष्काम सेिा से ही अवजवत वकये जा सकते हैं। आपमें संन्यास हेतु गुरु के पास पहुँचने से पहले वनवश्चत रूप से िम, दम, सिव-संग-पररत्याग और गुरु के प्रवत दृढ़ विश्वास एिं पररप णव आज्ञाकाररता होनी चावहए, अन्यथा आपको कोई लाभ नहीं ़होगा।

१८७

जब मैं यह जानर्ी हूँ डक यह सोंसार सत्य नही ़ों है और मुझे एक-न-एक डदन छोड़ कर जाना ही होगा, र्ो इसे मैं अभी से ही क्ो ़ों न त्याग दूँ? पडर्-सेवा को अपना कर्तव्य समझरे् हुए मैं इसे बहर् सच्चाई और गम्भीरर्ा सडहर् कर रही हूँ। डकनुतु मैं जानर्ी हूँ डक जीवन का विडवक लक्ष्य प्राप्त करने में न पडर्, न पुत्र, न डपर्ा और न ही मार्ा मेरी सहायर्ा कर सकरे् हैं। मीराबाई ने क्ा अपने पडर् को छोड़ देने पर ही भगवान् को प्राप्त नही ़ोंडकया र्ा?

ी के वलए उसका पवत भगिान् का स्वरूप है। उसे किल उसी में और उसी के माध्यम से भगिान् का साक्षात्कार करना होगा। उसे तो पजा के वलए मन्तन्दर में जाने की भी अिश्यकता नहीं ़है। आपका िैराग्य क्षवणक
उद्गार है। आपकी आध्यान्तिक उन्नवत में यह वकसी भी प्रकार से आपका सहायक नहीं ़हो सकता। आप कहने को भले ही कह दें वक 'यह संसार सत्य नहीं ़है,' वकनुतु आप अन्तमवन से न जाने वकतनी िसुतुओं ़में आसक्त होंगी।
जो िैराग्य पाररिाररक कवठनाइयों ़और विपवत्तयों ़से थोडे से समय के वलए आता है, िह विद्युत् की चमक की भाँवत होता है। झट से ही यह चला भी जाता है।

संसार वकस प्रकार से असत्य है? संसार इस प्रकार असत्य नहीं ंहै जैसे खरगोि के सींगं अथिा बाँझ नारी का पुत्र। यह संसार सापेक्ष सत्य अथावत् व्यिहाररक सत्ता है। यह ब्रह्म के समान सत्य नहीं ंहै। जर्ब ब्रह्म अथिा िाश्वत सत्य के साथ तुलना की जाती है तो इसकी कोई िास्तविक सत्ता नहीं ंहै। यह जगत् प्रावतभावसक अथिा प्रतीवत है। ब्रहा परासत्ता अथिा पररप णव सत्य है। जगत् केिल उस ज्ञानी के वलए असत्य है जो अपने वनज स्वरूप में न्तस्थत है। अविकांि लोग 'वमथ्या' िब्द का सही रूप में अथव नहीं ंसमझते। अतः िह वर्बना वकसी उद्देश्य के, वर्बना वकसी अनुिासन के और वर्बना वकसी भी सद्गुण को उपावजवत वकये ही संसार का त्याग करने का प्रयत्न करते हैं। यह िोचनीय भ ल है। संसार को मात्र प्रतीवत मान कर, आपको संसार में अिक िैयव से, अहंकारिन्य हो कर, आिाभा सवहत परम सत्ता के अथिा जगत् के म ल आिार के सुस्पष्ट ज्ञान के साथ कायव करना होगा। यवद सािक वनष्काम कमवयोग के द्वारा हृदय को िुद्ध वकये वर्बना तथा मोक्ष-प्रान्तप्त के वलए आिश्यक सािन-चतुष्टय को अवजवत वकये वर्बना संसार का त्याग करता है तो ऐसे त्याग से उसे वंकवचत् भी लाभ नहीं ंहोगा।

मीरा की र्बात वर्बलकुल अलग थी। िह पररप णव िैराग्य सम्पन्न तथा र्बाल्यािस्था से ही कृष्ण-प्रेम से पररप ररत हृदय से सम्पन्न थी। आपकी र्बात अलग है। अतः यह तुलना न करें। आपको अपनों ंकी और मानिता की सेिा के द्वारा स्वयं को विकवसत करना होगा। इसका अभ्यास करें। अपने पवत के उज्ज्वल नेत्रों ंमें और सभी के चेहरों ंमें भगिान् कृष्ण के दिवन करें। भगिान् की कृपा आप पर हो!

१८८

अभी मेरे मन में गृहस्र्-जीवन को त्यागने की कोई इच्छा नही ंहै और डफर भी कुण्डडलनी शस्ति जाग्रर् करने की मुझे र्ीव्र इच्छा है। क्ा यह सम्भव है? क्ा श्रीय आपश्री मेरी सहायर्ा करेंगे ?

हाँ, आप गृहस्थ-आश्रम में रह सकते हैं। वकन्तु आदिव गृहस्थ र्बन कर रहें। अन्य तीनों ंआश्रमों ंका पोर्ण करें। यवद गृहस्थी के कतवव्यों ंका वनयम-वनष्ठा से पालन वकया जाता है तो संन्यास की कोई आिश्यकता नहीं ंहै।

पणव रूप से सत्य-वनष्ठ ब्रह्मचारी र्बन जायें और मैथुन वक्रया का सिवथा त्याग कर दें। आप पयावप्त सन्तान प्राप्त कर चुके हैं। यवद आप िास्तविक, ठोस, तीव्रगामी आध्यान्तिक उन्नवत चाहते हैं तो योगाभ्यास की यह अवनिायव पिावपेक्षा है। अपनी िमवपत्नी को भी आध्यान्तिक मागव पर प्रविवक्षत करें। िह भी उसी मन्त्र का जप करे वजसका आप कर रहे हैं और िावमवक पुस्तकों ंका स्वाध्याय तथा समय-समय पर उपिास करे अथिा द ि-फल का आहार ले।

िर्िवसन आप करते रह सकते हैं। सही आचरण के वनयमों ंका कठोरता से पालन करें। यम-वनयमों ंके अभ्यास में न्तस्थर हो जायें। कुण्डवलनी जाग्रत करने से पहले अपने हृदय को पवित्र र्बनायें। ईर्ष्याव, द्वेर्, स्वाथवपरता, क्रोि, लोभ, मोह, अहंकार, राग और द्वेर् से स्वयं को पणवतया मुक्त करें। तर्ब कुण्डवलनी अत्यन्त सरलता से जागृत हो जायेगी। इसे जगाने में, मैं आपकी सहायता करूँगा। वचन्ता न करें। अपना जप और ध्यान र्बढ़ा दें। गृहस्थ रहते हुए ही आप आध्यान्तिक सफलता प्राप्त कर सकते हैं, वकन्तु काया, िाचा, मनसा ब्रह्मचारी होना आपके वलए वनतान्त आिश्यक है।

१८९

श्रिय स्वामी जी, आपनी ने मनुष् को पुत्र का डपरा् बनरे् ही अपनी धमतपत्नी को 'डवश्वमारा्' की दृडष्ट से देर्ने का उपदेश डदया है। डकनुतु यडद जन्म के कुछ मास पिार् पुत्र का देहान्त हो जाये रो् उसकी स्तरूर सम्पडत्त की देर्-रेर् के डलए उत्तराडधकारी नही ंरहेगा। ऐसी स्तरुडर् में उस व्यस्ति को क्ा करना चाडहए? कृपया मुझे अपना परामशत दें।

अपनी न्तस्थर सम्पवत्त की आप क्ों ंवचन्ता करते हैं? क्ा यह सम्पवत्त आप अपने साथ ले कर आये थे? और क्ा मृतुयु के साथ ही आप इसे अपने साथ ले कर जायेंगे? िन-सम्पदा अथिा अचल सम्पवत्त है क्ा? िरती का किेल एक छोटा टुकडा ही तो है न? क्ा जमीन-जायदाद और उसका उत्तराविकारी आपको सुख और िान्तन्त दे सकते हैं? क्ा यह सर्ब दु:ख-वचन्ता के सिान और कारण नहीं ंहैं? िन-सम्पवत्त और सन्तान की इच्छा मनुर्ष् को संसार-चक्र से र्बाँ िदेती है। वजज्ञासु सिाक के वलए यह सर्ब बिािाएँ हैं।

भगिान् रुबुद्ध और भतृवहरर ने अपनी िन-सम्पवत्त का क्ा वकया था ? क्ा उनमें से वकसी ने भी उसकी देख-रेख के वलए पुत्र-प्रान्तप्त की लालसा की? जो व्यन्तक्त िन, गृह एिं पुत्र की वचन्ता करता है, िह भगिान् का वचन्तन कैसे कर सकता है? भगिान् और िनपरायणता दोनों ंका एक-साथ वचन्तन असिि है। प्रकिा की उपन्तस्थवत में अन्धकार नहीं ंठहर सकता। जर्ब तक आप विर्य-पदाथों को भोगने में सुख मानते रहेंगे तर्ब तक आिा का आनन्द अनुभि नहीं ंकर सकते।

यवद आपको अन्य और पुत्र की प्रान्तप्त हो जाती है तो अपने कष्टों ंमें और िृन्तद्ध कर लेंगे। पहले ही आपके कण्ठ में र्बहुत से र्बन्धन पडे हुए हैं। वजस व्यन्तक्त ने यह समझ वलया है वक मानि के क्लेि वकतने अविक हैं, िह कभी भी सन्तान को जन्म दे कर संसार में नहीं ंलायेगा। यवद आपका मन िासनाओं ंसे भरा हुआ है और यवद आपको इन िासनाओं ंको नष्ट करना कवठन लगता है, तो आप द सरा पुत्र प्राप्त कर लें और उसके र्बाद पणव ब्रह्मचारी र्बन जायें।

१९०

भगवान् सवतव्यापक एवों डनराकार हैं। उनें् मूडर्त में सीडमर् कैसे डकया जा सकरा् है ? मूडर्तपूजा का क्ा लाभ है?

सिवव्यापक भगिान् की वदव्यता सृवष्ट के प्रत्येक कण में स्पन्तन्दत है। विश्व-ब्रह्माण्ड में एक कण भी ऐसा नहीं ंहै जहाँ िह नहीं ंहै। तर्ब वफर आप यह क्ों ंकहते हैं वक िह मवतव में नहीं ंहैं?

नये सािकों ंके वलए मवतव एक आिार है। यह उसके आध्यान्तिक र्बचपन का अिलम्बन है। प्रारि में आकार अथिा मवतव, पजा के वलए आिश्यक है। अनन्त के ऊपर, वनराकार परम सत्ता पर मन को केन्तन्द्रत कर सकना सर्बके वलए सिि नहीं ंहोता। ध्यान का अभ्यास करने के वलए अविकांि सािकों ंको वकसी ठोस आकार की आिश्यकता होती है।

मवतवयाँ मवतवकारों ंकी वनरथवक कल्पनाएँ नहीं ंहैं, अवपतु ऐसी उज्ज्वल प्रणावलयाँ हैं वजनके माध्यम से भक्त के हृदय की संिेदनाएँ भगिान् की ओर प्रिावहत होती हैं। यद्यवप पजा मवतव की की जाती है, वकनुतु भक्त उसमें भगिान् की विद्यमानता को अनुभि करता है और अपनी सम्पणव भन्तक्त-भािना उसमें समावहत कर देता है। मवतव तो मवतव ही रहती है, वकनुतु उपासक की पजा उसके भगिान् तक पहुँच जाती है।

भक्त के वलए म वतव अथिा वचत्र चैतन्य का पुंज होता है। िह मवतव से पे्ररेणा प्राप्त करता है। मवतव उसका वनदेिन करती है। उससे िातावलाप करती है। यह मनुर्ष् का रूप िारण करके अनेक प्रकार से उसकी सहायता करती है। दवक्षण भारत के मदुरै मन्तन्दर के भगिान् ििि की म वतव ने मनुर्ष् रूप से एक लकडहारे और एक िृद्धा की सहायता की। वतरुपवत मन्तन्दर की म वतव ने मनुर्ष् का रूप िर कर अपने भक्त की सहायताथव न्यायालय में गिाही दी थी। ऐसे वकतने ही चमत्कार और रहस्मय उदाहरण हैं।

केिल वहनद िमव में ही म वतवप जा नहीं ंहै। ईसाई क्रॉस को पजते हैं। उनके मन में क्रॉस की छवि रहती है। मोहिदी काबा की विला का ध्यान मन में रख कर प्राथवनाएं करते हैं। मानवसक प्रवतवबम्ब भी मवतव का रूप है। यह केिल स्तर का ही अन्तर है, बात तो एक ही है।

सभी उपासक भले ही वकतने भी रुबुन्तद्धिादी क्ों ंन हों,ं अपने मन में एक आकार बना लेते हैं और मन को उस पर केन्तन्द्रत करते हैं। प्रते्यक व्यन्तक्त म वतवप जक है। वचत्र और छवि भी केिल प्रवतमा का ही रूप हैं। स्थल मन के अिलम्बन के वलए स्थ ल प्रतीक की आिश्यकता होती है तो सक्ष्म मन को सक्ष्म आिार की। िेदान्ती के वलए भी चचल मन को न्तस्थर करने के वलए ॐ का प्रतीक होता है। केिल वचत्र अथिा पत्थर या लकडी की प्रवतमा ही म वतव नहीं ंहै। अक्षर और सांकेवतक वबनदु भी म वतव बन जाते हैं। अतुः मवतवपजा को दोर् क्ों ंदेना ?

१९१

क्ा नारी केवल पुरुि के डलए, उसकी सेवा करने के डलए ही बनायी गयी है? क्ा भगवान् ने हमें केवल रसोईघर के और सन्तानोत्पडत्त के डलए ही बनाया है ? स्त्री गौण भूडमका क्ो ंडनभाये ? नारी को समानाडधकार देना क्ो ंनही ंचाहरे् आप ?

िी विकसी भी प्रकार से पुरुर् से वनम्न नहीं ंहै। गृह एक सहयोगी संस्था है। यह कायव-विभाजन के वसद्धान्त पर उन्नत होती है। यवद पुरुर् िनोपाजवन करता है और त्वी घर में रहती है तो इसका अथव यह नहीं ंवक िी पराश्रयी अथिा दासी है। िसुतुतुः िह राष्टर की वनमावता है। एक मवहला का अपनी सन्तान को प्रविवक्षत करके उत्तम नागररक बनाना तथा इस प्रकार समस्त मानि-जावत का चररत्र वनमावण करना वनुःसने्देह उससे कहीं ंअविक एिं श्ेरेष्ठतर िन्तक्त एिं सामर्थ्व होने का पररचायक है जो वक िह वनणावयक अथिा ििायक या अध्यक्ष अथिा मन्त्री या न्यायािीि बन कर प्राप्त करने की आिा रखती है।

यह विचाररिारा वक िी और पुरुर् समान हैं, िसुतुतुः पवश्चम की िारणा है। भारतीय अथिा वहनद िारणा के अनुसार पुरुर् और िी, पुरुर् और िन्तक्त एक एिं अविभाज्य हैं। सीता ने स्वयं का वभन्न अन्तस्तत्व नहीं ंसमझा। हि श्री राम में ही थीं,ं और राम की ही थीं।ं भारतीय नारी सदै प्रते्यक पाररिाररक, िावमवक एिं सामावजक जीिन में अपना तादात्म्य पणवतया अपने पवत के साथ ही बनाये रखती है। िह अपने गृह की साम्राज्ञी है। मातृत्व की मवहमा से िह अपने गृह को प्रकावित करती है। मातृत्व में ही नारी का समस्त ििेर्ाविकार, उसकी मवहमा, योग्यता और उसका अविकार-के्षत्र ििेर् रूप से वनवहत है।

पवश्चमी जगत् ने मवहलाओं ंको पुरुर्ों ंके प्रते्यक के्षत्र में भाग लेते हुए देख वलया है। वकनु्तु मैं प छता हूँ: "इससे क्ा उन देिों ंमें मानि जीिन में अविक प्रसन्नता और देि की समृन्तद्ध एिं िान्तन्त में अविक िृन्तद्ध हो गयी है? हाूँ, इससे अविक तलाक, अविक के्लि, अविक व्याकुलता ही बढ़ी है। इसने केिल न्तियों ंके अज्ञान के आिरण को घनीभत तथा उनमें राजवसक तत्त्व का संििवन अिश्य ही कर वदया है।"

पवश्चमी जगत् में भी र्बहुत से व्यन्तक्त हैं जो न्तियों ंकी पुरुर्ों ंके साथ समानाविकार की मााँग के पक्ष में नहीं ंहैं। जो इस िारा के पक्ष में थे, िह भी अर्ब अपने इस गलत समथवन के वलए गीरतापिवक पश्चात्ताप कर रहे हैं, क्ोंवक िे िस्तुतः अपनी दृवष्ट के समक्ष इसके दुष्पररणाम देख रहे हैं।

स्वच्छन्द जीिन, पररप णव स्वतन्त्रता नहीं ंहोती। संयमविहीन वमलना-जुलना स्वतन्त्रता नहीं ंहै। इस झठी स्वतन्त्रता में पड कर कई भारतीय मवहलाओं ंने अपना जीिन स्वयं ही नष्ट कर वलया है।

पवश्चमी जगत् की नारी का आदिव हमारा आदिव नहीं ंहोना चावहए, क्ोंवक तर्ब हम केिल अप्राकृवतक ही नहीं ंअवपतु अरावष्टरय भी हो जायेंगे। एक राष्टर अन्य वकसी दे के आदिव तथा सामावजक प्रथाओं ंको, स्वयं अपनी आिारभ त संस्कृवत को समझे वर्बना, नहीं ंअपना सकता।

मवहलाओं ंको केिल श्रेष्ठ माताएाँ र्बनना चावहए। भगिान् की भव्य योजना में उन्ोंने ही यह कायव करना है। वदव्य योजना का तात्पयव यही है। भगिान् की इच्छा यह ही है। नारी के अपने वििेर् मनोिैज्ञावनक गुण, स्वभाि, योग्यताएाँ, िृवत्तयााँ और मनोभािनाएाँ हैं। समाज में उनकी कुछ अपनी अक्षमताएाँ अथिा सीमाएाँ हैं। िे पुरुर्ों ंके साथ अपनी तुलना न कर सकती हैं, न ही करनी चावहए।

क्ा वैवाडहक जीवन ईश्वर-साक्षात्कार प्रास्तप्त में बाधक नही ंहै? एक डववाडहर् व्यस्ति एक-सार् परमात्मा और अपनी पत्नी को कैसे प्रसन्न कर सकर्ा है?

िे लोग जो सांसाररक िस्तु-पदाथों के प्रवत त्याग एिं अनासन्तक्त की भािना से सम्पन्न हैं तथा जो यह समझते हैं वक जीिन की प्रान्तप्त प्रकृवत रूपी महाविद्यालय से विक्षा ग्रहण करके स्वयं को सही सााँचे में ढालने के वलए ही हुई है, उनके वलए िैिावहक जीिन कभी भी र्बािक नहीं ंर्बन सकता। त्यागराज, एकनाथ, नरसी मेहता, भिाचलम् रामदास, तुकाराम, नामदेि, जयदेि, चैतन्य और कर्बीर जैसे सन्तों ंके जीिन-चररत पढ़ें। संसार में गहरे उतर कर देखें और उस मागव को, उस पथ को देखें वजसका अनुसरण ऊपर र्बताये सन्तों,ं भक्तों ंने तथा उनके
जैसे अन्य अनेकों ंने करते हुए जीिन व्यतीत वकया।

मनुष्य यवद अपनी पत्नी को अपनी प्रसन्नता के सािन के रूप में प्रसन्न करने का प्रयास करता है तो यह उसके वलए लज्जास्पद है। जो व्यन्तक्त यह समझता है वक िैिावहक जीिन का उद्देश्य पत्नी को प्रसन्न करना मात्र ही है, िह तो एक अिम दास से भी हीन है। आत्म-संयमी र्बनें। अपनी िमवपत्नी को भी जीिन के उद्देश्य तथा उस उद्देश्य को गृहस्थ-जीिन के माध्यम से प्राप्त करने के सािन के प्रवत जागरूक करें। अपनी वनम्न प्रिृवत्तयों ंके हठी स्वभाि अथिा आपके जीिन-साथी के वनम्न हठ के समक्ष मत चुके, अवपतु स्वयं को सन्तुवलत ढंग से इस प्रकार सुवनयोवजत कर लें वक आप दोनों ंमें से वकसी की भी िारीररक एिं मानवसक अिस्था अव्यिन्तस्थत न हो। आप जो भी कुछ करें, उसे अपना न समझते हुए भगिान् को समवपवत कर दें। आत्म-िुन्तद्ध-युक्त सन्तुष्ट एिं संयमी जीिन के वलए प्राथवना करें। स्वयं को आध्यान्तिक युद्धभवम में वर्बना सोचे छोड दें और वफर पीछे न पलटें, भले ही जीिन को दााँि पर क्ों ंन लगाना पडे। अपने-आपके मावलक र्बनें और स्वयं को भगिान् का ही दास समझें, अपनी पत्नी का नहीं।ं आप अपने िैिावहत साथी के साथ हैं इसका अवभनय भलीभााँवत वनभायें, वकन्तु मानवसक दृवष्टकोण को सदैि इससे अतीत र्बनाये रखें। आप जीिन को सुरवक्षत रूप से वनभा सकेंगे।

क्ा डनगुतण और सगुण दोनो ोंभावो ोंको बनाये रर्ने हेरु मैं 'ॐ' के स्र्ान पर 'ॐ नारायण' का जप करूँ ? नारायण मि का जप मेरे मानस-पटल पर भगवान् की चरुभुतज मूडर्त बनाये रर्ी है। यद्यडप मुझे भगवान् श्री कृष्ण की मूडर्त पर ध्यान करने का अभ्यास बना हआ है और मैं भगवान् श्री कृष्ण के चरुभुतज रप और उनके चरणो ोंमें बैठे हए अजुतन के डचत्र की र्ोज में हूँ। कृपया मुझे बर्ायें डक भडवष् में मुझे क्ा और कैसे करना चाडहए।

आपने पहले ही भगिान् श्री कृष्ण पर ध्यान करके उसके र्बल एिं िन्तक्त से सुस्पष्ट मानवसक छवि र्बना ली है। अर्ब चयवनत एिं वनवमवत रूप में पररितवन करना अच्छा नहीं ंहै। यवद आप पररवितवत कर भी लेंगे तो भी स्वाभाविभा पुरानी छवि आपके समक्ष आती रहेगी। अतुः उसी छवि को ही अपनाये रखें। चतुभुवज भगिान् कृष्ण की छवि की खोज छोड दें।

'ॐ नारायण' सही मन्त्रन्त्रन्त्रन्त्र नहीं ं ंहैहै। सही मन्त्रन्त्रन्त्रन्त्र हैहै- 'ॐ नमो नारायणाय'। 'مق सगुगुण और वनगुगुवण दो यवद आप प्रश्ोपवनर्द् का अध्ययन करें तो इस तर्थ् को भली प्रकार से समझ जायेंगे।

यवद आप मन्त्र-पररितवन करना ही चाहते हैं तो आप 'ॐ नमो भगिते िासुदेिाय' का जप कर सकते हैं।

१९४

मैं उपडनिद् र्ी अन्य ग्रन्ो ोंका स्वाध्याय कररा रहा हूँ और उनमें मैंने पाया है डक लगभग सभी में एक ही बार् है। वह सब कहरे् हैं डक जो कुछ भी हमारे सामने है, सब असत्य है, केवल भगवान् ही सत्य हैं और यह सत्य हमें स्वयों ही डवचार करके समझना पड़ेगा। स्वामी जी, हम यह कैसे करें?

अध्ययन केिल कुछ सीमा तक ही सहायक होगा। अत्यविक अध्ययन से आप भ्रवमत हो जायेंगे। आपको एक वनवश्चत विचार पर एकावग्रत हो कर ध्यान करना चावहए। िह वनवश्चत र्विर् विचार आपके ज्ञान-चकुषु खोलने का कायव करेगा। केिल तर्ब ही आपमें िैराग्य-भाि आयेगा, आप िसुतु-पदाथों की असत्यता को तर्ब ही समझ सकेंगे। उदाहरण के वलए नेरुर के श्री स्वामी सदाविि ब्रहोन्द्र के र्जीन को लें। अपनी माँ को भोजन देने के वलए कहने पर, उनकी माँ के कहे गये केिल एक, 'प्रतीक्षा करो' िब्द ने उनके मन पर ऐसा प्रहार वकया वक िे तुरन्त 'सत्य' को समझ गये।

आप र्बौन्तद्धक स्तर पर भले ही यह जानते-समझते हैं वक जगत् वमर्थ्ा है, केिल परमाि ही िास्तविक हैं तथा समस्त विर्य-भोग केिल दुःख का ही कारण हैं, वकनुतु आपकी यह िारणा अभी सुदृढ़ नहीं ंहै। आप सोचेंगे, "मैं केिल पाँच वमनट के वलए इन्तन्द्रय-विर्यों ंका सुख ले लेता हूँ।" और इस प्रकार आप माया द्वारा छल वलये जायेंगे। सभी विर्य-भोग माया द्वारा वनवमवत चीनी में पगी गोवलयाँ हैं। आपको 'ये वह संस्पिवजा भोगा दुःखयोनय एि ते...' जैसे श्लोकों ंपर वचन्तन करना चावहए। उच्चतर परम आिा, जो अनन्तता, िाश्वतता, असीमता है, के साथ आपको तादात्म्य स्थावपत करना चावहए। सदैि विचार करें, "िुद्धोऽहम्, िान्तोऽहम्, सन्तच्चदानन्दोऽहम्।" आप उन्नत भाि को प्राप्त करेंगे। अभ्यास एिं िैराग्य आिश्यक हैं। त्याग और तपस्ा आपको अत्यविक िन्तक्तयाँ प्रदान करेंगे। संसार के क्षवणक सुखों, ं मोटरगाडी, िन-सम्पवत्त के छल में न फूँसें और अिांवछत आसन्तक्त द्वारा व्यथव वचन्तन्तत न रहे। अपने कतवव्य करते जायें और िेर् भगिान् पर छोड दें। िे आपकी रक्षा करेंगे।

१९५

क्ा आत्म-साक्षात्कार प्राप्त सन्त स्वार्ी नही ंहैं, क्ोडोंक उन्ोनें केवल अपने डलए ही मोक्ष की आकोंक्षा रर्ी ? और डफर यडद सभी सोंन्यासी हो जायेंगे र्ो उसका पररणाम क्ा होगा ?

यह प्रश् अनुवचत कल्पना पर आिाररत है। यवद सभी न्तियाँ बाँझ हो, यवद सभी वचवकत्सक बन जायेंगे, वकील या िाक बन जायेंगे तो संसार का क्ा होगा? केिल कवतपय वगने-चुने आध्यान्तिक सम्पदा से सम्पन्न व्यन्तक्त ही िैराग्य और त्याग प्राप्त का सकते हैं।

सन्त समस्त संसार को पवित्र कर देता है। िह स्वाथी नहीं ंहोता। िंकर, रामानुज तथा अन्यों ंने समस्त मानिता की सेिा की। यहाँ तक वक जो एकान्तिासी है अथिा जो अज्ञातिास में रहता हुआ जीिन व्यतीत करता है, िह भी अपनी विचार-संिेदनाओं ंको प्रिावहत करके संसार को प्रभावित करता है। एक नि-विर्ष् तक भी आध्यान्तिक पथ पर चलता हुआ अपने पवित्र विचारों ंद्वारा संसार का भला करता है। यह सब बातें, सन्तो एिं सन्त-सुलभ लोगों ंके ढंगों ंतथा उनके कायों को अिुद्ध मन बाला व्यन्तक्त समझ नहाँ सकता।

१९६

ब्रह्मचयत का पालन अर्तहीन ही प्रर्ीर् होगा, क्ोडोंक वैज्ञाडनको ंने प्रयोगशाला में परीक्षणो ंके द्वारा डसि कर डदया है डक वीयत को शरीर-प्रणाली में पुनसंयुि नही ंडकया जा सकर्ा और यह भी डक मस्तिष्क का वीयत के सार् कोई सम्बन्ध नही ंहै।

िीयि एक रहस्मय सत्ता है जो जीवित िरीर की रचना करने में सक्षम है। िीयव स्वयं में एक जीिन्त पदाथव है। यह स्वयं ही जीिन है। इसवलए जब यह मनुर्ष् में से वनकल जाता है तो यह उसके अपने जीिन का एक अंि ले जाता है। एक सजीि िसुतु को पहले वनजीि वकये बिना प्रयोगिाला के परीक्षणों ंमें नहीं ंडाला जा सकता। िैज्ञावनकों ंके पास इसका परीक्षण करने के वलए कोई उपकरण नहीं ंहै। भगिान् ने इसके मल्यिान् गुण को वसद्ध करने के वलए केिल एक ही परीक्षण की रचना की है, िह है गभाविय। िीयव जीिन की रचना कर सकता है, केिल एक यही तर्थ् वसद्ध करता है वक यह स्वयं ही जीिन है।

मेरे पास ऐसे सहस्ों ंनियुिकों ंके पत्र आये हुए हैं वजन्ोंनें इस बहुमल्य िव्य को व्यथव नष्ट वकया है और हि अब दु:खदायी न्तस्थवत में हैं। बहुत से युिकों ंकी तो दुदविा यहाँ तक पहुँच चुकी है वक िह आत्महत्या करने को तत्पर हो गये! िीयव को वनममवतापिवक नष्ट करके उन्ोंनें अपनी िारीररक, मानवसक और बौन्तद्धक क्षमताओं ंका विनाि कर वलया है। जो पररपणव ब्रह्मचारी हैं उनके नेत्र उज्ज्वल, देह-मन सुदृढ़ एिं स्वस्थ तथा रुबुन्तद्ध कुिाग्र होती है।

अपनी परीक्षण-नवलकाओं ंऔर तुलाओं ंके साथ िैज्ञावनक सक्ष्म िसुतुओं ंकी गहराई तक पहुँच नहीं ंसकते। िरीर की वकतनी भी चीर-फाड करने से, आिा कहाँ है यह बताया नहीं ंजा सकता, जीिन कहाँ है अथिा मन कहाँ है यह जाना नहीं ंजा सकता। योगाभ्यास के द्वारा, िीयवि-न्तक्त (यह स्थल भौवतक िीयव िव्य नहीं) ंऊर्ध्वगमन करके मन को सम्पन्न एिं सक्षम बना देती है। यह सन्तों ंकी उद्घोर्णा है। इसका अनुभि आपको स्वयं करना होगा।

१९७

डजस मनुष् को यह डवश्वास हो जाये डक उसके डलए जीवन अब अर्तहीन हो गया है, उसके डलए क्ा आत्महत्या का डनणतय कर लेना र्कतसोंगर् है ?

आिहत्या, अथवहीन जिीन का तकवसंगत वनणवय नहीं ंहै, अवपतु यह एक ऐसे विचारहीन एिं वििेक रवहत मन द्वारा वनवश्चत अतकवप णव वनणवय है जो जिीन में वनवहत अथव को देख सकने में असफल हो गया हो। आिहत्या कष्टों ंको दर एिं दोषों ंमें सुिार नहीं ंकरती, प्रत्युत् यह कालान्तर में उग्र प्रवतवक्रयाओं ंकी ओर अग्रसर करती है। और िह प्रवतवक्रयाएँ अर्ब के इस असन्तोर्जनक जिीन की ितवमान अिस्था से भी अविक कष्टदायी होंगी। आिहत्या पणवरूपेण पराजयिाद है।

१९८

यडद सोंसार से पलायन लक्ष्य हो र्ो समाज-सेवा के डलए प्रोत्साहन कहाुँ रहा?

संसार से पलायन लक्ष्य नहीं ंहै अवपतु सांसाररकता से मुक्त होना िांछनीय है। जिीन के एक स्तर तक समाज-सिेा का अपना मल्यिान् स्थान है, वकन्तु समय के साथ व्यन्तक्त को अपनी उच्चतर चेतना द्वारा इसका अवतक्रमण करके इससे अतीत चले जाना होता है। तथावप समाज-सिेा का म ल्य प णवतया व्यन्तक्तपरक है। ऐसा नहीं ंहै वक व्यन्तक्त महान् समाज-सुिारक अथिा मानिता का रक्षक अपने-आपको यों ंही र्बना लेता है, अवपतु ऐसा है वक िह अपने अहम् को विश्व-प्रेम की िेवदका पर र्बवलदान करता है और उससे मन की पवित्रता को प्राप्त करता है। यह पवित्रता ही समस्त आध्यान्तिक विकास का आिार है। वकन्तु साक्षात्कार प्राप्त महािा के हृदय में अपने साथी प्राणी मात्र के प्रवत दया की भािना से सिेा-भािना स्वयमेि ही उत्पन्न होती है।

१९९

जीवन की समि पररस्तरूडर्यो ोंमें अडवचल शास्तन्त एवों मन की स्तरूरर्ा को डवकडसर् करने के क्ा साधन हैं? क्ा पररपूणत प्रशान्तावस्र्ा को प्राप्त करना सम्भव है?

जी हाँ, वर्बलकुल सिंभ है। ऐसा समझें वक आप संसार के वलए मृत हैं अथिा संसार आपके वलए समाप्त हो चुका है। इस विचार िन्तक्त को विकवसत करें। मन, इन्तन्द्रयाँ, र्बुन्तद्ध अथिा मन की अन्य वकसी भी प्रकार की िृवत्त से अपना 'मैं-पन' न जोडें। सदैि अपने-आपको वदव्य विचारों ंमें संलग्न रखें। स्वयं अपने अथिा अपने आस-पास के संसार के सम्बन्ध में कुछ भी विचार मन में न आने दें। अपने चतुवदवक् के िातािरण के प्रवत, विवभन्न दैवनक घटनाओं ंके प्रवत, सांसाररक प्रवतघातों ंके प्रवत, और यहाँ तक की स्वयं अपने प्रवत भी पणवतया उदासीन रहें। आिज्ञान की एक र्बार अनुभवत हो जाने पर व्यन्तक्त समस्त मानवसक विघटनों ंएिं विकृवतयों ंसे मुक्त हो जाता है। जहाँ आध्यान्तिक वजज्ञासु के भीतर आिज्ञान सुदृढ़तापिवक न्तस्थर हो, जहाँ उसमें यह चेतना पणवतया जागरूक हो वक, "सर्ब-कुछ िस्तुतः ब्रह्म ही है, सिं खन्तिदं ब्रह्म," और वक िह परब्रह्म से वभन्न अन्य कुछ भी नहीं ं है, और जहाँ िह समझता हो वक समस्त घटनाएँ अच्छी, र्बुरी अथिा वमवश्रत - संसार के वचत्रपट पर पररिवतवत होने िाले दृश्य मात्र हैं, िहाँ कभी भी असन्तुवलत मानवसक जिीन हो ही नहीं ंसकता।

यह मन ही र्बन्धन अथिा मोक्ष का एकमात्र कारण है। सुख हो अथिा दु:ख, प्रसन्नता हो अथिा संकट, सफलता हो अथिा विफलता सर्बके पीछे आिार एकमात्र मन ही है। गुरु और उसकी विक्षाओं ंकी िरण में होते हुए द्वनद्वों ंसे ऊपर उठ कर उनसे अतीत चले जायें। उन सन्तों ंके जीिनचररतों ंका स्वाध्याय करें वजन्होंने विविि संघर्षों का सामना वकया तथा आिसाक्षात्कार प्राप्त महािाओं ंकी रचनाओं ंका अध्ययन करें। ऐसी सच्ची समपवण-भािना को विकवसत करें वजसमें आपको अपनी देह अथिा िारीररक आिश्यकताओं ंका, अथिा आिरक्षा का विचार ही उत्पन्न न हो, वजसमें आपके जीिन और मृतुयु का विचार ही विस्मृत हो जाये। प्रान्तता तो केिल मानवसक अिस्था है। अतुः आध्यान्तिक ज्ञान प्रान्तप्त के द्वारा ही मानवसक साम्यािस्था को विकवसत करें।

२००

गोंगा के पानी को इर्ना पडवत्र क्ो ोंमाना जार्ा है? इसे सदा के डलए डकसी भी प्रकार के प्रदूिण से मुि समझने के धाडमतक अर्वा वैज्ञाडनक क्ा कारण हैं?

क्ा यह सत्य है डक गोंगा में एक गोर्ा लगाने से समि पाप धुल जार्े हैं?

अनन्त काल से माँ गंगा का सम्बन्ध उन सन्त-महािाओं ंसे जुडा हुआ है जो इसके जल में स्नान करके अथिा इसका पान करके अत्यविक लाभान्तित हुए हैं।

अवग्न अन्य समस्त िस्तुु-पदाथों को जला सकती है, वकनुतु स्वयं अपने को नहीं।ं वहमालय के उच्च विखरों ंसे प्रिावहत होने िाली गंगा माँ के जल में वहम-विखरों ंपर होने िाली िह असंख्य अद्‌भुत जडी-र्ब वटयाँ वमली होती हैं वजनमें उच्चतम स्तर के संक्रमणहारी िन्तक्तयों ंसे सम्पन्न रसायन अपनी िुद्धतम अिस्था में वनवहत रहते हैं। इसके कारण उसमें वगराये गये अन्य प्रदर्क पदाथव अपना प्रभाि नहीं ंडाल सकते। हमारे समस्त िावमवक विश्वास सित्त िैज्ञावनक वसद्धान्तों ंपर आिाररत हैं।

और हाँ, यवद आप मन में इस सच्ची भािना के साथ गंगा माँ में गोता लगाते हैं वक आप अपने अनुवचत कमों के वलए प्रायवश्चत्त करने के साथ-साथ पुनुः न करने का वनश्चय कर रहे हैं तो अिश्य ही समस्त पाप िुल जाते हैं।

२०१

क्ा आप भी मेरे इस डवचार से सहमर् हैं डक समाज में खुले आम घूमने वाले नागा साधु हमारी सोंस्कृडर् के डलए सोंकटकारी हैं? क्ा वे उस िर र्क उन्नर् हो चुके हैं डक डनर्ा में कुछ भी असभ्यर्ा अर्वा अनौडचत्य न मानें? क्ा शरीर को पूरी र्रह से नि रर्ने का कोई आध्यास्तत्मक महि डिव में है? कृपया प्रकाश डालें।

हमारी प्राचीन संस्कृवत वनवश्चत रूप से प्रत्येक दृवष्ट से आध्यान्तिक है। केिल जर्ब उसके अन्तवनवहत भाि को विस्मृत कर वदया जाता है तर्ब ही िालीनता और अश्लीलता जैसी द्वनद्वािकताएँ उत्पन्न होती हैं। यह सभी द्वनद्व पणव विचारों ंका केिल सांसाररक मनुर्ष्य के वलए अन्तस्तत्व है, उसके वलए नहीं ंजो उनसे अतीत जाने और स्वयं को उस अद्वैत, भेदभािहीन अिस्था में न्तस्थत होने के वलए प्रयत्निील है। आध्यान्तिक दृवष्टकोण से वफर आप द्वैत भाि को खोजने और उससे प्रभावित होने के वनम्न स्तर तक कैसे उतर सकते हैं?

नग्न रहने का आध्यान्तिक महत्त्व देहिा-र्बोि अथिा िरीर-अवभमान से ऊपर उठने में सहायक तत्व होने में वनवहत है। वजस व्यन्तक्त का मन सांसाररक विचारों ंसे दवर्त है और जो द्वैत भिाना से पणव है, िह स्वयं को जन्मकालीन पिोाक में जनता के सामने प्रस्तुत करने में लज्जा अनुभि करेगा। वजसने अपने मन और इन्तन्द्रयों ंको जीत वलया है, केिल िही जनसािारण के मध्य वनभीक हो कर और वकंवित् भी प्रभावित हुए वर्बना नग्नािस्था में विचरण कर सकता है।

कुछ लोग देहावभमान से ऊपर उठने के वलए अपनी सािना के एक अंग के रूप में इसे अपना लेते हैं और ऐसे सािक प्रायुः लोगों ंके मध्य आने से द र रहते हैं। वनुःसन्देह, ऐसे लोग भी हैं जो साक्षात्कार प्राप्त सन्त होने का स्वाँग करते हैं और भोलेभाले लोगों ंको छलने के उद्देश्य से जनसािारण के मध्य घमते हैं। वकन्तु ऐसे नकली सन्तों ंको, उनकी प्रवतवक्रयाओं ंको देखने से ही लोग अत्यन्त सरलता से पहचान सकते हैं और उनसे दर रह सकते हैं।

२०२

आप डकस आधार पर मांोसाहार का डवरोध करर्े हैं?

वचवकत्सीय, मानवसक, नैवतक और आध्यान्तिक आिार पर। हमारा मन हमारे द्वारा खाये जाने िाले आहार से र्बना है। तामवसक भोजन के पररणामस्वरूप मन तामवसक होता जाता है। मांसाहार तामवसक है, अतुः इससे दर रहना चावहए।

जर्ब पिु की हत्या की जाती है तो उसकी स्नायु प्रणाली में मृत्युभय के कारण संकुचन होता है (आपने भी भय की पररन्तस्थवत में अपने आमािय में उत्पन्न होने िाली एक प्रकार की विवचत्र असुवििा को अनुभि वकया होगा)। इस भय के कारण उस पिु के यकृत इत्यावद भीतरी अंगों ंसे कुछेक विर्ैले िोंों ंका स्राि होता है। इन विर्ैले िोंों ंका प्रभाि उसके मांस में वमल जाता है और िह पकाये जाने पर भी नष्ट नहीं ंहोता। अतुः आवमर्-आहार कालान्तर में खाने िाले व्यन्तक्त के ऊपर विर्ैला और भयंकर प्रभाि डालता है।

यवद समस्त िरीरों ंके भीतर वनिास करने िाली आिा की दृवष्ट से देखें तो आपमें और पिुओं ंमें कोई भी अन्तर नहीं ंहै। वजस स्रोत से आिार और अविकार पा कर आप अपने इस िरीर में रहते और सुख भोगते हैं, उसी स्रोत से उन सर्ब पिुओं ंकी आिाओं ंको भी जीिन का सुख भोगने का आपके समान ही अविकार वमला है। अतुः आपक वकसी भी जीि की हत्या करने का नैवतक अविकार नहीं ंहै, भले ही िह वकतना भी छोटा प्राणी क्ों ंन हो।

अन्तन्तम वकन्तु अत्यन्त महत्त्वपणव यह तर्थ् है वक केिल एकमात्र िह परमचैतन ही है वजसने विवभन्न जड और चेतन सभी रूपों ंमें स्वयं को प्रकट वकया है। इस दृवष्ट आपका समस्त सृवष्ट के साथ एकत्व का सम्बन्ध है। जर्ब आप यह जान जाते हैं, तर्ब क् आप वकसी भी प्राणी को जानर्ब झ कर कष्ट या चोट पहुँचा सकते हैं? क्ा आप स्वेच्छा से और प्रसन्नता से स्वयं अपनी उँगवलयों ंको काट और पका कर खा सकते हैं? समस्त सृवष्ट के साथ ऐक् होने के इस र्बोि को प्राप्त करना ही, आपका इस लौवकक जगत् में र्बार-र्बार जन्म ले कर आने का कारण है। आप जर्ब दसरों ंको घायल करना, चोट या कष्ट पहुँचाना र्बन्द कर देते हैं और सर्बको अपने-आपके समान प्रेम करना प्रारि कर देते हैं, केिल तभी इस एकत्व को समझ और अनुभि कर सकते हैं। िास्ति में तो यह सभी पिु-पक्षी आपके अपने आिस्वरूप ही हैं। केिल आप ही इन सर्ब प्रावणयों ंमें जीिाा के रूप में वनिास कर रहे हैं और आप ही इन आिाओं ंके वनिास हेतु देह-रूप में प्रकट हुए हैं। अतुः जागें, मांस-भक्षण और पिु-हत्या करना र्बन्द कर दें। इनके प्रवत स्नेह और परस्पर एकता की भािना को विकवसत करें।

२०३

कुछ लोगो ोंने मुझे चेर्ावनी देर्े हए बर्ाया है डक प्राणायाम और शिीतसन करना जोस्तर्म का कायत है और इन्ें करने से व्यस्ति पागल र्क हो। सकर्ा है। यद्यडप मुझे ऐसी बार्ो ोंपर डवश्वास र्ो नही ोंहै, र्ीडप मेरी इनके प्रडर् मान्यर्ा दृढ भी नही ोंहै। कृपया मुझे बर्ायें डक क्ा प्राणायाम और शिीतसन के अभ्यास करने से कोई हाडन होने की सम्भावना है?

आसन-प्राणायाम करते समय अपनी सीमा का अवतक्रमण न करें। अत्यविक थक जाने तक न करते रहें। िीर्ावसन और प्राणायाम करने से कोई विवक्षप्त नहीं ंहोता। प्रत्येक कायव करने का वनयम होता है। प्रारन्तिक स्तर से आरि करें और जैसे-जैसे आप अपनी उन्नवत से सनुतुष्ट होते जायें, िीरे-िीरे समय की अिवि में िृन्तद्ध करें।

२०४

एक डववाडहर् एवों सन्तान की मार्ा मडहला ऐसे कौन से आसन कर सकर्ी है जो उसके डलए लाभदायक हो ोंऔर डजनसे उसे कोई हाडन भी न हो ?

र्बच्चों ंकी माता एिं गृहणी सभी आसन कर सकती है, किंल पुरुर्ों ंकी अपेक्षा उसे कुछ पररन्तस्थवतयों ंमें कवतपय वनयमों ंका ध्यान रखना होता है। जैसे, उसे मावसकिमव के वदनों ंमें तथा उसके तीन या चार वदन र्बाद तक आसन नहीं ंकरने चावहए, वकसी भी रोग से और विवेर् रूप से यौन सम्बन्धी वकसी भी प्रकार के रोग से ग्रस्त होने के समय तथा गभाविस्था में भी आसन नहीं ं करने चावहए। िी र्ावसन, सिांगासन, मत्स्यासन, हलासन, पादहस्तासन, भुजंगासन, िलभासन और पवश्चमोत्तानासन ऐसे महत्त्वप णव आसन हैं जो िह कर सकती है। इनके साथ-साथ योग मुिा और विपरीतकरणी मुिा को भी जोडा का सकता है। वक्रया और र्बन्ध तथा स यवनमस्कार भी वकया जा सकता है। उत्तम ढंग से आसन वकये जाने के वलए किंल िरीर का भारी न होना तथा िरीर में सनुतुलन होना अच्छा है, यद्यवप यह अवनिायव ितव नहीं ंहै। गृहणी के वलए आसन करने में वकवित् भी कोई प्रवतर्बन्ध नहीं ंहै,
वकनुतु उसे ऊपर र्बताये गये वनयमों ंका ध्यान रखना चावहए।

२०५

'अन्तरात्मा की हत्या' का क्ा अर्त है ?

जो व्यन्तक्त काया, िाचा, मनसा पवित्र है, जो पाप और अिमव करने से भयभीत होता है, वजसे भगिान् का भय है और जो पवित्र जीिन जीता है, जो समवचत्त, सनुतुवलत और सुन्तस्थरता र्बनाये रखने में सक्षम है, उसकी अन्तरािा सदैि वनष्कलंवकत होगी। जो व्यन्तक्त भरपर सत्त्व में न्तस्थत है, उसकी अन्तरािा सदैि अदवर्त एिं अदग्ध होगी। हृदय की विवालता से अन्तरािा की आिा सुनने की क्षमता में विकास होता है। उस व्यन्तक्त को सदैि उसकी आिा से वनदेि प्राप्त होते हैं वजसने जप, स्वाध्याय, प्राणायाम, वनस्स्वाथव सेिा तथा यज्ञावद जैसे उन्नत कायों द्वारा पयावप्त सत्त्व अवजवत कर वलया हो।

'अन्तरािा की हत्या' का अथव है-मनुर्ष् के भीतर जो कुछ भी वदव्य है, उसकी हत्या कर देना, सत्त्व के िछिनीय गुण की हत्या, िमव के सराहनीय िन की अथिा आध्यान्तिक विकास की प्रिंसनीय सम्पवत्त की हत्या कर देना। वजस मनुर्ष् के हृदय में भगिान् का भय है, िह कभी कुछ भी ऐसा कायव नहीं ंकरेगा जो उसको नैवतक विकास में अिोगवत की ओर ले जाने िाला अथिा उसके नैवतक आिार को नष्ट करने िाला हो। अन्तरािा की

हत्या करने का अथव मनुर्ष् में विद्यमान भगिान् की हत्या कर देना, समस्त दैिी सम्पत् को समाप्त कर देना और एक नृिंस एिं नरभक्षी मानि में पररिवतवत हो जाना है। अन्तरिाा का दसरा नाम सच्ची अथिा िास्तविक आिा है। इस सम्बन्ध में मेरी पुस्तक 'एवथकल टीवचंग्स' (नैवतक विक्षाएँ) पढ़ें।

२०६

क्ा सन्तान उत्पन्न करना पाप है?

न तो पुरुर्त्व, न िीत्व और न ही सन्तानोत्पवत्त पाप है। सत्य अथिा परमिा-प्रान्तप्त का वजज्ञासु सािक सन्तान उत्पन्न कर सकता है और बाद में संसार में रहते हुए अथिा संसार को पणवतया त्याग कर इस पथ पर अग्रसर हो सकता है। िंिृन्तद्ध हेतु जैसे ही पुत्र की प्रान्तप्त हो जाये, व्यन्तक्त यवद चाहे तो उसी समय सबि-कुछ त्याग कर संन्यास िारण कर सकता है, यद्यवप संन्यास से प िव पुत्र प्राप्त होने का वनयम अवनिायव नहीं ंहै। पुत्र की आिश्यकता, यद्यवप अत्यािश्यक नहीं ंतथावप यह शुरुवतयों ंके अनुसार कहा गया है।

२०७

डववाडहर् पुरुि और वह भी यडद युवा हो र्ो ब्रह्मचयत का पालन कैसे कर सकर्ा है ?

िाि-विनािवररत वनयमों ंका पालन करते हुए अपनी पत्नी के साथ ऋतुकाल में सुख भोगना अपने-आपमें ब्रह्मचयव का पालन है। िािों ंका कथन है वक िाविवहत पुरुर् को इन्तन्द्रय-सनुतुवष्ट हेतु जब चाहे सािोग में वलप्त नहीं ंहो जाना चावहए। उसे इन्तन्द्रय-सुख-भोगों ंतक के वलए भी वनिावररत वकये गये विवभन्न वनयमों ंका पालन करना चावहए। इस विर्य में विस्तृत जानकारी हेतु मेरी पुस्तक 'िाइि ट िुमैन' (मवहलाओं ंको विक्षा) को पढ़ें। जो व्यन्तक्त िािीक्त वनयमों ंका पालन करते हुए सुखी एिं संयवमत जीिन जीता है, िह गृहस्थ होते हुए भी ब्रह्मचारी ही है। िाविवहत दम्पवत स्वािीभिा वकतने भी जीिले क्ों ंन हों ंऔर वकतने भी युिा क्ों ंन हों,ं उपयुवक्त ढंग से िे ब्रह्मचयव व्रत का पालन कर सकते हैं। गृहस्थ के वलए, ब्रह्मचयव का अथव दाम्पत्य-सम्बन्धों ंका प णव वनर्ेि नहीं ंहै, अवपतु इसका अथव भली-भाँवत अनुिावसत, आि-संयवमत, िावमवक जीिन से है।

२०८

क्ा अन्तरात्मा की आवाज़ सुनने का साधन हमारी चेर्ना-शस्ति नही ोंहै?

ुद्धि चेतना ही हमारी 'आन्तररक आिा ' है। वकन्तु सामान्य व्यन्तक्त की समस्ा यह है वक िह अपने वनम्न मन की आिा को, पाििक प्रिृवत्तयों ंकी आिा को चेतना की आिा समझने की भल करता है। और ऐसी गलती के पररणाम स्वरूप पाििक प्रिृवत्तयों ंसे प्रेररत हो कर िह ऐसी भयंकर भलें कर बैठता है जो दसरों ंको भी जोन्तखम में िाल देती हैं। िास्तविक अन्तरमन की आिा सुनने के वलए मन की अत्यन्त उच्च स्तर की िुद्धता और प्रिान्तता की आिश्यकता होती है।

२०९

क्ा मैं ये समझें डक 'शास्त्रो'ों से आपका आशय, शर्ास्तब्यो ोंपूवत डलस्तर्र् अर्वा अडलस्तर्र् रप में उपलब्ध प्राचीन डहन्दू धमत द्वारा डनधातररर् कठोर डनयमो ोंके ग्रन्ो ोंसे है? क्ा अडर् शीघ्र पररवडर्तर् होर्ी पररस्तस्र्डर्यो ोंके कारण ये डनयम एवों डसिान्त अब डपछड़े हए नही ोंहो गये हैं? मेरे डवचार में र्ो कोई भी कड़ा डनयम समय की परीक्षा में सफल नही ोंहो सकर्ा।

ह्ाँ, अवत प्राचीन वलन्तखत एिं अवलन्तखत वहनद िमव के वनिावररत वसद्धान्तों ंके ग्रन्थों ंको ही िािों ंका नाम वदया गया है। वकनुतु केिल इस कारण से इन्ें वपछडे हुए नहीं ंमान लेना चावहए। उवचत जीिन जीने के मल वसद्धान्त अपररितवनील हैं। म ल वसद्धान्तों ंमें कोई पररितवन नहीं ंहोता। मल वसद्धान्तों ंमें वकसी प्रकार का कोई
परिितवन हो भी नही सकता।
सुिार, आंविक र्बदलाि और अनुक लन आिश्यक हैं, वकनुतु र्बदलते हुए समय और नये िातािरण एिं नयी पीढ़ी के अनुक ल र्बनाने के वलए, केिल िणवन करने की र्बाहा रूपरेखा और अवभव्यन्तक्त के ढंग में र्बदलाि होना चावहए।

र्बाह्य पररितवन करने में तर्ब तक कोई हावन नहीं ंहै जर्ब तक इससे मल वसद्धान्त प्रभावित नहीं ंहोते। म लभ त सद्‌गुण यथा-सत्य, सहभािगता, अवहंसा, पवित्रता, न्याय, एकता इत्यावद मानि-जीिन पर सदैि लाग होंगें। इनका उल्लंघन सदैि भिी घोर विपवि का संकेत है।

२१०

क्ा श्रेष्ठ लक्ष्य को प्राप्त करने के साधन भी सदैव श्रेष्ठ ही होने चाडहए? औिडध कड़वी होर्ी है, डकनुतु रोग का डनवारण कर देर्ी है। अजुतन ने उत्तम लक्ष्य को प्राप्त करने के डलए कौरवो ों से युि डकया र्ा।

भारतीय विचाररारा वनुःसंकोच इस प्रश् का उत्तर 'ह्ाँ' में देती है। चािावक जैसे भौवतकिावदयों ंके सम ह को छोड कर िेर् सभी भारतीय विचारक वनभीक उद्‌घोर्णा करते हैं वक, 'व्यन्तक्त को इन्तच्छत उद्‌देश्य की प्रान्तप्त हेतु कभी भी अनुवचत सािन नहीं ंअपनाने चावहए, भले ही िह लक्ष्य वकतना भी लुभािना क्ों ंन हो।' इस विर्य में कोई संिय नहीं ंहोना चावहए।

मेरे विचारानुसार आपके दोनों ंउदाहरणों ंमें, आपके इस कथन की पुवष्ट के वलए पयावप्त सुदृढ़ता नहीं ंहै जो उद्‌देश्य की श्रेष्ठता में सािन के अनौवचत्य को सही वसद्ध कर सके। और्वि मिुर हो अथिा कटु, यवद िह वचवकत्सा के अवतररक्त रोगी को अथिा अन्य वकसी को भी कोई हावन नहीं ंपहुँचाती, तो िह सािन के रूप में दोर् रवहत है। यह उद्‌देश्य-प्रान्तप्त अथावत् रोग-वनिारण के वलए अपनाया गया उवचत सािन है।

दसरे उदाहरण में, वनुःसन्देह अजुवन ने कौरिों ंके साथ युद्ध वकया था, और उन सर्बका िि भी वकया था; वकनुतु अजुवन द्वारा वकया गया युद्ध उसकी क्ररता को प्रदविवत नहीं ंकरता, अवपतु उसके कतवव्य-पालन को दिावता है। युद्ध तो उसके भाग्य पर थोप वदया गया था वजसे करना अर्ब उसका कतवव्य अथिा उसका स्विमव हो गया था, अजुवन ने स्वयं युद्ध की कामना नहीं ंकी थी। उसने कौरिों ंको युद्ध करने के वलए र्बाध्य नहीं ंवकया था, अवपतु उन्ोंनें इसे चुनौती दी थी। उसने अपनी और अपने पररजनों ंकी रक्षा तो करनी ही थी। अपने अविकारों ंकी रक्षा हेतु युद्ध करना उसका प्रिान कतवव्य एिं नैवतक दावयत्व था। अतुः अजुवन का युद्ध करना, उसकी कतवव्य-र्बद्धता के कारण पणवतया न्यायसंगत है।

भगिान् श्री कृष्ण ने भगिद्गीता में अनेक स्थानों ंपर र्बारम्बार इस र्बात को दोहराया है। इसके विपरीत यवद अजुवन युद्ध करने के अपने कतवव्य से पलायन कर जाता तो िह अपने िमव का वनिावह करने से चक जाता।
अतुः भगिान् पुनपुनुः उसे वनदेि देते हैं, 'स्विमवमवप चिोक्ष्य न विकन्तम्पतुमहवस' (अपने समक्ष आये हुए इस िमव को देख कर इससे पीछे मत हटो), 'युद्धस्व विगतज्वर' (मन के संयि को त्याग कर युद्ध करो), इत्यावद।

२११

जब मृतुयु पूवत-डनडिर् है और वस्त्र पररवर्तन कर लेने के डलए एक डवराम-काल के अडर्ररर और कुछ नही ोंहै रो डफर आत्महत्या करना और डकसी कारण से अन्य प्राडणयो ोंकी हत्या करना भी पाप क्ो ोंहै ?

आिहत्या और दसरों ंकी हत्या करना-दोनों ंही पाप माने जाते हैं, क्ोंवंक िह जीि-विकास-क्रम को अिरुद्ध करते हैं। इससे भी र्बढ़ कर यह वक ितवमान देह को र्बलात् समाप्त कर देने से व्यन्तक्त के कष्टों ंकी समान्तप्त नहीं ंहो जाती। गत जन्मों ंमें वकये गये कमों के पररणामस्वरूप इस जन्म में वमलने िाले सुखों ंअथिा दुःखों ं को पणवतया भोग लेने से ही उन कमवफलों ंसे छुटकारा वमलता है।

इसके विपरीत, आिहत्या करने िाला व्यन्तक्त स्वयं अपने वलए और भी अविक कष्टों ंको आमन्तन्त्रत कर लेता है, क्ोंवंक िर् कमों का फल भोगने के वलए पुनुः नया िरीर वमलने में समय लगेगा और इस अन्तररम काल में उसको प्ेरेत हो कर रहना पड सकता है। और वनवश्चत रूप से यह कहने की तो आिश्यकता ही नहीं ंहै वक अन्य वकसी भी मनुर्ष् की हत्या करना तो न्यावयक दृवष्ट से अपरा है ही, आध्यान्तिक उन्नवत की दृवष्ट से भी अत्यन्त घृवणत पाप है। हाँ, युद्धभवम जैसी पररन्तस्थवत में ऐसा नहीं ंहै।

२१२

हमारे पूवतजो ोंकी अपेक्षा आधुडनक काल के मानव की आयु इर्नी अल्प क्ो ों है ?

हमारे पिवज एक वनयवमत एिं अनुिावसत जीिन जीते थे। आिुवनक मानि की भाँवत िे इन्तन्द्रयों ंके दास नहीं ंथे। िे जप, प्राणायाम, वत्रकाल-सन्ध्या-िन्दन तथा गीता, भागित और रामायण जैसे िावमवक ग्रन्थों ंका स्वाध्याय
वकया करते थे। िे दान, वनष्काम सेिा तथा श्री रामनिमी, श्री कृष्णजन्माष्टमी और दत्तात्ेरेय जयन्ती जैसे वदनों ंमें उपिास करते थे। िे आध्यान्तिक सिलनों ंका आयोजन करते थे तथा अपने वलए नहीं ंअवपतु विश्व-िान्तन्त के वलए प्राथवनाएँ वकया करते थे। िे प्रवतवदन एक-साथ १० से २० मील तक की सैर करने जैसा व्यायाम करते थे। यम और वनयमों ंका िे अत्यन्त कठोरता से पालन करते थे। िे भीड-भरे नगरों ंमें न रह कर गाँिों िमें रहते थे। िे छोटे-छोटे
कामों ंके वलए भी वकसी पर आवश्रत नहीं ंरहते थे और अपना प्रत्ेयेक कायव स्वयं करते थे। उन्ें काया-वसन्तद्ध और िाक्-वसन्तद्ध दोनों ंही प्राप्त थीं।ं जर्ब आिुवनक पीढ़ी के लोग प्राचीन जीिन-पद्धवत का मल्य समझेंगे, तर्ब वनवश्चत रूप से दिों ंकी प्रसन्नता प्रान्तप्त से समस्त इच्छाओं ंकी पवतव कर सकेगी।

२१३

आपके डवचारानुसार एक आध्यास्तत्मक रुडच-सम्पन्न गृहस्र् के डकर्नी सन्तान होनी चाडहए ?

प्रत्येक गृहस्थ, भले ही आध्यान्तिक विचारों ंका हो अथिा सांसाररक विचारों ंिाला हो, िंि को चलता रखने के वलए पुत्र की कामना रखता है और िह दिी माँ प्रकृवत, वजनसे समस्त संसार की उत्पवत्त होती है, दिी माँ प्रकृवत जो सृवष्ट की रचवयता एिं आिार हैं, उनके अकथनीय प्रकाि की अवभव्यन्तक्त हेतु िह एक पुत्री की कामना भी रखता है। कोई भी गृहस्थ किेल पुत्र अथिा किेल पुत्री ही होने से सन्तुष्ट नहीं ंहोता। पुरुर् और प्रकृवत के प्रवतवनवि िे दोनों ंही अपनी अपनी वनजी अवभव्यन्तक्त के रूप में दोनों ंसन्तानों ंकी इच्छा रखते हैं। पुत्र और पुत्री के अवतररक्त मृत्यु इत्यावद जैसी दुघवटनाओं ंकी सम्भािनाओं ंको देखते हुए एक सन्तान और की जा सकती है। आध्यान्तिक रुवच सम्पन्न गृहस्थ तीन सन्तानों ंके जन्म होने तक िैिावहक जीिन जी सकता है। इसके उपरान्त िीघ्र उन्नवत के वलए एिं साक्षात्कार प्रान्तप्त के वलए िह वनिृवत्त-मागव अपना सकता है। तुकाराम, रामतीथव और पोथना जैसे सन्तों ंके जीिन-चररत्र पढ़ें। तर्ब आपको 'संसार में रह कर और संसार के माध्यम से साक्षात्कार' कथन में वनवहत सत्य का र्बोि होगा। कामासन्तक्त के आविक्य के अथिा अवत सांसाररकताप णव जीिन की आध्यान्तिक क्षेत्र में पहुँच नहीं ंहो सकती। इस प्रसंग में यह स्मरण रखना भी आिश्यक है वक साक्षात्कार अथिा मोक्ष के वलए सन्तानोत्पवत्त अवनिायव नहीं ंहै वक वजनके सन्तान नहीं ंहै, िे मोक्ष के अविकारी नहीं ंहैं और साथ ही यह भी वक जो िंि-िृक्ष की िृन्तद्ध न करके संन्यास ग्रहण करेंगे, िह दिेताओं ंके प्रकोप से मुक्त रहेंगे।

२१४

स्वामी जी, आप अपने पैरो ंकी पूजा क्ो ंकरने देरे् हैं, क्ो ंडनयडमर् रप से उनकी पूजा करने की आज्ञा दे देरे् हैं?

आिुवनक भौवतकता से ग्रस्त मन के वलए इसे समझने से पहले भलीभाँवत िुन्तद्धकरण की आिश्यकता है। आध्यान्तिक सािक के वलए गुरु के पाँि किेल पाँि मात्र नहीं, ंअवपतु िे वदव्य कृपा के िाहक हैं। स्मरणातीत काल से ही भारतीय वजज्ञासु सािक यह जानता और मानता है वक उसका संग्राहक-केन्द्र (ररसीविंि सेंटर) अथावत् विर, उसके गुरु के प्रेरक-केन्द्र (टरांसवमवटंग सैंटर), उनके चरणों ंके सम्पकव में आना चावहए, वजससे वक उसमें आध्यान्तिक िन्तक्त, ज्ञान और प्रकाि अनुप्रावणत हो सके। विद्युत् के वसद्धान्तों ंमें से एक यह स्वतः वसद्ध तर्थ् है वक विद्युत् का एक पररपथ पणव करने के वलए ऋणािक (नैगेवटि) और िनािक (पौव वटि) वर्बन्दुओं ंका परस्पर सम्पकव होना अवनिायव है।

पादपजा करने से सािक के मन में आिसमपवण का भाि जागृत होता है। फल हृदय का प्रतीक हैं, फल कमवफलों ंका प्रतीक, वसक्के समस्त सम्पवत्त के और कपवर सािक की उस आिा का प्रवतवनवित्व करता है जो गुरु की प्ररुबुद्ध आिा में पणवतया लीन हो चुकी है। इन सभी प्रतीकािक पदाथों को सिवप्रथम पजा में समवपवत वकया जाता है। वफर अन्त में विर्ष् अपने गुरु के चरणों ंमें प्रणाम करता है, जो इस र्बात का प्रतीक है वक वकवित् भी िंका अथिा संकोच के वर्बना िह अपना सिवस्व सद्गुरु को समवपवत कर रहा है।

पादप जा सिाक विर्ष् में श्रद्धा और भन्तक्त की भिाना को सुदृढ़ करते हुए उसमें विनम्रता इत्यावद दिैी गुणों ंको विकवसत करती है।

भरत ने भगिान् श्रीराम के वदव्य चरणों ंकी प जा की थी और उन्ोंनें उनकी पादुकाओं ंको ले जा कर श्रीराम के प्रवतवनवि के रूप में वसंहासनारूढ़ वकया तथा स्व को पादुकाओं ंका संरक्षक मानते हुए राज्य की सेिा की। ऐसी विनम्रता, श्रद्धा आ विश्वास आपको भी वदव्य र्बना देंगे।

यहाँ मैं लोगों ंको आने और पादप जा करने के वलए र्प्रोत्साहित नहीं ंकरता हूँ, यवद िे ऐसा करते हैं तो अपनी इच्छा से करते हैं, और मेरे प्रवत अपनी गुरुभन्तक्त के कारण ऐसा करने का आग्रह करते हैं तो मैं अस्वीकार नहीं ं कर पाता। यवद मैं अस्वीकार कर द ूँ तो न केिल उन्ें वनरािा करूँगा जो मुझे सिानपिवक आत्मसमपवण करने को आतुर हैं, अवपतु स्वयं अपने कतवव्य से भी विमुख हो जाऊँगा। आप क्ा यह सोचते हैं वक मैं अपनी पादपजा करने से प्रसन्न और सिावनत होता हूँ? इस सारी प्रवक्रया में मुझे िैयव सवहत चुपचाप र्बैठे रहना पडता है और यह वनश्चय ही, अपनी प्रसन्नता के वलए िैयवप िवक र्बैठे रहने को नहीं ंमान जाता हूँ!!

२१५

एक डववेकशील व्यस्ति और मूर्त व्यस्ति में मूलर्: क्ा डचह्न दृडष्टगोचर होर्ा है ?

मखव मनुर्ष् प्रत्येक पररन्तस्थवत में भिानाओं ंके िि में हो कर र्बाह्य रूप से तत्काल प्रवतवक्रया कर देता है जर्ब वक सिु स्वभिा िाले व्यन्तक्त में कोई भी प्रवतवक्रया नहीं ंहोती। यवद िह कुछ करता भी है तो िह उसी समय वकये गये वकसी भी कायव अथिा व्यिहार की प्रवतवक्रयािि नहीं ंअवपतु उस सन्त के मानिता के प्रवत सिाभि से उत्पन्न सत्संकल्पि होता है। दसरा लक्षण यह है वक मखव मनुर्ष् पररन्तस्थवत में स्वयं को सर्बसे प्रथम स्थान देता है; वकन्तु अन्ततः अपने-आपको अन्तन्तम स्थान पर पाता है, जर्ब वक वििेकी व्यन्तक्त अपने-आपको सर्बसे पीछे रखते हुए भी सिवप्रथम स्थान पर पाता है। तीसरा र्बुन्तद्धमान् व्यन्तक्त कायव परा करने के उपरान्त चुपचाप पीछे हट जाता है, वकन्तु पिव अन्य लोगों ंसे, अपनी प्रिंसा सुनने के वलए िहीं ंर्बैठा रहता है और कोई-कोई तो यवद ऐसा कुछ नहीं ंहोता तो िह वनलवज्जता सवहत प्रिंसा करने के वलए कह तक देता है।

कृपया भगिद्गीता के वद्वतीय अध्याय को भी पढ़ें वजसमें आपको न्तस्थतप्रज्ञ का वििरण प्राप्त हो जायेगा।

२१६

मनुष् में अडधक प्रबल एवों शस्तिशाली क्ा है-कुषुधा अर्वा कामेच्छा ?

जीिमय इस जगत् में समस्त प्राणीिगव में तीन िसुतुएँ समान हैं-आहार, वनिा और मैथुन। मनुर्ष् में आहार की भवमका इतनी अविक महत्त्व नहीं ंरखती वजतनी कामेच्छा की। यह पुरुर्ों ंमें १६ िर्व की तथा न्तियों ंमें १४ िर्व की वकिोरािस्था में विकवसत हो जाती है। यह आयु सीमा न्यनतन मात्र है और ऋतुओं, ं िातािरण तथा व्यन्तक्तगत स्वभिा के अनुसार अविक या कम हो सकती है। िी अथिा पुरुर् ने भले ही अभी युिािस्था में परी तरह र्प्रिेि वकया भी न हो, उसमें कामेच्छा स्वाभाविक रूप में गतजन्मों ंके संस्कारों ंके प्रभिा से तथा र्बाह्य जगत् के सामान्य दृश्यों ंको देखने के कारण विद्यमान रहती है। वकसी व्यन्तक्त ने भले ही कई वदनों ंसे आहार ग्रहण न भी वकया हो यौनेच्छा अथिा कामेच्छा तो भी उसमें रहेगी ही। यहाँ तक वक जर्ब आयु-आविक् अथिा वकन्ीं ंअन्य कारणों ंसे कामेच्छा क्षीण पड जाती है या समाप्त भी हो जाती है तो भी उसकी िासना अथिा कामपवतव की

कल्पना, काम-सुख-भोग के स्वप् लेने की चाह नहीं ंवमटती, अवपतु मन के वकसी अज्ञात कोनों ंमें दर्बी रहती है जो वकसी भी सुन्दर एिं सुखद घटना या दृश्य को देखने या पढ़ने से मनुर्ष् पर हािी हो जाती है और उसके मन को अतीत के वकसी भी अनुभि की सूमृवतयों ंमें पहुँचा देती है। यह सर्ब स्पष्टतया वसद्ध करता है वक कामावग्न, कुषुिावग्न से अविक प्रर्बल या िन्तक्तिाली है। वजस प्रकार अवग्न में घृत िालने से अवग्न और अविक प्रचण्ड हो जाती है, उसी प्रकार कामेच्छा की िारीररक पवतव से िह और भी अविक प्रर्बल होती है। कुषुिापवतव कर लेने से िह िान्त हो जाती
है, वकनुतु कामेच्छा की भ वमका मनुर्ष् के जीिन में मुख्य स्थान पर रहती है।

२१७

यडद डकसी व्यस्ति का बलपूवतक ऐसी लड़की से डववाह कर डदया गया हो जो सुन्दर र्ो डबलकुल भी न हो डकनुतु उसमें सद्गुण डशर से पाँवो ोंर्क भरपूर हो,ों र्ब उस पुरुि को अपनी पत्नी के सार् कैसा व्यवहार रर्ना चाडहए जब डक अपनी पत्नी की कुरपर्ा की डचन्ता उसके मन को डनरन्तर कचोटर्ी रहर्ी हो ? पत्नी में सुन्दरर्ा के अभाव से उत्पन्न भीर्र इकट्ठी हई कुण्ठा की भावनाओ ोंको वह कैसे डनयस्तिर् करे, कैसे उनें् अच्छी र्रह से छुपाये और डफर स्वस्र्, सुर्द एवों सामोंजस्यपूणत जीवन व्यर्ीर् करे ?

यह पुरुर् के हाथ में नहीं ंहै वक िह इस या उस सुन्दर लडकी को अपने साथ वििाह के वलए चयन करे, न ही वकसी लडकी के िि में है वक िह अमुक सौन्दयविान् अथिा िनाढ्य पुरुर् का अपने वलये चयन करे। सर्ब- कुछ पिव-वनिावररत है। मनुर्ष् इस स्पष्ट वदखायी देने िाले तर्थ् को भुला देता है, इस महत्त्वप णव सत्य की उपेक्षा कर देता है तथा यह सोचता और समझता है वक िही िास्ति में कताव एिं भोक्ता है। स्वयं से यह कहें और अपने-आपको सानत्वना दें, 'िदैिीन, िदैिीन। भगिान् की इच्छा, परमािा की इच्छा।' मन में ऐसा विचार करें और यह मान कर चलें वक आपके जीिन में आपके साथ हर क्षण जो कुछ भी हो रहा है, उसमें ही आपका सिोत्तम भला है। इस महान् सत्य में दृढ़ विश्वास रखें और दिवनक उदासीनता एिं िैराग्यप णव उदासीनता में आनन्तन्दत रहें। िारीररक सौन्दयव वकवश्चत् भी िास्तविक सौन्दयव नहीं।ं यह तो केिल ऊपरी त्वचा में ही रह जाता है। वजस नारी के पास पवित्रता के सद्गुणों ंका सौन्दयव है, िही िसुतुतः विश्व में सिाविक सुन्दर नारी है। यह हमारे महान् नीवतदाता मनु महाराज की उद्घोर्णा के अनुरूप है। मनु के नीवतििा, मनुसूमृवत का अध्ययन करें। मनु के इस कथन को मन में र्बार-र्बार दोहरायें, 'पवित्रता सौन्दयवहीन नारी का सौन्दयव है।'

सुन्दरता और कुरूपता केिल मन की कल्पनाएँ हैं, जैसे वमठास और कडिाहट मन में और केिल मन में ही वनवहत हैं। इस मन के िमव ही ऐसे हैं। मन से ऊपर उठें। तर्ब आप कुरूपता में सौन्दयव, कडिे में वमठास और र्बुराई में भलाई को देख सकेंगे। विकास की उच्चािस्था पर पहुँच जाने पर भलाई, वमठास और सुन्दरता के विचार तक ही समाप्त हो जाते हैं।

हाथ सेिा के वलए हैं, हृदय प्ेरेम एिं भन्तक्त के वलए और विर र्बुन्तद्ध एिं ज्ञान के वलए है। यह अत्यन्त विलक्षण सन्तिश्रण है, जो र्बहुत ही कम लोगों ंमें देखने को वमलता है। नारी की िास्तविक सुन्दरता उसके मन के भीतर की िह पवित्रता है, जो प्रथम दृवष्ट में ही मनुर्ष् को परम सुख से रोमावित कर देती है और उसे परम आनन्द की ऊँचाइयों ंतक पहुँचा देती है। इसे ही िास्तविक सौन्दयव कहा जाता है।

कोई भी िसुतु अपने नकारािक गुणों ंके कारण भले ही वकतनी भी वनन्दनीय क्ों ंन हो, सदैि उसमें भला, सुन्दर, िुभ और सुखद देखने का प्रयत्न करें। तर्ब और केिल तर्ब ही आप परमािा तक की असीम ऊँचाइयों ंतक उन्नत तथा प्रचुर मात्रा में विकवसत हो सकेंगे। जर्ब तक व्यन्तक्त स्वयं को सीवमत िारणाओं ंमें र्बद्ध

रखता है और मन में संयिपणव, नकारिाक एिं द्वैत की भिानाओं ंको पालता रहता है तर्ब तक उसे विकवसत जीिि नहीं ंमाना जा सकता। भारतिर्व के सग्रन्थों ंकी साकार प्रवतमा जैसी जो आदिव पवतव्रता के सद्गुणों ंसे सम्पन्न मवहला है, उसके सिुख मानवसक प्रवणपात करें। स्वयं को सिुारें। इस र्बात को अनुभि करें वक आपका पद, आपकी उपावि, आपकी वित्तीय सामर्थ्य और आपका व्यन्तक्तत्व, इन सर्बकी यवद आपकी पत्नी के सद्गुणों ंकी सम्पदा से तुलना की जाये तो िह सर्ब केिल तुच्छ कचरे के समान है। जीिन का अहंकारपणव अनुमान करने की भिाना का पररत्याग कर दें।

२१८

क्या डसनेमा देर्ना हाडनकारक है? क्या इससे लोगो ोंका चररत्र दूडिर् हो जार्ा है? कृपया यह बर्ाने का अनुग्रह करें ।

वसनेमा अपने-आपमें हावनकारक नहीं ंहै, वकन्तु वर्बना सोचे-समझे अत्यविक वसनेमा देखने से सामान्यतया लोगों ंका स्वास्थ्य वर्बगड जाता है और दृवष्ट मन्द हो जाती है। साथ ही इससे र्बहुत सी कुसंगवत वमलने की भी सम्भािना र्बनी रहती है। यह सर्बसे अविक दोर्प णव तर्ब हो जाता है, जर्ब यह ऐसे कामुक दृश्यों ंसे भरा होता है जो काम–िासनाओं ंकी िृन्तद्ध करने िाले, इन्तन्द्रयों ंको उत्तेवजत करने िाले और िासनाओं,ं घृणा, झठे अवभमान, उद्वेग अथिा वकसी भी प्रकार की विर्यासन्तक्त या अहंकार को उत्पन्न करने का कारण हों।ं हाँ, वनस्सन्देह विक्षाप्रद, िावमवक और आध्यान्तिक चलवचत्र देखने में कोई हावन नहीं ंहै, यद्यवप मनुष्य में सदा ही नैवतक वनयमों ंऔर सुसंस्कृत स्वभािानुक ल वनिावररत की गयी सीमाओं ंका अवतक्रमण करने की प्रिृवत्त पायी जाती है।

२१९

समि सोंशयो ोंऔर प्रश्नो ोंका स्थायी अन्त कैसे डकया जा सकर्ा है?

समग्र योग के वनयवमत एिं सतत अभ्यास के द्वारा व्यन्तक्त जैसे-जैसे आध्यान्तिक सािना में उन्नत होता हुआ वदन-प्रवत-वदन विकास के उच्च से उच्चतर आयाम को प्राप्त करता जाता है, िैसे–िैसे ही उसके संियों,ं भ्रान्तन्तयों ंऔर प्रश्नों ंके र्बादल स्वयं ही छूँटने लगते हैं। जैसे सयव के उवदत होते ही कोहरा छूँट जाता है, उसी प्रकार जैसे-जैसे आप आध्यान्तिक पथ पर उन्नवत करते हैं, गुरु एिं भगिान् की कृपा से जीिन-मरण की सभी गहन समस्याएँ सन्तच्चदानन्द भगिान् में स्वयं ही लीन हो जाती हैं। मनुष्य का एकमात्र कतवव्य विकवसत समग्र सािना द्वारा आन्तररक पवित्रता को र्बढ़ाते जाना है। जर्ब भी कोई संिय, समस्या या कवठनाई उत्पन्न हो, तो नीचे वलखे मन्त्रों ंमें से वकसी एक मन्त्र का जप करें: 'ॐ श्री राम िरणं मम', 'ॐ श्री कृष्ण िरणं प्रपद्ये' अथिा अपना गुरु-मन्त्र। ईश्वर-साक्षात्कार के उपरान्त संिय उत्पन्न होने का प्रश्न ही नहीं ंरहता, क्ोंवक तर्ब सािक एक सािक न रह कर स्वयं परमािा हो जाता है।

२२०

मैं कभी-कभी भगवान् की मडहमा औरउनकी सवतव्यापकर्ा पर ध्यान डकया करर्ा हूँ, डकनु्तु उससे मुझे कुछ अडधक लाभ डमलर्ा प्रर्ीर् नही ोंहोर्ा। इसका क्या कारण है, क्या आप बर्ाने की कृपा करेंगे?

भगिान् का ध्यान कभी-कभार करने का कोई लाभ नहीं ंहै। जप और ध्यान प्रवत वदन, वर्बना एक भी वदन छोडे, वनर्बाविि करें। जैसे आप चाय और भोजन प्रवतवदन करते हैं और जैसे आप उन्हें करना भलते भी नहीं,ं ठीक

उसी प्रकार से वकसी भी पररन्तस्थवत में सािना करना न छोडें, भल से भी नहीं। सिवप्रथम अपनी सािना करें। थोडी-र्बहुत, वजतनी भी आप कर सकते हैं, उतनी करें- किल तभी अपना भोजन ग्रहण करें। मन को वनर्बावि और गीरता सवहत सािना में प्रिृत्त करने का यह सुवनवश्चत, सित्तक और सफल ढंग है। यह पद्धवत अपनाने से आपका वनयवमत रूप से सािना करने का स्वभाि र्बन जायेगा, भले ही सािना करने को मन न भी चाह रहा हो कम-से-कम उसके उपरान्त वमलने िाले भोजन के वलए ही सही।

जर्ब मन को र्बीच-र्बीच में सांसाररक सुख लेने का समय वमलता रहता है, तो यह स्वयं पर केन्तन्द्रत होने और अपने भीतर उतरने में सक्षम नहीं हो पाता। जर्ब मन इिर-उिर भागता है तो इसकी लगाम को अपने भीतर की ओर खीचें। यह प्रवक्रया वदन में र्बार-र्बार दोहरायें। जर्ब कठोर अभ्यास के माध्यम से भगिान् का अपने भीतर साक्षात्कार करने की िन्तक्त विकवसत कर लेते हैं, तो उन्नवत स्वयमेि होने लगती है। गीता के वद्वतीय अध्याय का अथव सवहत स्वाध्याय करें। इससे आपको सािना की प्रगवत में र्बािाओं के सम्बन्ध में स्पष्टतया र्बोि हो जायेगा।

२२१

यडद कोई व्यस्ति अपने मार्ा-डपर्ा की पावन इच्छाओो की उपेक्षा करके साधु बन जार्ा है, र्ो क्ा यह अवज्ञा करने का पाप नही ोहै?

वनुःसन्देह यवद व्यन्तक्त अपने माता-वपता, वनकट सम्बन्तन्धयों अथिा वप्रयजनों से आज्ञा ले कर सािु या संन्यासी र्बनता है तो यह उस व्यन्तक्त के वलए अच्छा है। वकन्तु यवद उच्च श्रेणी का िैराग्य हो जाने पर िह वनिृवत्त मागव को अपनाना चाहता है तो ऐसा करने में वर्बलकुल भी हावन नहीं है।

िस्तुतुः इस संसार में आध्यान्तिक दृवष्टकोण से वकसी भी मनुष्य का वकसी से कोई नाता नहीं है और एक-दसरे का परस्पर जो भी नाता है, िह किल गत जन्मों के कमों के कारण ही है। र्बहती नदी में दो लकडी के वहतीरों की भााँवत मनुष्यों का परस्पर संयोग और वियोग होता है। जर्ब समय हो जाता है तो सर्ब-कुछ उस एक में विलीन हो जाता है। इससे स्पष्ट होता है वक जर्ब व्यन्तक्त को तीव्र िैराग्य हो जाये और जर्ब उसमें यह सुदृढ़ भािना उवदत हो जाये वक इस संसार में कोई वकसी का नातेदार नहीं है और प्रत्येक ने अपना परम लक्ष्य स्वयं प्राप्त करना है तो िह अपने इन्तच्छत समय पर संन्यास ग्रहण करने के वलए स्वतन्त्र है।

२२२

क्ा आप इस बार् में डवश्वास रर्े हैं डक स्वगत और नरक का इस भू-लोक से अलग कही ों अन्यत्र स्वर्ि अस्तित्व है ?

क्ों नहीं? हमारे इस भ-लोक की भााँवत अन्य लोक भी हैं। उनका अन्तस्तत्व भी उतना ही िास्तविक है वजतना हमारे इस लोक का। यवद व्यन्तक्त अपने िेदों में विश्वास रखता है तो समस्त लोक और सभी तीथव मनुष्य के अपने िरीर में ही विद्यमान हैं। यवद मनुष्य चाहे तो िह इस जन्म में ही नरक या स्वगव भोग सकता है। व्यन्तक्त में वजतनी अविक मवलनता होगी, उसे उतने ही अविक कष्ट, यातनाएाँ और उत्पीडन, उस समय तक रहेंगे जर्ब तक िह र्बार-र्बार भस्मीकरण प्रवक्रया अथिा िुन्तद्धकरण प्रवक्रया द्वारा स्वयं को भगिान् के अितरण के योग्य नहीं र्बना लेता। यवद आप इस िरती पर ही स्वगव के भोग भोगने के इचुछुक हैं, तो अपने वनम्न मन, इच्छाओं और लालसाओं

को वनयन्तन्त्रत करके स्वयं को िुद्ध करते जायें। तर्ब सिवत्र आनन्द है, सिवदा सुख है, सर्ब ओर प्रसन्नता है। यवद आप इन्तन्द्रयों ◌ं के अश्वों ◌ं की लगाम खुली छोड देते हैं और आसुरी मन की उते्तजक कामनाओं ◌ं के समक्ष घुटने टेक देते हैं, यवद आप अिमव के पथ को स्वीकृवत दे देते हैं, तो नरक यहीं ◌ं उपन्तस्थत हो जायेगा, कहीं ◌ं दसरे लोक में नहीं,◌ं यहाँ इसी भ -लोक में, आपके अपने वनकट !

२२३

मुस्तिमो ◌ं के डलए कुरान है, ईसाइयो ◌ं की बाइबल, यहूडदयो ◌ं की ओल्ड टेस्टामेंट, पारडसयो ◌ं की गार्ाएँ हैं। डहन्दुओ ◌ं के डलए क्ा है ?

वनुःसने्दह गीता। यह समस्त वहनदुओं ◌ं के वलए सरल और आिारभत ग्रन्थ है। इसमें उपवनदों ◌ं का सार वनवहत है, यह जीिन का सकाराक एिं आदिव दिवन प्रदान करती है और योग के समियिाक प्रमुख पथ दिावती है।

२२४

आप र्ो समानर्ा के पक्षपार्ी हैं और आप अपनी डशक्षाओ ◌ं में जाडर्-पाडर् का भेद-भाव नही ◌ं मानरे् र्ो क्ा आप साम्यवाद के प्रडर् भी सहानुभूडर् रखे् हैं?

मेरा राजनीवत से कोई सरोकार नहीं ◌ं है और वकसी भी अनीश्वरिादी मत से तो प्रश् ही नहीं।◌ं मैं ऐसा नहीं ◌ं मानता वक िमव अथिा िावमवक विक्षाओं ◌ं का राजनीवत से कोई सम्बन्ध होना चावहए। समदृवष्ट से मेरा अवभप्राय यह है वक समस्त प्रावणयों ◌ं में िह एक हो परम सत्ता समान रूप में विद्यमान है। नाम और रूप पररितविनील हैं। केिल आिा का ही अन्तस्तत्व है। सापेक्ष दृवष्ट से समस्त मानिता भगिान् का एक पररिार है, भगिान् की दृवष्ट में कोई उच्च या नीच नहीं ◌ं है। अतुः आध्यान्तिक व्यन्तक्त का व्यिहार जावत, िमव, िणव, मत-मतान्तर अथिा पद-प्रवतष्ठा के भेदभाि के प्रभाि से वकसी भी प्रकार से संकुवचत नहीं ◌ं होना चावहए।

२२५

भगवान् चेर्न हैं अर्वा जड़ ? यडद वह चेर्न हैं र्ो डनडिर् रप से उनका कोई रप भी होना चाडहए, क्ोडोंक चेर्ना र्ो केवल उसी में हो सकर्ी है डजसका कोई रप-आकार हो।

भगिान् िुद्ध चैतन्य हैं। िह सिवज्ञ हैं, सर्ब-कुछ जानते हैं। िह वनराकार अथिा अमतव हैं। इस भौवतक रीर ने हमारी परम चेतना को सीमार्बद्ध कर वदया है। चेतना विवभन्न प्रकार की होती है, यथा-भौवतक अथिा िारीररक चेतना, मानवसक चेतना और परम चेतना। परमचैतन्य की अनुभवत आपको तर्ब होगी जर्ब सतत एिं गहन ध्यान के द्वारा आप तीनों ◌ं िरीरों ◌ं से अतीत पहुँच जायेंगे। इस सीवमत देह और सीवमत इन्तन्द्रयों ◌ं से तो आप केिल भौवतक अथिा िारीररक चेतना को ही अनुभि कर सकते हैं।

२२६

यडद मैं कहर्ा रहूँ डक 'मैं राजा हूँ, मैं राजा हूँ' र्ो मैं राजा नही ◌ं बन सकर्ा, इसी प्रकार यडद मैं 'अहों ब्रह्मास्ति' का जप करर्ा रहूँ र्ो मैं ब्रह्म नही ◌ं बन सकर्ा।

'मैं राजा हूँ' कहने के साथ-साथ आपको स्वयं को तैयार भी करना पडेगा। आपको भारी संख्या में लोग एकवत्रत करने होंगें। और भी र्बहुत कुछ आपको सीखना पडेगा। युद्ध करना पडेगा। इसके वलए भी इसी प्रकार आपको तैयारी करनी होगी और मन को ि़ुद्ध करना होगा। मोक्ष प्रान्तप्त के चारों ंसािनों,ं यथा- ि़िवेक (वनत्य-अवनत्य के भेद को समझने का ज्ञान), िैराग्य (आसन्तक्त का न होना), र्ि्सम्पद (र्ि्गुणों ंका अजवन) और मुमुक्षुत्व (मुक्त होने की तीव्र आकांक्षा) को अवजवत करना होगा। इसके उपरान्त श्रिण (र्ि्ुरुवतयों ंको सुनना), मनन (सुने-पढ़े हुए पर गहन विचार) और वनवदध्यासन (सतत एिं गहन ध्यान) करना पडेगा। केिल तर्ब ही आप आि-साक्षात्कार अथिा ब्रह्मानुभ वत प्राप्त कर सकते हैं।

२२७

यडद मैं 'शकतरा, शकतरा' कहर्ा रहूँ र्ोमुझे शकतरा प्राप्त नही ंहो सकर्ी। र्ब क्ा यडद मैं 'राम, राम' कहर्ा रहूँ र्ो क्ा राम प्राप्त हो सकरे्ं हैं?

किवरा क्रय करने के वलए पहले तो आपको िन चावहए, वफर लेने के वलए र्बाजार जाना पडेगा। इसी प्रकार इसके वलए भी आपको काम, क्रोि, लोभ, मोह, अवभमान, ईर्ष्ाव, द्वेर्, मद एिं मात्सयव का त्याग करना होगा; वफर भाि एिं वनष्ठापिवक एकाग्रता के साथ 'राम, राम' जप करना होगा। तर्ब आपको भगिान् श्री राम के दिवन अिश्य प्राप्त से जायेंगे। वकन्तु राम तो आपके भीतर हैं। िकवरा र्बाहर है। आपको अपना हृदय पणव रूप से श्री राम को समवपवत करना पडेगा।

२२८

समाडध में अडर् शीघ्र कैसे प्रवेश डकया जा सकर्ा है?

यवद आप अवत ि़ीघ्र समावि में प्रिेि करना चाहते हैं तो अपने वमत्रों,ं सम्बन्तन्धयों ंआवद के साथ समस्त सम्बन्धों ंका विच्छेद कर िालें। वकसी को भी पत्र न वलखें। एक मास के वलए पणव मौन िारण कर लें। एकान्त में वनिास करें। अकेले भ्रमण करें। अत्यन्त अल्प वकन्तु पुवष्टिवक आहार लें, यवद रह सकते हों ंतो केिल द ि पी कर वनिावह करें। गहन समावि में उतर जायें। और भी अविक गहन गोता लगायें। वनरन्तर अभ्यास करते रहें। आप समावि में लीन हो जायेंगे। अपनी सामान्य र्बुन्तद्ध का उपयोग करें। मन के साथ र्बल-प्रयोग न करें। िान्त रहें। वदव्य विचार तरंगों ंको िान्तन्तपिवक प्रिावहत होने दें।

२२९

बुराई के होने की आवश्यकर्ा ही क्ा है?

यह एक ऐसा प्रश् है वजसका अभी तक सन्तों,ं ऋवर्यों,ं आचायों ंऔर दािवनकों ंने भी उत्तर नहीं ंवदया है। आप अभी यह प्रश् न करें। अपने विकास के वजस स्तर पर अभी आप हैं, उस पर अभी आप इसे नहीं ंसमझ पायेंगे। यह अिणवनीय है, अर्बोिगम्य है, अवनिवचनीय माया है। केिल ब्रह्म अथिा भगिान् ही इसे जानते हैं। आप इसे केिल तभी समझ सकेंगे जर्ब माया से मुन्तक्त पा लेंगे, जर्ब आपको ब्रह्म का र्बोि अथिा ब्रह्मज्ञान प्राप्त हो जायेगा। यह प्रश् एक अन्य ढंग से भी वकया जाता रहा है। भगिान् ने इस सृवष्ट की क्ों ंरचना की? इस विश्व के, क्ों ंऔर कैसे के सम्बन्ध में कोई नहीं ंजानता। आप भी अर्ब इस विर्य पर माथापच्ची न करें। अभी आपको इसका उत्तर नहीं ंवमलेगा, केिल अपना समय और िन्तक्त ही नष्ट करेंगे। आप अभी केिल र्बुराई से परे जाने का प्रयास करें। इसके मागव हैं, उन्ें जानें और प्रयत्न करें।

२३०

इच्छाओ ंसे छुटकारा कैसे पाया जा सकर्ा है?

र्विेकिन्तक्त कोविकवसत करें।ब्रह्म सत्यहै।जगत्वमर्थ्ा है। ब्रह्म में कोई इच्छा नहीं ंहै। इच्छा मन में है। विचार करें। समस्त इच्छाएँ ि न्य में लीन हो जायेंगी। िसुतु-पदाथों में दोर्-दृवष्ट से विचार करें। विर्य–सुतुएँ असत् हैं, जड हैं एिं दुःख का कारण और अिुद्ध हैं। ज्वलन्त मुमुकुषुत्व को विकवसत करें। आिो-साक्षात्कार प्राप्त करने की तीव्र इच्छा अन्य समस्त सांसाररक इच्छाओं ंको नष्ट कर देगी। अपनी इन्तन्द्रयों ंको भी वनयन्त्रण में रखें। िैराग्य को र्बढ़ायें। भोग-पदाथों को छोड दें। यह त्याग है। इससे समस्त इच्छाएँ समाप्त हो जायेंगी।

२३१

यडद हम भगवान् के हार्ो ंका उपकरण मात्र हैं, र्ो क्ा मनुष् स्वर्ि् नही ंहै?

मनुर्ष् किेल तभी स्वतन्त्र होता है जर्ब उसकी व्यन्तक्तगत इच्छा भिगान् की इच्छा में लीन हो जाती है। स्वेच्छाचाररता और वनरंकुिता को आध्यान्तिक स्वतन्त्रता समझने की भ ल नहीं ंकरनी चावहए। भिगान् के हाथों ं का वनवमत्त अथिा उपकरण र्बनने से भक्त अपने अहंकार अथिा अपनी 'तुच्छ मैं' को नष्ट कर देता है, वकन्तुु उसे समस्त वदव्य ऐश्वयव अथिा भिगान् की वसन्तद्धयाँ प्राप्त हो जाती हैं। िह प णव रूप से मुक्त हो जाता है। अर्ब िह भिगान् के साथ एक हो गया होता है।

२३२

मैं स्वयों को ध्यानपरायण जीवन जीने के डलए डकस प्रकार रै्यार करूँ ?

अपनी िन-सम्पवत्त अपने तीनों ंपुत्रों ंमें र्बाँट दें। जीिन-वनिावह के वलए थोडा-सा अपने पास रख लें। कुछ अंि दान कर दें। ऋवर्केि में एक कुटीर र्बना लें और िहाँ रहें। अपने पुत्रों ंको पत्र न वलखें। मैदानी क्षेत्र में न जायें। इसके उपरान्त ध्यान आरि करें। अर्ब आपका मन िान्त हो जायेगा। यह सर्ब-कुछ तत्काल आरि कर दें। िीघ्रता करना अवत आिश्यक है।

२३३

जब मैं उत्तरकाशी में रह रहा र्ा र्ो मैं उत्तम डनष्ठा, उदात्त वृडत्तयो ंर्र्ा श्रेष्ठ धमत की भावना से सम्पन्न र्ा। अब यहाँ मैदानी क्षेत्र में प्रवेश करर्े ही वह सब लुप्त हो गयी हैं, यद्यडप साधना मैं अब भी करर्ा हूँ। ऐसा क्ो ं? पहले की भाँडर् स्वयों को मैं कैसे उन्नर् करूँ ?

सांसाररक मनोिृवत्त िाले लोगों ंका सम्पकव तत्काल मन को प्रभावित कर देता है। विक्षेप उत्पन्न हो जाता है। मन अनुकरण करता है। कुप्रिृवत्तयाँ और विलासवप्रयता र्बढ़ने लगती है। अनुपयुक्त िातािरण और कुसंगवत अत्यन्त गहरा प्रभाि डालते हैं जो साधक के मन को आच्छावदत कर देते हैं। पुराने संस्कार पुनः हािी होने लगते हैं। मैं आपको पुनः तुरन्त उत्तरकािी लौट जाने का परामिव दूँगा। एक क्षण का भी विलम्ब न करें। भोजन के स क्ष्म अंि से मन की रचना होती है, अतः यह भोजन र्बनाने िाले के साथ आसक्त हो जाता है। वकसी के भी आभार के तले न आयें। स्वतन्त्र जीिन यापन करें। स्वयं अपने-आपके ऊपर वनभवर रहें।

२३४

भगिान् क्ा हैं?

यवद मैं आपके एक अच्छा सा ोरदार थप्पड लगा द ूँ, तो उस थप्पड को कौन जानता है? िह जानने िािा 'ित्ता' भगिान् हैं। जर्ब वकसी तीव्र इच्छा की प वतव होती है, तर्ब आनन्द की िह अिस्था वजसमें मन िान्त हो जाता है, िह भगिान् हैं। आपके नेत्रों ंको प्रकावित करने िािी ज्योवत भगिान् हैं। आपके वचन्तन की स्फुरणा भगिान् हैं, िहीं ंआपके मन के रचवयता हैं, आपके मन के स्रोत, उसका आिार, आपके प्राण, इन्तन्द्रयों ंऔर िरीर के अविष्ठान भगिान् हैं।

िृक्षि का अन्तस्तत्व है, यह प्रफुन्तल्लत है, उद्भावसत है, यह प्रसन्नता देता है। यह तीन पक्ष-अन्तस्त-भावत-वप्रय अथिा सत्-वचत्-आनन्द-भगिान् हैं। भगिान् सत्य हैं। भगिान् प्रेम हैं। भगिान् सौन्दयव हैं। भगिान् आनन्द हैं। भगिान् समस्त प्रकािों ंके प्रकाि हैं। सभी मनों ंके मन, प्राणों ंके प्राण, और समस्त आिाओं ंकी आिा भगिान् हैं। िह आपके हृदय में प्रकावित हैं और िे आपसे अविन्तच्छन्न हैं। सदैि उनकी विद्यमानता को अनुभि करें। सदा, सिवदा, सिवत्र उनकी विद्यमानता को पहचानने का प्रयत्न करें। चलते-वफरते समय भी उनकी उपन्तस्थवत को अपने साथ-साथ रखें।

२३५

भगवान् ने दुष्ट क्ो ंबनाये हैं?

क्ोंवक यह संसार द्वनद्विाक है, इसवलए यहाूँ यवद भले लोग हैं तो दुष्ट भी होंगें ही। कोई भी दुष्ट मनुर्ष् सदा के वलए दुष्ट नहीं ंहोता। दुजवन भी भविर्ष् में सज्जन हो जाता है। दुष्टता एक नकाराक गुण है। इससे कुछ वभन्न अन्तस्तत्व इसका नहीं ंहै। यवद दुजवन न हों ंतो सज्जनता का, यवद र्बेईमानी न हो तो ईमानदारी का और यवद दुष्टता न हो तो भलाई का कोई महत्त्व नहीं ंरहेगा। िठ की सत्ता नेक एिं भले व्यन्तक्त की मवहमा प्रकट करने के वलए है। र्बेईमानी और ईमानदारी िस्तुतः एक ही वसक्के के दो पहल हैं। दोनों ंकेिल मन की ही रचनाएूँ मात्र हैं। दुष्ट से दुष्ट मनुर्ष् में भी कुछ-न-कुछ सद्गुण होते हैं। पणवतया दुष्टता अथिा पणव रूप से भलाई नहीं ंहोती। अथावत् कुछ-न-कुछ कमी तो रहती ही है। संसार के रंगमंच पर हो रहे नाटक में भगिान् अपनी लीला हेतु स्वयं ही दुष्ट की भवमका में लीला करते हैं। उनके अवतररक्त अन्य कोई तो है ही नहीं।ं

२३६

जब मैं स्वगातश्रम में र्ा र्ब आपनी ने मुझसे कहा र्ा डक हमें मुसडलम के हार्ो ंसे र्ाद्य-पदार्त ले लेने चाडहए और ऐसा करर्े समय मन में कोई सोंकोच या दुडवधा नही ंआनी चाडहए। डकनुतु हमारे शास्त्र हमें यह डशक्षा देर्े हैं डक पापी के हार् से र्ाद्य-सामग्री नही ंलेनी चाडहए। मुसडलम गोमाोंसभक्षी हैं, उनके हार्ो ंसे हमें भोजन क्ो ंस्वीकार करना चाडहए?

यवद आप यह सोचते हैं वक अमुक व्यन्तक्त कुकमी है, तो उसके हाथ का भोजन न ग्रहण करें। यवद आपका विचार है वक भगिान् िवि अथिा हरर का कुकमी में भी वनिास है, यवद आपका यह विचार दृढ़ है, तो

आप वकसी के भी हाथों ंसे खाद्य-पदाथव ग्रहण कर सकते हैं। अभी आपका दृवष्टकोण अत्यन्त सीवमत है। आध्यान्तिक पथ पर अभी आपने चलना प्रारि ही वकया है। अभी आपका हृदय विाल नहीं ंहुआ है। अभी आप र्बहुत अविक जप करें तथा अन्य जो आध्यान्तिक सािनाएँ आपको मैंने वसखायी थीं,ं उन सर्बको मन लगा कर करें। 'उनकी' उपन्तस्थवत पार्ाण, पुष्प, चिच, तौवलये में- प्रत्येक िसुतु में अनुभि करें। कुछ समय के पश्चात् आप उन्नत हो जायेंगे। आप प्रत्येक िसुतु में। केिल भगिान् के ही दिवन करने लगेंगे। अभी तो आपके हृदय में अत्यन्त मुि मुसवलम-विरोिी संस्कार हैं। िीरे-िीरे इन्हें नष्ट कर िालें। वकसी मुसवलम को हृदय की गहराइयों ंसे स्नेह करें। भन्तक्तभाि सवहत उसकी सेिा करें। उसके उज्ज्वल नेत्रों ंमें, उसके हृदय की िडकन में प्रभु को वनहारें। सान्तत्त्वक आहार लें। उसे भगिान् को समवपवत करने के र्बाद प्रसाद रूप में ग्रहण करें। भोजन से पहले भगिन्नाम लें। इस तरह आप वकसी भी प्रकार के अिुद्ध आहार का आध्यािीकरण कर सकते हैं।

२३७

कहर्े हैं डक योगाभ्यास केवल पुरुिो ंके डलए ही है, क्ोडोंक केवल उन्हें ही सोंयम अर्वा डनयिण की आवश्यकर्ा है। अियत है डक डफर स्तस्त्रयो ंके डलए कौन सा कायत है ? सम्भवर्या घर में बैठना और सन्तानोत्पडत्त ही ! डकनु्त क्ा यह सत्य है डक योगाभ्यास की केवल पुरुिो ंको ही आवश्यकर्ा है? जैसे पुरुि महान् योगी बनर्े हैं, क्ा स्तस्त्रयाँ इसी प्रकार महान् योडगनी नही ंबन सकर्ी ? अर्वा यह स्त्री-डलोंग से भी सम्बस्तन्धर् है ? आध्यास्तत्मक महानर्ा और स्तस्त्रयो ंमें यह डलोंग-भेद क्ो ंहोर्ा है ?

रानी चुिाला एक महान् योवगनी थीं।ं उनके पास अनेकों ंउच्च स्तर की वसन्तद्धयाँ थीं।ं उन्होंने तो अपने पवत विन्तखध्वज को भी पररवितवत कर वदया था और उसे मोक्ष-प्रान्तप्त में सहायता की थी। योगिावसष्ठ में रानी चुिाला का िृत्तान्त पढ़ कर देखें। न्तियों ंमें िैराग्य और वतवतक्षा की क्षमता अल्प होती है। उन्हें पुरुर्ों ंके समान क्षमताएँ प्राप्त नहीं ंहैं। इसीवलए मवहलाओं ंमें र्बहुत अविक योवगवनयाँ नहीं ंर्बन पायी हैं। मवहलाएं भगिान् के दिवन अविक सरलता से प्राप्त कर सकती हैं, क्ोंवक उनमें स्नेह अथिा प्रेम का तत्त्व अविक है और इसी कारण भन्तक्त की भािना का उनमें स्वाभाविक रूप से आविक् है। आध्यान्तिक महानता में वलंग-भेद र्बािक नहीं ंहै। गागी, मदालसा और सुलभा आवद सभी महान् योवगवनयाँ थीं।ं

२३८

ज्ञानी व्यस्ति विि-पदार्ों को डकस प्रकार से देर्ा है? कृपया उसके दृडष्टकोण का वणतन कीडजए।

यह िणवनातीत है। यह व्यन्तक्त की अपनी भािना है। कभी-कभी आप वनिािस्था में अपने िरीर को खुजलाते हैं और देह पर र्बैठने िाली मन्तक्खयों ंको भी उडा देते हैं। यवद कोई आपसे पछता है, "क्ा तुम्हें स्मरण है वक जर्ब तुम सोये हुए थे तो अपनी देह पर खुजली कर रहे थे, मन्तक्खयाँ उडा रहे थे?" आपका उत्तर 'नहीं' ं में होगा। इसी प्रकार एक ज्ञानी यद्यवप देखता है, तथावप िह नहीं ंदेखता। िह सदैि अपने स्वरूप के प्रवत सचेत रहता है। यवद िह चाहता है तो िह दोहरी चेतना रख सकता है और अपनी दृवष्ट को उस ओर मोड सकता है तथा इस ओर भी पलट सकता है। उसके वक्रया-कलाप एक र्बालक के समान होते हैं। मानवसक िारणा (गत िुभ िासनाओं ं की िन्तक्त एिं लेि अविद्या) के कारण उसके वक्रया-कलाप चलते रहते हैं। जैसे हींग अथिा लहसुन के विब्बे में से उन िसुतुओं ंको वनकाल कर उन्हें वकतनी ही र्बार सार्बुन एिं गमव पानी से िो देने पर भी उनमें से िह गन्ध आती रहती है, इसी प्रकार जीिनुमुक्त महापुरुर् का भी जर्ब तक प्रारब्ध िेर् रहता है, तर्ब तक अविद्या का यह लेि

चलता रहता है। अपने दृवष्टकोण से िह वकवित् भी कमव नहीं ंकरता। देखने िाले समझते हैं वक ज्ञानी कमव कर रहा है। वकनुतु हमें यह मानना होगा वक लिै अविद्या यह कायव कर रही है, क्ोंवक हम देखते हैं वक ज्ञानी खाता, स्नान करता और िौच इत्यावद सभी स्वाभाविक कायव करता है।

२३९

आपने अपनी डशक्षाओ ोंमें से एक में यह कहा है डक साधक को मास में केवल एक बार उपवास करना चाडहए, डकनुतु गाुँधी जी र्ा अन्य कई महापुरुिो ोंने व्रर्-उपवास के ऊपर अत्यडधक बल डदया है और कहा है डक व्यस्ति को मास में कम-से-कम र्ीन या चार बार डनराहार रहना ही चाडहए। इर्ना ही नही,ों वे कहर्े हैं डक उपवास आत्म-सोंयम करने में सहायक है। आप डफर अडधक उपवास करने की आज्ञा क्ो ोंनही ोंदेर्े ?

वनवश्चत रूप से उपिास से आि-संयम में सहायता वमलती है, वकनुतु अत्यविक वनराहार रहने से देह-मन वनर्बवल हो कर आध्यान्तिक सािना में र्बािक र्बन जाता है। मैं भी व्रत-उपिास का दृढ़ पक्षपाती हूँ। उपिास एक महान् प्रायवश्चत्तकारक है। यह वकसी भी प्रकार के पाप से व्यन्तक्त को अवत िीघ्र मुक्त करिा देता है। व्यन्तक्त के हृदय पर इसका अवत गहन िुन्तद्धकारक प्रभाि पडता है। मनुसूमृवत का अध्ययन करें। क्ोंवक प्रायुः अविकांि लोग व्रत रखने से र्बहुत भयभीत हो जाते हैं, इसवलए मैंने मास में एक र्बार उपिास करने के वलये कहा है। युिकों ं को, स्वस्थ लोगों ंको, भारी-भरकम िरीर िालों ंको और वजन्ें काम–िासना अविक परेिान करती है, उन्ें मास में दो या तीन र्बार उपिास रखना चावहए।

२४०

मैं एक आस्तिक व्यस्ति हूँ। डकनुतु ऐसा क्ो ोंहोर्ा है डक जब मैं साोंसाररक लोगो ोंके सम्पकत में रहर्ा हूँ र्ो नास्तिक बन जार्ा हूँ?

आपके आध्यान्तिक संस्कार अभी अविक सुदृढ़ नहीं ंहुए हैं। अभी आप पणव रूप से रूपान्तररत नहीं ंहुए हैं। अभी आपको एक िर्व तक और अविक सत्संग की आिश्यकता है। आपको प्रवतवदन वकसी भी मन्त्र की दो सौ माला का वनत्य जप करना चावहए। केिल सान्तत्त्वक आहार ही लेना चावहए जैसे-चािल, दाल, रोटी, फल और दि। आवमर् भोजन का तत्काल त्याग कर दें। वनत्य दो घण्टे का मौन रखें। दो घण्टे तक अपने कक्ष में एकान्त में रहें। अन्तवनवरीक्षण करें। ध्यान करें। अपने विचारों ंका ध्यानपिवक वनरीक्षण करें।

२४१

क्ा श्वास के अवरोधन के समय चेर्ना बनी रहर्ी है? कृपया मुझे व्याख्या सडहर् समझायें।

हरी वसंह एक हठयोगी था। महाराजा रणजीत वसंह के राज्य में उसे एक सनदक में र्बन्द करके िरती के भीतर दर्बा कर रखा गया। तीन मास र्बाद जर्ब सनदक वनकाल कर खोला गया तो िह जीवित र्बाहर वनकल आया। हठयोगी र्बवहर खेचरी मुिा की चलन, दोर्न एिं छेदन वक्रया के द्वारा अपने तालुचक्र को अिरुद्ध कर लेते हैं। िे सहस्ार चक्र से टपकते हुए अमृत का अपने तालु से िीरे–िीरे पान करते रहते हैं। हरी वसंह के उदाहरण से यह

स्पष्ट हो जाता है वक िास्तविक 'मैं' प्राणों ंसे पणवतया वभन्नाहै, के अिरुद्ध हो जाने पर भी यह चेतना सतत र्बनी रही है।

२४२

मल और डवक्ेषेप के दूर होने में र्ो बहर् अडधक समय लगर्ा है। क्ा करना चाडहए?

यवद आप विश्वविद्यालय की उच्च कक्षा में पहुँच कर सफलता पाना चाहते हैं तो उसके वलए वकतने ही िर्व लग जाते हैं। आपको मैवटरक और र्बारहीं ंकक्षाओं ंसे उत्तीणव हो कर वफर र्बी.ए. कर लेने के उपरान्त एम. ए. में आना होता है। इसी प्रकार मल और विक्ेषेप को द र करने के वलए आपको र्बहुत दीघव समय तक वनरन्तर प्रयास करते रहना पडेगा। किेल एक मछली को पकडने के वलए मछुआरे को वकतने अविक समय तक टकटकी लगा कर वनशे्चेष्ट अिस्था में र्बैठे रहना पडता है। जर्ब ऐसी छोटी-छोटी नगण्य-सी िसुतुओं ंके वलए ऐसा कवठन प्रयत्न करना पडता है तर्ब वफर ब्रह्मज्ञान-प्रान्तप्त के वलए क्ा कहें? यह तो कुषुरस्ारि - तीक्ष्ण िार िाली तलिार के ऊपर चलने के समान है।

२४३

एक वृडत्त उडदर् होर्ी है, "मैं अब इस सोंसार को त्याग दूँ और ऋडिकेश जैसे डकसी एकान्त स्ान में रहर्े हए भजन करूँ।" र्त्काल ही एक अन्य वृडत्त उठर्ी है, "मुझे गृहस्-जीवन में रहर्े हए जनक की भाँडर् योग का अभ्यास करना उडचर् रहेगा।" स्वामी जी, कैसे ज्ञार् हो डक अमुक वृडत्त आत्मा से उडदर् हई है, अर्वा मन से या बुस्ति से उठी है? मैं र्ो भ्रडमर् हो गया हूँ।

एक सामान्य सांसाररक मनुर्ष् के वलए आिा की आन्तररक िाणी को सुन सकना अत्यन्त कवठन है। िह तो विचारों ंकी िुद्ध िाणी को भी सुन नहीं ंसकता। कोई भी सान्तत्त्वक विचार किेल सान्तत्त्वक र्बुन्तद्ध से ही उवदत होता है। सांसाररक व्यन्तक्त के समस्त विचार किेल मन से ही उत्पन्न होते हैं। जो व्यन्तक्त वनष्काम कमवयोग करता है और वजसका मन िुद्ध हो चुका है, उसके मन में भगिान् के विचार आने आरि हो जाते हैं। सािारणतया मन में विविि प्रकार के उतुसुकतापणव एिं विवचत्र काल्पवनक ख्याल उठा करते हैं। यह सभी को भ्रवमत कर देते हैं। ऐसा प्रतीत हो सकता है वक यह विचार उठ रहा है। वकनुतु व्यिहाररक रूप से कुछ करने का समय आने पर यह कुछ भी नहीं ंकरेगा। यवद आप एकाग्रता और ध्यान करने के वलए गिंीरतापिवक दृढ़-प्रवतज्ञ हैं और यवद आप महीनों ंपयवन्त इसके अभ्यास में लगे रहते हैं, और यवद आपकी प्रभु-दिवन अथिा आि-साक्षात्कार की इच्छा अवत तीव्र हो जाती है, किेल तभी समझें वक इस प्रकार के समस्त विचार आपकी किेल सान्तत्त्वक र्बुन्तद्ध से उवदत हो रहे
हैं।

२४४

क्ा आप कृपा करके मुझे अपने प्रते्येक कायत में मन की अनासस्ति बनाये रर्ने सम्बन्धी कुछेक डवृर् व्यावहाररक डबन्दु बर्ला देंगे?

प्रत्येक कायव करते समय अपने मन में यह भिा रखें वक आप भगिान् के हाथों ंके एक उपकरण हैं अथावत् वनवमत्त मात्र हैं। इससे अहंकार और सिान प्रान्तप्त की भिाना नष्ट हो जायेगी। अपने वकये गये कायव के वलए फल-प्रान्तप्त की इच्छा न रखें अथावत् वनष्काम भिाना से कायव करें। आप कायव के फल को प्राप्त करने की इच्छा कर भी कैसे सकते हैं जर्ब कायव करने िाले तो कोई अन्य अथावत् परमिाा हैं जो वक आपके माध्यम से स्वय
कायव करते हैं? और जर्ब आप यह जानते हैं वक यह संसार दु:खों ंसे भरा हुआ है तर्ब वफर यहाूँ वफर से लौट कर आने का क्ा लाभ है? आप भगिान् के हाथों ंकी एक कठपुतली भर हैं वजसका िागा उनके हाथों ंमें है। िे ही स त्रिार हैं। अपने समस्त कायव कतवव्य-भिाना से करें। अपनी आिश्यकताओं ंको कम कर दें। अत्यन्त सादगीपणव जीिन व्यतीत करें। ऐश्वयव-भोग से घृणा करें। इन्तन्द्रयों ंका दमन करें। संसार के प्रत्येक व्यन्तक्त और प्रत्येक िस्तु को भगिान् का प्रकटीकृत रूप समझें। ऐसा विचार र्बनाये रखे वक यह संसार भ्रान्तन्त और एक दीघव स्वप्ति् है। तर्ब वफर संसार में आसन्तक्त कैसे होगी, मेरे प्यारे रामचन्द्र? यवद आप इस प्रकार कायव करेंगे, तो आप व्यािहाररक
योगी र्बन जायेंगे। मैं आपको इसका विश्वास वदलाता हूँ। अपने मन में आनन्तन्दत हो जायें। अपनी कमर कस लें और दैवनक जीिन के युद्ध में िीरता सवहत वनभवय हो कर लग जायें।

२४५

भगवान् मुझे दुष्कमत की ओर क्ो ोंलगारे् हैं?

भगिान् कभी भी आपको दुष्कमव की ओर प्रिृत्त नहीं ंकरते। िे सदैि साक्षी अथिा िष्टा हैं। आपका
अपना स्वभाि, आपके अपने कुसंस्कार ही आपको ऐसे कायव की ओर र्बलात् प्रिृत्त कर देते हैं। 'स्वभािस्तु प्रितवते' - यह गीता का कथन (अ. ५-१४) है। आपमें वििेक का अभाि है। यही कारण है वक आप मनोिेगों ंके दास र्बन जाते हैं। मनोविकारों ंको वनयन्तन्त्रत करने के वलए भगिान् ने आपको र्बुन्तद्ध दी है। तर्ब वफर आप इसका उपयोग
क्ों ंनहीं ंकरते?

२४६

मैं कभी भी कोई अनुडचर् कायत नही ोंकरना चाहर्ा। डफर भी जब कभी ऐसा हो जार्ा है र्ो क्ा यह मेरा उत्तरदाडयत्व होगा? यडद ऐसा है र्ो क्ा भगवान् मुझे क्षमा कर देंगे? यडद वे क्षमा कर देंगे र्ो उस कमत का क्ा फल होगा ? मैं आपको डनश्छल हृदय से यह डलर् रहा हूँ, क्ोडोंक मैंने आपको अपना करुणाशील डनदेशक माना है। कृपया मुझे क्षमा कर दें और मेरी सहायर्ा करें।

वनु:सन्देह आप अपने कायव के वलए उत्तरदायी हैं। भगिान् कभी क्षमा नहीं ंकरते। कमव अपना फल स्वयं लाता है। प्रायवश्चत्त के द्वारा आप अपने अनुवचत कमव के कुप्रभाि को नष्ट कर सकते हैं। िास्ति में प्रायवश्चत्त करते समय आप कष्ट भोग लेते हैं, अतु: उस कमव का दुष्प्रभाि समाप्त हो जाता है। इस प्रकार िह अनुवचत कमव आपके आगामी जन्म में आपके साथ नहीं ंआता। वनश्छलता एिं गम्भीरतापिवक वकया गया प्रायवश्चत्त, जप, उपिास और दान, वकये गये अनुवचत कमव के कुप्रभाि को नष्ट कर देते हैं। पश्चात्ताप में भोगे गये कष्ट से अनुवचत कमव का प्रभाि
धुल जाता है। प्रायवश्चत्त अनुतापी-हृदय से वकया जाना चावहए। वनवश्चत रूप से आपको अनुवचत कमव पुनु: कभी नहीं ंकरना चावहए।

२४७

डवडभन्न पीर-पैगम्बर अर्वा अवर्ारी पुरुि परस्पर डवरोधी डशक्षाएँ क्ो ोंदेरे् हैं?

अितारी पुरुर् समय-समय पर अिमव का विनाि तथा ि्मव की स्थापना हेतु इस ि्रा पर आया करते हैं। िे सिर्ब समय, स्थान, पररन्तस्थवतयों ंऔर आिश्यकता के अनुसार विक्षा देते हैं। भगिान् र्बुद्ध ने अवहंसा का उपदेि देते हुए कहा, "वकसी की भी हत्या न करो।" गुरु गोविन्द वसंह जी ने कहा, "मार िालो।" जर्ब महािा र्बुद्ध का जन्म हुआ था तर्ब लोगों ंमें पिु-र्बली देने का अत्यविक प्रचलन था। उन्होंने हत्या को रोकने के वलए अवहंसा का उपदेि वदया। गुरु गोविन्द वसंह जी ने लोगों ंमें िीरता का संचार करना था। एक पैगम्बर ने उपदेि वदया, "सर्ब-कुछ त्याग कर िन-गमन करो।" श्री रामानुजाचायव ने विक्षा दी, "घर में रहो। आसन्तक्त त्याग कर सुख भोग करो। भगिान् विष्णु की आरािना करो।" िास्ति में विक्षाएँ परस्पर विरोिी नहीं ंहैं। अिसर, समय और मानि-स्वभाि के अनुसार तर्ब उनकी ही आिश्यकता होती है।

२४८

भगवान् ने कुछ को शुिात्मा सम्पन्न और कुछ को दुष्टात्मा क्यो ोंबनाया है ? डकन्ी ोंलोगो ों को भगवान् दुष्कमों में लगा कर अच्छा बनने से क्यो ोंरोकरे्हैं? मुझे पररपूणतर्ा कब प्राप्त हो सकर्ी है?

दीघवकालीन संघर्व के द्वारा आप पररपणवता और अमरत्व प्राप्त कर सकते हैं। नश्वर प्राणी इस सापेक्ष जगत् में आ कर भले और र्बुरे, दोनों ंप्रकार के कमव करता है। र्बुराई भी नकारात्मक भलाई ही है। कई र्बार र्बुराई में से भलाई का जन्म हो जाता है। इस संसार में प्रत्येक व्यन्तक्त पाठ सीखता है और विकवसत होता है। भगिान् तो केिल िष्टा हैं। िे मनुष्य् से दुष्कमव नहीं ंकरिाते। मनुष्य् के पास र्बुन्तद्ध और कमव करने की स्वतन्त्र सामर्थ्व है। मनुष्य् अहंकारिि अपनी इच्छानुसार कमव करता है और वफर अपने दुष्कमों का फल भोगता है। जर्ब भले कमों के द्वारा सत्त्व अथिा पवित्रता की िृन्तद्ध होती है, तर्ब िह वदव्य र्बन जाता है। भले या र्बुरे, वकसी भी कमव के वलए भगिान् उत्तरदायी नहीं ंहैं।

२४९

आप कहरे् हैं डक क्षमा का व्यावहाररक रप से अभ्यास करना चाडहए। अपने कायातलय में सवोच्च पदाडधकारी न होने के कारण अपने अधीनस्् कमतचाररयो ोंके दस्तण्डर् होने में मैं रक्षा नही ोंकर सकर्ा। यडद मैं उनकी गलडर्यो ोंको छुपाऊँु र्ो अपने कर्तव्य-डनवातह में पूणत नही ों उरूँगा और इस प्रकार डकसी डदन मुझे भी समस्या का सामना करना पड़ सकर्ा है। जब मैं अपने अधीनस्् कमतचाररयो ोंके प्रडर्वेदन भेजर्ा हूँ र्ो उन्ें दण्ड डदया जार्ा है और मुझे इससे कष्ट अनुभव होर्ा है। ऐसी स्तस्डर् में मैं क्ा करूँ ?

अपने सेिकों ंएिं अन्य अिीनस्थ कमवचाररयों ंकी छोटी-छोटी गलवतयों ंको आप क्षमा कर सकते हैं। इससे आपके ऊपर कोई संकट नहीं ंआ सकता। अपने मन को िुद्ध रखें। जर्ब भी िे गलती करें तो उसी समय उन्ें चेतािनी दे दें। आप व्यािहाररक क्षेत्र में हैं, गंभीर गलती करने िालों ंको आपको दण्ड देना ही पडेगा। वकन्तु पक्षपात की प्रिृवत्त से र्बचें। भगिान् का भय मानें। यवद वनिवन सेिकों ंको िन का दण्ड लगाया जाता है तो उन्ें अपनी ओर से कुछ वित्तीय सहायता कर दें। उनसे प्रेम करें। भविष्य् में िे पुनः गलती नहीं ंकरेंगे।

२५०

क्ा मैं जान सकर्ा हूँ डक एकाग्रर्ा की शस्ति को कैसे डवकडसर् डकया जार्ा है?

अपनी इच्छाओं ंऔर आिश्यकताओं ंको कम करने से, प्रवतवदन दो घणे्टे का मौन रखने से, प्रवतवदन एक या दो घणे्टे तक अपने कक्ष में एकान्त में रहने से, प्राणायाम का अभ्यास करने से, प्राथवना करने से, सायंकाल और रावत्र में भी ध्यान की अिवि एिं ध्यान के वलए र्ैबैठने की संख्या में िृन्तद्ध कर देने से तथा वििेक सवहत विचार करने से एकाग्रता को विकवसत वकया जा सकता है।

२५१

यह कैसे सम्भव है डक सृडष्टकर्ात, जो प्ेरम से पररपूणत है, उसने ऐसी सृडष्ट और ऐसी प्रकृडर् की रचना की जहाँ पशु-पक्षी केवल अन्य पशु-पडक्षयो ंका भक्षण करके ही जीडवर् रह सकर्े हैं डक उनको इर्ना दुःर् एवों कष्ट सहन करना पड़र्ा है? कोई भी मुझे इसका सन्तोिजनक उत्तर नही ंदे सकर्ा।

यवद मनुर्ष् एक-दसरे की हत्या करते हैं तो यह पाप है, उन्ें ऐसा करना अवनिायव नहीं ंहै। वकन्ुतु इतर प्रावणयों ंको अपने भोजन के वलए अन्य प्रावणयों ंकी हत्या करनी ही पडती है। आप क्ा कहते हैं? हम आपका विचार जानने के वलए उतुसुक हैं।

इस विश्व के प्रवत भगिान् को असीम प्ेरम है, सृवष्ट के प्रावणयों ंके अनुभिों ंके वलए उन्ें उत्तरदायी नहीं ं ठहराया जा सकता। भगिान् वनजी रूप में वकसी को वकसी भी प्रकार से दन्तण्डत अथिा पुरसृ्कृत नहीं ंकरते, यह तो मनुर्ष् के अपने पाप अथिा पुण्य-कमव होते हैं जो यहाँ के अनुभिों ंका कारण र्बनते हैं।

मानि क्ोंवंक नैवतकता के र्बोि से सम्पन्न है और उसको कतृवत्व एिं उत्तरदावयत्व का र्बोि भी प्रदान वकया गया है, इसवलए िह मानिेतर जीिों ंके कमों पर भी यह नैवतकता एिं उत्तरदावयत्व की भािना को थोपता है। इसवलए दोर् मनुर्ष् का है, उन पिु-पवक्षयों ंका नहीं ंजो वर्बना नैवतकता के र्बोि के, स्वाभाविक रूप से तथा कतृवत्व एिं उत्तरदावयत्व की भािना रवहत हो कर कमव करते हैं।

कोई भी कमव तर्ब तक प्रवतफलिाक प्रभाि उत्पन्न नहीं ंकरता जर्ब तक व्यन्तक्तगत कतृवत्व और उत्तरदावयत्व की भािना से न वकया गया हो। मानि को क्ोंवंक कमव करने की स्वतन्त्रता और वकये गये के उत्तरदावयत्व की सामर्थ्व दी गयी है इसवलए िह प्रवतफलिाक न्याय द्वारा दन्तण्डत होगा। वकन्ुतु मानिेतर जीिों ंको ऐसी स्वतन्त्रता और सोचने-समझने की क्षमता प्रदान नहीं ंकी गयी, इसवलए िह जो कुछ भी करते हैं िह केिल उनकी नैसवगवक अथिा सहज-स्वाभाविक प्रिृवत्त की अवभव्यन्तक्त मात्र ही है और यह विश्व प्रकृवत के वनयमानुक ल है। प्रकृवत नैवतकता के वनयमों ंसे अतीत है। नैवतक व्यिहार केिल मानि के वलए, उसके व्यिहार को वनयन्त्रण में रखने और इस प्रकार विकास के सोपान के द्वारा उसे विश्व चैतन्य की ओर अग्रसर करने के वलए है।

जो जन्मा है, उसकी मृतुयु वनवश्चत है और इस विनाि के वलए कोई-न-कोई तात्कावलक कारण भी होना चावहए। इस विनाि का कारण कोई अन्य पिु, भकम्प, र्बादल फटना, र्बाढ़, रोग, त फ़ान अथिा अन्य ऐसा कुछ भी हो सकता है। इनको तर्ब तक नैवतकता के मल्यों ंसे आिृत नहीं ंकरना चावहए जर्ब तक वकसी मनुर्ष् का इनके करने से कोई सम्बन्ध न हो।

२५२

कभी-कभी मैं कई बारो ों को अपने मन में ही गुप्त रर् लेरा हूँ और डफर उसके कारण अत्यन्त मानडसक यार्ना से ग्रडसर् हो जारा हूँ। अपने इस स्वभाव को बदलने के डलए मैं क्ा करूँ ?

आपको वनवश्चत रूप से विु की भाँवत स्पष्टिक्ता एिं सरल होना चावहए। किल तभी आपको वदव्य प्रकि की प्रान्तप्त हो सकेगी। तर्ब ही आप आध्यान्तिक उन्नवत करेंगे। भले ही कोई भयंकर अपरि वकया हो, तो भी उसे अपने गुरु के समक्ष स्वीकार कर लें। किल तभी आपको गुरु से सहानुभवत और सुरक्षा प्राप्त होगी। दसरों ंके समक्ष अपने दोर् स्वीकार कर लेने से आप दुष्कमों के कुप्रभि को दर कर लेते हैं। यह प्रायवश्चत्त कर लेने जैसा कायव करता है।

२५३

मौन-व्रर् करने के क्ा लाभ हैं, क्ा यह मुझे भी करना चाडहए?

अपनी सुविि के अनुसार वकसी भी समय वनत्य कुछ घणे्ट मौन व्रत का पालन करें। िेर् समय भी अवत अल्प र्बोलने का ही प्रयत्न करें। अनािश्यक िातावलाप से द र रहें। कठोर िब्द और अश्लील भार का प्रयोग न करें। मिुरता एिं कोमलता सवहत र्बोलें। आपको अपनी िाणी पर प णव वनयन्त्रण होना चावहए। िाणी पर वनयन्त्रण का अथव है-मन पर वनयन्त्रण। िाक् इन्तन्द्रय मन को अत्यविक विकववर्त करती है। मौन आपको िान्तन्त प्रदान करता है। यह तनि और कलह से र्बचाता है। यह आपकी मानवसक िन्तक्त को विकवसत करता है। यह आपकी िन्तक्त को सुरवक्षत रखता है। यह विचार-प्रिाह को कम करता है।

२५४

क्ा जीवनु्मि भी पुनः जन्म लेगा ?

कुछ जीिनु्मक्त वजनके हृदय करुणा और व्यिहार अपेक्षा से आपररत होते हैं, जैसे र्बौद्ध अहवतों ंके, िे स्वेच्छा से जन्म ले लेते हैं-जैसे श्री िंकराचायव, श्री दत्तात्रेय अथि श्री ज्ञानदेि। जन्म से ही वसद्ध होने के कारण उन्हें कोई सािना करने की आिश्यकता नहीं ं होती। िे तो आध्यान्तिक वदव्य प्रकि-पुञ्ज के रूप में अचानक प्रकट होते हैं, कुछ आध्यान्तिक उपदेि देते हैं, कवतपय मल्यिान् दािवनक पुस्तकें वलखते हैं, वकन्हीं ंर्बडी विपवत्तयों ंको दर कर देते हैं, अवत िीघ्र देह त्याग देते हैं और वफर ब्रह्मलीन हो जाते हैं (विदेह कैिल्यम्)। िे सर्ब अंिाितार होते हैं जो स्वयं में विविर् ईश्वरीय कला वलये होते हैं।

२५५

ईश्वरानुभूडर् प्राप्त डदव्यात्माएँ नश्वर देह को त्यागने के उपरान्त ब्रह्म में लीन हो जारी हैं और डफर उनका डकसी भी लोक में कोई डनजी व्यस्तित्व नही ोंरहरा। र्ीडप ऐसा माना जारा है डक साई बाबा अर्वा उनके जैसे अन्य सन्त, डजन्ोनें मोक्ष प्राप्त कर डलया है, अपने उन भिो ों को सहायरा एवों डनदेशन प्रदान करर्े हैं जो उनसे आशीवातद पाने के आकाोंक्षी हैं। इस डवरोधाभासी प्रर्ीर् होने वाली बार् को कैसे समझा जाये ?

जो आि-साक्षात्कार प्राप्त वदव्यिाा भौवतक िरीर को त्याग देने के उपरान्त भी अपने उन भक्तों ंकी सहायता करना चाहते हैं वजन्ें सहायता की अत्यन्त आिश्यकता होती है, िे अपने सक्ष्म िरीर को रख लेते हैं। वकन्ुतु जीिनु्मुक्त सामान्यतया मात्र सािकों ंकी सहायता करने के वलए अपने सक्ष्म िरीर को नहीं ंरखते, क्ोंवक इस संसार में भी सदैि ऐसे उन्नत महान् आिा रहते ही हैं जो आध्यान्तिक वजज्ञासुओं ंको विक्षा एिं ज्ञान प्रदान करने का कायव करते रहें।

२५६

कई बार मुझे लगर्ा है डक मैं माया के पाश में उलझ गया हूँ और स्वयों को उससे डवमुि करने का प्रयास करर्ा हूँ। और कभी यह अनुभव करर्ा हूँ डक मैं डनत्य शुि, बुि, अपररवर्तनशील आत्मा हूँ। मैं आपकी उस कृपा का अडभलािी हूँ जो मुझे डनडिर् रप से इस दुःर्मय भव-सागर से पार ले जायेगी। मेरे डलए कोई डनदेश ?

आप संघर्वपणव न्तस्थवत में हैं। वनस्सन्ेदेह आप उन्नवत की ओर अग्रसर हैं। िीघ्र ही आप अपने िास्तविक स्वरूप में न्तस्थत हो जायेंगे। भयभीत न हों।ं लगे रहें। वनरन्तर पररश्रम करते रहें। पीछे पलट कर न देखें। वनभीकता सवहत आगे र्बढ़ते जायें। लक्ष्य अत्यन्त वनकट है। अपने समस्त कायों के साक्षी मात्र र्बन कर रहें। आप असंग, अकताव हैं। आप अमर आिा हैं।

२५७

गर् र्ीन वित से मैं आध्यास्तत्मक साधना कर रहा हूँ। मुझे कुछ भी उन्नडर् हो रही प्रर्ीर् नही ोंहोर्ी। ऐसा क्ो?ों

उन्नवत तो हुई है। आपके मानवसक प्रवतवर्बम्ब अर्ब सुदृढ़ एिं न्तस्थर हो गये हैं। स्मरण रखें वक आध्यान्तिक जगत् में आध्यान्तिक उन्नवत को मापने के वलए कोई भार-मापक अथिा ताप-मापक यन्त्र नहीं ंहोता। अभी आप भगिान् को अपना आिा ही मन दे रहे हैं। मन की चहुँओर वर्बखरी हुई तरंगों ंको एकवत्रत करें और अपना प रा-का-परा मन भगिान् को दे दें। मैं आपको सुवनवश्चत रूप से विश्वास वदलाता हूँ, 'आप इसी क्षण उन्ें पा लेंगे।'

२५८

मुझे हर र्रह से कडठनाइयाँ और डचन्ताएँ व्याकुल करर्ी हैं। असफलर्ाएँ और मुसीबर्ें हर ओर से मुझे घेर लेर्ी हैं। पाररवाररक कर्तव्य मेरी साधना में बाधा िालर्े हैं। मेरे प्रभु, मैं क्ा करूँ ?

भयभीत न हों।ं इस कथन को स्मरण रखें, 'यह भी र्बीत जायेगा।' इसे एक काग के टुकडे पर र्बडे-र्बडे और मोटे अक्षरों ंमें टाइप कर लें और अपने कक्ष की दीिार पर वचपका दें। कवठनाइयाँ और मुसीर्बतें आगमापाय हैं। यह आने और जाने िाली हैं। गीता के वद्वतीय अध्याय के १४ िें श्लोक को पढ़ें। िीर-नायक र्बनें। चट्टान की भाँवत सुदृढ़तापिवक खडे रहें। आि-केन्तन्द्रत रहें। ॐ में वनिास करें। सत्य या आिा में वनिास करें। कुछ भी आपको वहला नहीं ंसकता। कवठनाइयाँ आपको और भी अविक सुदृढ़ र्बना देंगी तथा आपको और अविक सहनिन्तक्त प्रदान करेंगी। भगिान् के मागव वनराले हैं। सदा यही कहें, 'आपकी इच्छा पणव होगी!'

२५९

हम प्रायः देर्े हैं डक इस सोंसार में दुष्ट लोग र्ो फल-फूल रहे हैं डकनु्तु भले व्यस्ति कष्ट भोगरे् हैं, ऐसा क्ो?ों भगवान् डकसी के डलए दयालु और डकसी के प्रडर् डनष्ठुर क्ो ोंहैं?

यह प्रश्ि ितान्तब्दयों ंसे चला आ रहा है, यह उतना ही पुराना है वजतना वक यह संसार। महान् भीष्म जर्ब मृतुयुि◌ॅया पर थे तो उनके अशु्रु प्रिावहत होने लगे। जर्ब उनसे रोने का कारण प छा गया तो उनों्नें उत्तर वदया वक पाण्डि भिगान् के गहन भक्त थे और सदैि िमव के पथ पर चलते थे। सर्बसे र्बढ़ कर यह वक श्री कृष्ण के रूप में भिगान् सदैि उनके साथ रहे। और वफर भी उन्ें इतने अविक कष्ट सहने पडे।

कई दुष्ट प्रिवृत्त के व्यन्तक्त इस दिप णव संसार में समृद्ध वदखायी देते हैं, वकनु्तु इसका यह अथव नहीं ंहै वक िे कष्टों ंसे मुक्त हैं। िास्ति में भले लोग उतना कह नहीं ंभोगते वजतना 'समृद्ध' दुष्ट व्यन्तक्त, क्ोंवक सज्जन व्यन्तक्तयों ंके हृदय में िावन्न होती है। आदिों का पालन करने की योग्यता प्रान्तप्त के वलए िे सदा पवित्र रहते हैं जो वक अपने-आपमें प्रसन्नता के महान् स्ोत हैं। लोगों ंके सुखों ंऔर दु:खों ंकी व्याख्या केिल कमव के वसद्धान्त के आिार पर ही हो सकती है।

भले लोग कष्ट भोगते हैं क्ोंवक गत जन्मों ंमें उनसे कोई अनुवचत कायव हो गया होता है। दुष्ट लोग, जो समृद्ध वदखायी देते हैं, िे अपने गत जन्मों ंमें वकये गये पुण्यों ंका फल भोगते हैं, वकनु्तु उन्ें ितवमान जीिन में वकये जा रहे कुकमों का फल र्बाद में अिश्य भोगना पडेगा। यह कमव का वसद्धान्त है जो मनुष्ि की समस्त भली और र्बुरी पररन्तस्थवतयों ंका कारण है। यवद व्यन्तक्त की आवथवक न्तस्थवत को अच्छी अथिा खरार्ब करने का या उसे सुखी अथिा दु:खी करने का कारण भिगान् होते, तर्ब तो उनका भिगान् होना ही व्यथव हो जाता; क्ोंवक ऐसे पक्षपाती भिगान् जो अकारण ही वकसी के साथ भला और वकसी के साथ अनुवचत करें, िह तो भिगान् ही नहीं ंहो सकते।

२६०

एक ज्ञानी, जब वह सुस्वादु आम अर्वा कोई अन्य स्वाडदष्ट वि ु र्ा रहा होर्ा है, र्ब उसके मन में कैसे भाव उठरे् हैं?

उसके मन में भोक्ता, भोग और भोग्य के विचार नहीं ंहोते। आम खाने का कोई संस्कार उसमें उत्पन्न नहीं ंहोता। वकसी अन्य समय में उसके मन में यह विचार नहीं ंउठता, 'मैंने गत िर्व श्री रमन के र्बंगले पर वकतना स्वावदष्ट आम खाया था।' उसे कमव सकल्प नहीं ंहोता। िह 'अहम् भोक्ता' के भाि से मुक्त होता है। उसे कु्षिा का र्बोि होता है। िह जानता है वक कु्षिा प्राणमय कोर् का िमव है और कु्षिा-पवतव हेतु कोई-न-कोई खाद्य-पदाथव आमािय में पहुँचाना चावहए।

२६१

इस धरा के दूसरे गोलाधत की दूरी से क्ा आप मेरे जीवन के लक्ष्य के डविय में मुझे बर्ा सकरे् हैं?

आपके जिीन का लक्ष्य है, अपनी इन्तन्द्रयों ंकी समस्त िन्तक्तयों ंसे भगिान् के प्रवत समवपवत हो जाना और इस सम्बन्ध में कोई उत्सुकता न रखना वक िे आपका उपयोग वकस प्रकार से करेंगे। उन्ोंनें अकारण ही हमसे अपने उच्चतर उद्देश्यों ंको गुप्त नहीं ंरखा है। हमारे जिीन में होने िाली घटनाओं ंके सम्बन्ध में हमारा सीवमत मन कल्पना भी नहीं ंकर सकता। इसीवलए िे पहले कुछ भी अनािृत नहीं ंकरते और हमें यह जानने की उत्सुकता रखने की आिश्यकता भी नहीं ंहै। स्वयं को उनके समक्ष पणवतया समवपवत कर दें। उन्ोंनें आपका पहले से ही चयन कर रखा है और िे समय-समय पर आपको कायवभार सौंपंते रहेंगे, आप उन्ें वनु:स्वाथव भाि से करते जायें तथा वदव्य सेिा में उच्च से उच्चतर विकवसत होते रहें। यही आपका भगिान् के प्रवत और उनकी रचना, इस सृवष्ट के प्रवत काया, िाचा, मनसा प्रेम का यथाथव प्रकटीकरण होगा।

२६२

क्ा यह सत्य है डक मृत्यु (स्वैस्तच्छक या अन्य प्रकार से) हमें आगामी जन्म में उन कडर्पय प्रसुप्त र्ीव्र इच्छाओ ंकी पूडर्त के डलए अडधक अनुकूल वार्ावरण प्रदान करर्ी है, डजनकी अन्यर्ा पूडर्त हो सकना अडर् कडठन होर्ा ?

यह आिश्यक नहीं ंहै वक मृत्यु से मनुष्य् को आगामी जन्म में अविक अनुक ल िातािरण अथिा पररन्तस्थवतयाँ प्राप्त हों।ं यह तो उसके ितवमान जिीन के और उससे भी पिव के कमों की योग्यता पर वनभवर करता है। हाँ, यह सत्य है वक हमारी इच्छाएँ बहुत सीमा तक हमारे भविष्य् के जन्मों ंको वनदेवित करती हैं।

२६३

योगासनो ंमें से कौन से आसन हैं जो डववाडहर् मडहलाओ ंको अडधक काल र्क अपनी युवावस्र्ा को बनाये रर्ने में सहायक हो सकर्े हैं?

सिाांगासन, मत्स्यासन, िीर्ावसन, पद्मासन, हलासन, पवश्चमोत्तानासन और चक्रासन तथा साथ में योग मुिा और विपरीतकरणी मुिा िारीररक एिं मानवसक सन्तुलन

बनाये रखने में अत्यन्त सहायक हैं। इन सभी को एक-साथ करना अवनिायव नहीं ंहै। इनमें से जो भी सुविधाजनक लगें, उनका अभ्यास वकया जा सकता है, साथ ही अपने स्वास्थ्य की सीमानुसार प्राणायाम करना चावहए। इन्ें अपनी क्षमता से अविक करने का प्रयत्न

नहीं ंकरना चावहए। योगाभ्यासी-पुरुर् अथिा मवहला जो भी हो-को अपनी िासना-पवतव की इच्छा को संयवमत करना आिश्यक है।

२६४

डहन्दू भगवद्गीरा् को 'उत्तर-गीरा्' से अडधक महि क्ो ोंदेरे् हैं?

भगिद्गीता में दिवन की व्याख्या तथा भगिान् श्री कृष्ण की विक्षाओं ंको अविक व्यापक एिं विसूतृत रूप से िणवन वकया गया है। इतना ही नहीं,ं यह वहनद िमवग्रन्थों ंमें एक महान् कृवत है, अतुः विर्य–सुतु एिं प्रयोजन में यह भगिान् श्री कृष्ण ही की 'उत्तर- गीता' से अविक महत्त्वपणव है। परनुतु कृपया ध्यान दें वक इनके अवतररक्त और भी र्बहुत सी गीताएँ हैं जैसे वक 'अनु गीता', 'िंिित गीता' इत्यावद, जो वक सभी आध्यान्तिक सािकों ंके वलए सहायक हैं। तथावप विसूतृत एिं लघु दोनों ंको वमला कर इन दजवनों ंसे भी अविक गीताओं ंमें से भगिद्गीता अत्यविक महत्त्वप णव, समग्र, व्यापक एिं सिोत्तम है।

२६५

मेरे डवचार से एक साधक की सबसे बड़ी भूल, जो वह प्रायः कर बैठरा् है, यह है डक वह भ्रमवश डनम्न समाडध को उच्चर्र अर्वा उच्चर्म समाडध समझ लेरा् है। डकनुतु जो व्यस्ति ऐसी भूल कर रहा है, वह ऐसा न करने से अपनी रक्षा कैसे करे?

जर्ब व्यन्तक्त समावि की उच्चािस्था पर पहुँच जाता है, तर्ब उससे यह संयि करने की भल नहीं ंहोती वक िह वनम्न समावि है अथिा उच्चतर या उच्चतम है। िह स्वाभाविक रूप से वनुःसनेदेह जानता है वक िास्ति में क्ा है।

२६६

आध्यास्तत्मक उन्नडर् के क्ा डचह्न हैं? व्यस्ति को कैसे ज्ञार् हो डक वह आध्यास्तत्मक पर् पर उन्नर् हआ है अर्वा नही?ों

प्रत्येक परररन्तस्थवत में मन में िान्तन्त, प्रसन्नता, िैराग्य, वनभवयता की न्तस्थवत का र्बने रहना और कभी भी विचवलत न होना, यह सर्ब सवचत करता है वक आप आध्यान्तिक पथ में उन्नवत कर रहे हैं।

आध्यान्तिक उन्नवत वसन्तद्धयों ंअथिा िन्तक्तयों ंकी उपलन्तब्ध से नहीं ंअवपतु ध्यान की अिस्था में आनन्दप णव न्तस्थवत से नापी जाती है। आध्यान्तिक उन्नवत के ये सर्ब सुवनवश्चत परीक्षण हैं :

क्ा आन्तररक आध्यान्तिक प्रवक्रया और र्बाह्य सािना में आपकी रुवच में वनत्यप्रवत िृन्तद्ध हो रही है?

क्ा आपके अन्तमवन में आध्यान्तिक जीिन का अथव, अत्यविक प्रसन्नता से, सांसाररक सुवििाओं ंसे प्राप्त होने िाले सुखों ंसे कहीं ंअविक र्बढ़ कर आनन्दप्रदायक जीिन से है?

क्ा आपकी व्यन्तक्तगत जागरूकता उस प्रिान्तन्त और क्षमता को प्राप्त कर सकी है वजसे सामान्य लोग अपने दैवनक जीिन में नहीं ंपाते ?

क्ा आप यह वनवश्चत रूप से अनुभि करने लगे हैं वक आपकी वििेक–न्तक्त और विचारों ंमें ज्ञान का प्रकाि न्तस्थरता सवहत र्बढ़ रहा है?

क्ा आपके जिीन में ऐसे अनुभि होने लगे हैं जो आपके समक्ष आपसे वभन्न, एक अन्य सत्ता की, सिविन्तक्तमान् परमिाा की विद्यमानता को प्रकटीकृत करने िाले हों? ं

और क्ा आपके दैवनक जिीन में, एक निीन आनन्दमय दृवष्टकोण में, एक नतन सन्दभव में, सिवव्यापक भगिान् पर अपनी वनभवरता एिं उनके साथ घवनष्ठ सम्बन्ध की आपकी िारणा में, सुन्तस्थर रूप से िृन्तद्ध हो रही है?

यवद इन सबव प्रश्ों ंअथिा इनमें से वकसी एक का उत्तर 'हाँ' में है, तो पणवतया सुवनवश्चत है वक आध्यान्तिक पथ पर आपकी उन्नवत हो रही है और िुत गवत से हो रही है।

२६७

इस शरीर के छूटने के उपरान्त जब जीव का अन्य शरीर में पुनः जन्म हो जार्ा है, र्ब क्ा यह आवश्यक रह जार्ा है डक हम उसके डलए श्रा-कमत करें? अब, जब डक वह स्वगत में है ही नही ंर्ो हमारी दी गयी आहडर्याँ डकसे प्राप्त होगंी ?

हमारे वपत्रों ंका बहुत दीघव समय तक स्वगव में, वपतृलोक में अथिा चन्द्रलोक में िास रहता है। श्राद्ध-वक्रया से वपत्रों ंके स्वगवलोक के सुखों ंमें और वदिंगत आिा की

ान्तिन्त में िृन्तद्ध होती है। इसी प्रकार वदिंगत आिा के अन्य लोकों ंके कष्ट भी, उनकी सन्तान द्वारा वकये गये श्राद्ध-कमव से अल्प हो जाते हैं। अतुः दोनों ंही प्रकार से श्राद्ध-कमव अत्यन्त सहायक है।

और यवद व्यन्तक्त का मृतुयु के बाद तत्काल पुनुः जन्म हो भी जाता है, जैसा वक बहुत ही असािारण घटनाओं ंमें होता है, तब भी उसके वलए वकये जाने िाला श्राद्ध-कमव, उसके नये जिीन में प्रसन्नता की िृन्तद्ध करता है। अतुः यह प्रतेयेक व्यन्तक्त का अवनिायव कतवव्य है वक िह अपने माता-वपता और प िवजों ंका श्राद्ध करे। यह श्राद्ध-वक्रया अत्यन्त श्रद्धा एिं विश्वास सवहत आजिीन करते रहनी चावहए। िमव का मुख्य आिार विश्वास है।

ििि ंद्वारा मानिता पर लाग वकये गये विवभन्न िावमवक कृत्य अज्ञानी मनुर्ष् की वचत्तिुन्तद्ध हेतु वकये गये हैं। श्राद्ध-कमव, जो वक ििाानुसार मनुर्ष् के वलए अिश्य- करणीय कमों में से एक है, भी मानि-मन की िुन्तद्ध के वलए है। इसके साथ ही, हमारे पिवज भी इससे प्रसन्न होते हैं और उनकी िुभ कामनाओं ंएिं आिीिावदों ंसे हमारी भौवतक तथा आध्यान्तिक उन्नवत होती है।

२६८

कुण्डडलनी जाग्रर् करने के डलए व्यस्ति को शीतासन अर्वा पडिमोत्तानासन या कुम्भक अर्वा महामुद्रा डकर्ने समय र्क करने चाडहए? योग सम्बन्धी डकसी भी पुिक में यह बर्ाया हआ नही ंहै।

यह सब िुद्धता के स्तर पर, विकास की अिस्था पर, नावडयों ंऔर प्राणमय कोर् की िुन्तद्ध के स्तर पर तथा िैराग्य एिं मुमुकुषुत्व के स्तर पर वनभवर करता है।

विद्याथी अपनी सािना का प्रारि उस वबनदु अथिा स्तर से करता है, जहाँ पर अपने विगत जन्म में उसने छोडी होती है। कई तो अपने पिव-जन्म में आिश्यक अनुिासन एिं अन्य अभ्यास के द्वारा मन की पणव िुद्धता को

ले कर ही जन्म लेते हैं। ऐसे व्यन्तक्त जन्म से ही वसद्ध होते हैं। गुरु नानक, आलन्दी के ज्ञानदि, ामदि और अष्टािक्र सभी अपनी र्बाल्यािस्था में ही दक्ष थे। गुरु नानक जर्ब अभी छोटे र्बालक ही थे, तो उन्ोंनें विद्यालय में अपने अध्यापक से ॐ के महत्त्व के विर्य में प्रश् वकया था। ामदि ने अपनी माँ के गभव में से ही िदान्त पर प्रिचन वदये थे।

२६९

मैं भगवान् डशव का भि हूँ। क्ा मुझे भगवान् डवष्णु और देवी मार्ा के मस्तन्दरो ोंमें भी जाना चाडहए? और यडद मैं जाऊँ, र्ो मुझे वहाँ उन डवग्रहो ोंकी कैसे पूजा करनी चाडहए?

हाँ, वजस वकसी भी मन्तन्दर में जा सकने का आपको सौभाग्य प्राप्त हो जाये, िहाँ जा कर दिवन करने और पजा करने का सुअिसर कभी न छोडें। यवद िह दिी माँ का अथिा विष्णु भगिान् का मन्तन्दर हो तो उनमें भी भगिान् विि को देखते हुए, भगिान् विि को ही इस रूप में देखते हुए, उनकी पजा करें। यवद आपके वपता जी उच्चन्यायालय के जज के िि में आ खडे हों ंअथिा वकसी नाटक के पात्र के रूप में मवहला की पिोाक में आ जायें, तर्ब क्ा आप उनसे मुख मोड लेंगे? हर रूप और हर पिोाक में आप उन्ें सिानपिवक प्रणाम ही करेंगे। भगिान् की पजा के समय आपका यही दृवष्टकोण होना चावहए। भगिान् तो एक हैं। वभन्न-वभन्न लोग उनकी विवभन्न रूपों ंमें पजा करते हैं।

२७०

स्वामी जी, यहाँ भारर् में लोग डजस प्रकार गुरु की पूजा करर्े हैं, उसका क्ा औडचत्य है? क्ा यह दासर्ा अर्ावर् गुलामी नही ोंहै? क्ा आप यह मानर्े हैं डक डशष् अपने गुरु का दास बन जार्ा है?

क्ा आप उस व्यन्तक्त के प्रवत कृतज्ञ नहीं ंहोते जो आपकी सहायता करता है, सिा करता है? आप क्ा वकसी-न-वकसी रूप में उसके प्रवत अपनी कृतज्ञता अवभव्यक्त नहीं ंकरते? यवद आप वकसी छोटे से सांसाररक कायव में सहायता करने िाले व्यन्तक्त के प्रवत ऐसा व्यिहार करते हैं, तो उसके प्रवत वकतना कृतज्ञ होना चावहए, जो आपको परमिाा की ओर का पथ दिवता है? उसने आपको नि-जिीन ही नहीं, ं अमरत्व और िाश्वत आनन्द प्रदान वकया है। क्ा आप उसे कृतज्ञता प्रकट नहीं ंकरेंगे? गुरु की साक्षात् पजा करनी, इस सिोच्च कृतज्ञता को अवभव्यक्त करने की भारतीय विवि है। आप उस व्यन्तक्त को वजसने कुछ दे कर आपकी सहायता की हो, कुछ भेंट दे कर िन्यिाद प्रकट करते हैं, और गुरु, वजसने आपको आध्यान्तिक ज्ञान का सिोतृकृष्ट उपहार प्रदान वकया है, उसे आप अपना सिवस्व दे देते हैं!

यह दासता नहीं ंहै। नहीं, ं वर्बलुकुल नहीं। ं एक सच्चा गुरु अपने विर्ष् को कभी भी अपना दास नहीं ंर्बनाता। सिुतुतः गुरु अपने विर्ष् का सिेक होता है। िास्तविक गुरु के हृदय में विर्ष् के वलए उच्चतम प्रकार का पे्रम होता है। गुरु उसके हृदय में वनिास करता है, गुरु अपने विर्ष् के मन को जीत लेता है, दोनों ंअर्ब एक ही हो जाते हैं। दोनों ंमें परस्पर वदव्य पे्रम की भिाना होगी-दासता की नहीं। ं

२७१

एक व्यस्ति, डजसके मन में दीघत काल से नकारात्मक डवचार डनवास कर रहे हो, ों वह उन्् सकारात्मक डचन्तन में कैसे पररवडर्तर् कर सकर्ा है?

उसे चावहए वक पहले कुछेक ऐसे अथवगवभवत सकारिाक सत्रों ंसे प्रारि करे 'मैं पणवतया सुस्वस्थ हूँ। मैं वनरोग हूँ। मुझे कुछ नहीं ंहुआ है। मुझे अपनी योग्यता और क्षमता का सही अनुमान नहीं ंथा। अर्ब मुझे अपनी ािस्तविक प्रकृवत का र्बोि हो गया है।' यह सर्ब उसे योग में उन्नत व्यन्तक्त अथिा वकसी भगिद्भक्त की सहायता से करना चावहए। उसे चावहए वक िह भगिान् की प्राथवना के साथ इसे प्रारि करे। प्राथवना को तो उसे अपने दैवनक जीिन का अंग, एक 'अवत आिश्यक अंग' र्बना लेना चावहए। समस्त नकारिाक वचन्तन समाप्त हो जायेगा और िह पणवतया सामान्य हो जायेगा।

२७२

अण्डे कीर्तन करने का क्ा उद्देश्य है?

कीतवन करने से व्यन्तक्त के भीतर वदव्य स्पन्दन उत्पन्न होंगें और ये स्पन्दन इतने िन्तक्तिाली होते हैं वक इनमें मनुष् के मन को विकवर्वत करने िाली सभी र्बाह्य िन्तक्तयों ंको नष्ट कर देने की तथा चंचल मानि-मन को र्बाँि देने की िन्तक्त होती है, व्यन्तक्त को िान्तन्त एिं आनन्द से आपररत कर देने की क्षमता होती है। वदव्य नाम में ऐसी अद्भुत रहस्मयी िन्तक्त वनवहत है वक इसका गायन हृदय को पवित्र करके कीतवनकताव को प्रभु-चेतना से सम्पन्न कर देता है।

****